॥ ओ३म ॥

॥ नमः श्रीवर्द्धमानाय ॥

श्रीमद् जैनाचार्य्य श्री १००८ अमरसिंहजी महाराज का जीवन चरित्र ।

(नमस्कार मन्त्र की व्याख्या सहित)

लेखक—

जैनाचार्य श्रीअमरसिंहजी महाराजकी सप्रदाय के उपाध्याय श्रीमान् जैनमुनि स्वामी आत्मारामजी महाराज

और

संशोधक —श्रीमान्पंडित जैनमुनि ज्ञानचन्द्र जी महाराज ।

प्रकाशक—श्रीयुत लाला मिट्ठोमल्ल, लाला हरभगवानदास ला॰ बसन्तामल्ल, बाबू कुन्दनलाल सबमोवरसीयर

श्रीवीर निर्वाण स० २४३९ । पूज्य अमरसिंह सं०३३ ।
संवत् १९७० । सन् १९१४ ई०

पञ्जाब एकानोमीकल य त्रालय लाहौर में प्रिण्टर
लाला लालमन जैनी के अधिकार से छपा ।

प्रथमावृत्ति १५००]　　[विना मूल्य वितरण

* प्रार्थना *

प्राज्ञ पुरुषो ! मैं आपसे सविनय निवेदन करता हू कि यह परम पवित्र जीवन चरित्र रूप पुस्तक श्रीमान् परम पं० उपाध्यायजी महाराजने लिख कर मुझ क्षुल्लक चेतना को संशोधन करने के लिये प्रदान किया अत मैंने आप की आज्ञानुकूल इस पुस्तक को स्वबुद्ध्यनुसार संशोधन किया है यदि अब भी प्रेस तथा मेरे प्रमाद से कोई अशुद्धि रहगई हो तो सख्यावान् पुरुष क्षमा करें। क्योंकि कहा भी है कि –अक्षरमात्रपदस्वर हीन व्यञ्जनसन्धि। विवर्जित रेफम् साधुभिरत्र ममक्षतव्य। कोनविमुह्यति शास्त्रसमुद्रे॥१॥इति अपितु इस पुस्तक को श्रीयुत लाला मिट्ठीमल्ल, बाबूराम, लुधियाना निवासी तथा ला० हरभगवानदास, शंकरदास कपूर्थलावाले भावड़ा डब्बी बाजार लाहौर वा लाला कृपाराम, बसतामल्ल, सेक्रेट्रीजैनसभाअमृतसर और बाबूकुन्दनलाल सब ओवरसीयर, सदानंद, लुधियानानिवासी, इन धर्म प्रेमी महाशयों ने स्वव्ययसे प्रकाशित कराया है जिसके प्रभाव से उक्त महाशयों ने पूर्व से भी अतीव सुप्रख्याति की प्राप्ति की है॥

जैनमुनि पण्डित ज्ञानचन्द्र।

प्रस्तावना।

विदित होवे सर्व सुज्ञजनों को इस संसार चक्र में प्राणी मात्र को एक धर्म्म ही का आधार है ॥

धर्म्म के ही प्रभाव से आत्मा सद्गति को प्राप्त होता है। सो मानुष भव पाने का सारपदार्थ धर्म्म का निर्णय करना ही है अर्थात् धर्म्म निर्णय से सम्यक्त्व रत्न की प्राप्ति होजाती है ॥

(किन्तु इस अनादि प्रवाहरूप संसार चक्र में अनेक प्रकार के धर्म्म प्रचलित हो रहे हैं जोकि (स्व स्व पक्षसता गरहतापरंचयं) इस सूत्रके कथनानुसार वर्ताव कररहे हैं अथात् स्व. मतकी प्रशंसा परमत की निंदा करते हैं ॥

किन्तु विद्वानों का यह पक्ष नहीं है कि पर सत्य पदार्थ को भी अपनी कुयुक्तियों द्वारा कलंकित करना। विद्वानों का यही धर्म्म है कि सत्यासत्य का निर्णय करके सत्य को ग्रहण असत्य का परित्याग करना अपितु इस भारत भूमि में अनेक प्रकारके मत प्रवृत्तहोरहे हैं जैसे कि-

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने वेद वा एक ईश्वर को ही सृष्टि कर्त्ता माना है ॥

शंकराचार्य्य ने एक शिव को ही सर्वोत्तम वतलाया है ॥

व्यासऋषिने एक वेदान्तदर्शन को ही मुख्य रक्खा है ॥

कपिलदेव ने सांख्यदर्शन में पञ्चविंशति प्रकृतियों से ही सबकुछ मान लिया है इस प्रकार कणादमुनि गौतमाचार्य्य ने भी भिन्न २ पदार्थ माने हैं ॥

किन्तु मनुआदि ऋषियोंनेयथाक्रम वा सृष्टिउत्पन्न विषय अहंकारादि से माना है पूर्व मीमांसको ने वेदविहित हिंसा को अहिंसा ही करके लिखा है ॥

बौद्धोंने आत्मपदार्थ को क्षणभर तथा दीपक प्रकाशवत् लोगों को समझाया है तथा क्वचित् यहुदी इसलाम जैसे–कामिलया, ब्यामिया, मनसूरिया, मयासीमा, माद्दस्या, इकमालिया, तारकिया-शतानिया, मजामिया, कुदरिया, सुनी, कर्परिया, वहावीया, इत्यादि अनेक ही इस के भेद हैं और देवसमाज ब्रह्मसमाज राधास्वामिमत्व खालसा गहररगंभीर गरीवदासीये चारवाक् ब्रह्माण्ड पुराण, वावाका लुकामत, मलूकदासिये,चद्रभक्त,सांख्यी,मनुष्यभक्त, छेडु,नानकपथी,वाममार्गादि अनेक प्रकार के मत अनेक प्रकार के तत्वभिन्न २ प्रकार से निरूपण करते हैं तथा स्वः स्वः मत की पुष्टयें कटिवद्धसदैव ही हो रहे हैं ॥

किन्तु कष्ट तो केवल जिज्ञासु जनों को ही प्राप्त होरहा है कि ये किस मतको सत्य माने और किस मतको त्यागने योग्य या ग्रहण करने वाला माने किन्तु सत्योपदेष्टासर्वज्ञप्रणीत केवल एक जैनधर्म्म ही है जो सर्व प्रकार से प्राणीमात्र की रक्षा करने में कटिबद्ध है या उद्यत हो रहा है और दया का सर्वत्र प्रचार करने का उपदेश कर रहा है ॥

और स्याद्वादरूपी तरंगों से समुद्रवत् ज्ञानसे प्रतिपूर्ण है तत्त्वपदार्थों का पूर्ण प्रकार से उपदेष्टा है जिस की स्तुति अनेक विद्वान् सततमुखसे कर रहे हैं तथा अनेक विदेशी विद्वान् भी जैनमत के तत्वों को देखकर अति महत्वता प्रगट करते हैं ॥

तथा जैनसूत्रों के अनेक सरलार्थ अपापनी भाषा में उन लोगों ने करलिये हैं या कर रहे हैं क्योंकि यह वही अनेकान्त मत है जोकि पूर्व कालमें अपनी सत्य रूपी विद्या से जय प्राप्त करता था और वर्तमान कालमें भी जय प्राप्त कर रहा है ॥

और सर्वमतों से प्राचीन है क्योंकि इस जैनमत ही की अहिंसा रूपी मुद्रा सर्व मतापरि अंकित होरही है ॥

अपितु शास्त्र से दिखाना पड़ता है कि अहो भगवती की कैसी विचित्रता

है कि जिस जैनमत को परमोच्च श्रेणी में गणन करा जाता था आज उस जैनमत को बहुत से लोग नास्तिकादि नामों से पुकारते हैं ॥

तथा इस परम पवित्र अनेकान्तमतको घृणासे देखते हैं अनुचितता से व्यवहार करते हैं अर्थात् वर्ताव करते हैं ॥

सो क्या यह आर्यपुरुषोंको खेदका स्थान नहीं है अवश्यमेव है ॥

सो विचारनीय बात है कि यह लोकोऽपवाद केवल परस्पर की द्वेषता का ही प्रभाव है ॥

क्योंकि वर्तमान समय में श्रीजैनमत की तीन शाखायें हैं जैसे कि श्वेताम्बर जैन १ श्वेताम्बरमूर्त्तिपूजक जैन २, दिगबरजैन ३, किन्तु श्वेताम्बरमूर्त्तिपूजक जैनोंकी भी दो शाखायें हैं जैसे कि श्वेताम्बरमूर्त्तिपूजकजैन १, और पीताम्बरमूर्त्तिपूजकजैन २, सो प्रायः पीताम्बरमूर्त्तिपूजकजैन अनुचित उपदेश वा लिखन में सकुचित भाव नहीं करते हैं–जैसे कि पीताम्बराचार्य्य आत्मारामजी का बनाया हुआ–तत्व निर्णय प्रासाद नामक ग्रंथ विक्रमाब्द १९५८ मुंबई इंडु प्रकाश आफ स्टॉक कं०ली०को प्रकाशित हुआ है जिसके पूर्व आत्मारामजी का चरित्र भी लिखा है जिसमें श्वेताम्बरमत को अनेक कटुक शब्द तथा असत्यलेख लिखेहैं सो इन्ही कारणों से उक्त आक्षेप जैनमतों पर लोक करते हैं ॥

सो यथास्थान कितनेक आक्षेपों का इस पुस्तक में उत्तर भी लिखा जायेगा क्योंकि यह पुस्तक एक महामाचार्य्य श्री के जीवन की चरिया दिखलाने वाला है अतु खंडन मंडन को ॥

अपितु विचारशीलपुरुषों का धर्म्म है कि सत्यभाषणसत्यलेखन द्वारा भव्यजीवों के हितैषी बनें जिससे फिर अनुक्रम से मोक्षाधिकारी होवें क्योंकि शम दम युक्त शुद्ध पुरुषोंके गुणानुवाद करनेसे अनंत कर्मों

की धर्मणा से जीवमुक्त हो जाता है और फिर अनंत ज्ञान की प्राप्ति होती है ज्ञान से ही सर्वजदया है॥

यदुक्तम् (पढमंणाणतउदया) अर्थात् प्रथम ज्ञानतत्पश्चात् दया है सो सम्यक् ज्ञान से ही सम्यक् दर्शन प्रगट होता है तथा सम्यक् दर्शन पूर्वक ही सम्यग्ज्ञान होता है ॥

युगपत सम्यक् होने से सम्यक चारित्र भी मोहनीकर्म की क्षयोपशमता से प्राप्त हो जाता है सो इस पुस्तक में सम्यग् ज्ञान सम्यक् दर्शन सम्यक् चारित्र युक्त ही महान् पुरुष के चरित्र लिखने के लिये ही उद्यत हुआ हूं ॥

आशा है यह चरित्र रूप ग्रंथभव्य जीवों के मोक्ष रूपपथमें अवश्य ही सहायक हावेगा। जिज्ञासु जनों को अवश्यमेव ही उत्कंठा होवेगी कि ऐसे त्रिगुणयुक्त महा पुरुषका क्या नाम। वा किस काल में हुये इत्यादि ॥

सो महाराज जी का ऐसा नाम है यथा श्रीश्वेताम्बरसुधर्म गच्छीय महाआचार्य श्रीमत्पूज्य अमरसिंहजी महाराज ॥

जिन्होंने अपनी आयुको धर्मार्थ अर्पण किया है जिन्हों ने महान् परिणामों के साथ शुद्धसंयम को धारण करके महान् ही परोपकार किया है ॥

किन्तु पंजाबदेश में तो स्वामीजीमहाराजजी ने स्थान२ विचर के महान् ही परोपकार किया है क्योंकि आचार्यमहाराज का ऐसा वैराग्य मयउपदेश था कि जिससे भव्यजीव शीघ्र ही सम्यक्त्व के लाभ को उठातेथे ॥

पुनः स्वामी जी भी परोपकारियों कि पंक्ति में शिरोमणी थे। और फिर जैनमार्ग के परमोपदेशक श्रीपूज्यजी महाराज हुए॥

क्या भव्यगण उन महात्माओं के ऋण से मुक्त हो सकते हैं कदापि नहीं भला ऐसा कौन है जो ऐसे महान् परोपकारी महात्माओं का

जीवन चरित्र सुनना न चाहे तथा ऐसा कौन है जो ऐसे महात्मा के गुणानुवाद न करे या ऐसा कौन है जो परम शान्ति मुद्राधारी सत्योपदेष्टा सद् गुणालङ्कृत आचार्य्यपद के धारक श्रीमान् पूज्य महाराज के गुणों में रक्त न हो। अर्थात् भव्यगण गुणादि में सदैव ही रक्त हैं ॥

भव्य जीवों के हृदयरूपी कमल में उक्त महाऋषि के गुण सदैव ही विराजमान रहते हैं ॥

भव्यजीव अपने तरने के वास्ते उक्त आचार्य्यमहाराज जी के सदैव ही गुण कीर्त्तन करते रहते हैं क्योंकि जिन्होंने सूर्य्य समान जिनमत का इसलोक में प्रकाश किया अर्थात् स्याद्वादवाणी के द्वारा जीवकर्म को भिन्न२ करके दिखलाया तथा जिनके सुंदर अनेकान्तमत के व्याख्यान में अनेक ही सद्गृहस्थ उपस्थित होते थे ऐसे महामुनि का यह जीवन चरित्र है ॥

इस चरित्र ग्रंथमें श्रीमान् परमपण्डित आचार्य्य वर्य्य सदैवहीजय विजय करने वाले जैनधर्म्म में सूर्य समान श्री१०८पूज्यसोहनलाल जी महाराज जी ने मुझको बहुत ही सहायतादी है साथ में बहुत से जीर्ण पत्र भी प्रदान किये हैं जोकि यथास्थान इस ग्रन्थ में लिखे जायेंगे ॥

और श्री श्री १०८ गणा वच्छेदकउपाधि विभूषित श्रीस्वामी गणपतिराय जी महाराज जी ने भी बहुत से पूर्व इतिहास सुनाये हैं जो कि यथास्थान में दिए जायेंगे ॥

और श्रीमान् लाला बसीलाल सीताराम मलेरी नाभा वाले ने भी इस पुस्तक के लिखते समय बहुत से पुस्तकों की सहायता दी है ॥

और बहुत से भव्यजीवों की सम्मति से यह ग्रंथ लिखागया है। अशाहैकिभव्यजीवोंके लिये यह ग्रंथ अवश्यमेवही हितकारीहोवेगा ॥

उपाध्याय जैनमुनि श्री आत्मारामजी।

* जीवन चरित्र *

नमोसमणस्स भगवतोमहावीरस्सण ।

अथ श्री श्री श्री १००८ श्रीसुधर्म्मगच्छाचार्य्य श्रीमद् पूज्य अमरसिंहजी—महाराज जी का जीवन चरित्र लिखते हैं ॥

विदित होवे पचाल (पंजाब) देश में एक अमृतसर नामक नगर बसता है। जो प्राचीन नगरों के गुणों करके विभूषित होरहा है ॥

जिस की मेदनी सुशोभित होरही है और नाना प्रकार के वा नाना देशों के बसने वाले नाना ही प्रकार के व्यापारी लोग व्यापार करते हैं ॥

प्राय धन करके भी लोग मलकृत होरहे हैं विविध प्रकारके आला शय अपनी २ सुन्दरता दिखारहे हैं आरामादि करके भी नगर अलंकृत होरहा है नाना ही प्रकार की लतायें कुसुम (पुष्प) प्रदान करती हैं ॥ उक्तपुर अन्यदेशों में *शिष्य लोगों का तीर्थ मानाजाता है ॥

किन्तु उक्त नगर में ही परम रमणीय जल करके सुशोभित एक तड़ाग (तलाव) है जिसमें स्वर्ण करके मंडित श्वेतपाषाणमय (संगमरमरका) एक स्थान बना हुआ है जिस में शिष्य लोगों का धर्म्म पुस्तक गुरु ग्रंथ साहिब स्थापित किया हुआ है अपितु उस स्थान का हरिमंदिर जी के नाम से लोग पुकारते हैं ॥

जिस की यात्रा के लिये अन्यदेशों के सहस्रों लोकमाते हैं अर्थात् अमृतसर नामक नगर नागरिक गुणों करके संयुक्त हो रहा है ॥

---

* व्याकरण में शासमनुशिष्टी धातु से क्यप् प्रत्ययान्त हो कर शिष्यशब्द सिद्ध होता है किन्तु अपभ्रंश रूपान्तर् सिक्ख भी भाषा में सर्वत्र प्रसिद्ध होरहा है ॥

सो तिस नगर में एक ओसवाल *तत्तड़ गोत्रवाला शेठ (श्रेष्ट शब्द का अपभ्रंश शेठ वा सेठ शब्द है) खुशालसिंह वसता था क्योंकि महाराजा रणजीतसिंह के प्रभाव से बहुत सी ज्ञातियों में सिंहनाम की प्रथा चल पड़ी थी सो अद्यापि पर्यन्त भी कई ज्ञातियों में यह प्रथा उसी प्रकार चली आरही है ॥

किन्तु यह तत्तड़गोत्री खुशालसिंह शेठ ज्वाहरात की दुकान करता था ॥

सो खुशालसिंह शेठ के तीन पुत्र उत्पन्न हुए जैसे कि बुद्धसिंह, चैनसिंह, जोधनसिंह, लाला चैनसिंह के परिवार में लाला मोहनलाल सोहनलाल रलेशाह फग्गु शाह इत्यादि सुपुरुष हुए लाला जोधनसिंह के वंश में लाला घनैयामल्ल, लाला महयामल्ल, लाला अर्जुनमल्ल इत्यादि यह सब लाला जोधनसिंह के परिवार के हैं और लाला बुद्धसिंह के तीनपुत्र हुए जैसे कि लाला मोहरसिंह, मेहरचन्द इन का वंश भी सुदर प्रख्यातियुक्त हुआ जैसे कि:—

लाला मेलुमल्ल, कपकुमल्ल, मानेशाह इत्यादि यह उक्त वंश के हैं ॥

तृतीय पुत्र महा तेजवंत चन्द्र सहृदय सौम्य श्रीमती माता कर्मों की कुक्ष से विक्रमाब्द १८६२ वैशाख कृष्ण द्वितीया के दिन उत्पन्न हुआ अथात् अमरसिंहजी का जन्म हुआ ॥

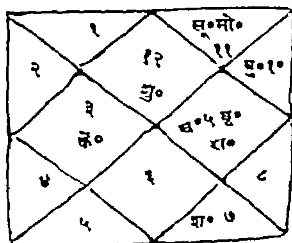
पिता जी ने निजपुत्र का जन्म महोत्सव अत्यानंद से किया याचक लोगोंको भलीप्रकार दान देकर तृप्त किया पुनः तत् कालही सुप्रसिद्ध गणिक द्वारा अमरसिंहजी की जन्म कुण्डली बन वाई लाला बुद्ध सिंह अमरसिंहजी के मस्तक को देखकर परमानंद होता था ॥

कर्मोंमाताजी भी प्रियपुत्र को देखकर अपने नेत्र तृप्त करती थी किन्तु इस अनित्य संसार को भी नित्य ही समझने लगी ॥

---

* ओसवालों की उत्पत्ति का स्वरूप देखो जैन सम्प्रदाय शिक्षा अपरनाम गृहस्थाश्रम शील सौभाग्य भूषण माला नामग्रंथ में ॥

सम्वत् १८६२ तत्र कुंभार्के ६ तत्र सूर्य्येष्ट जन्म लग्न



साथ है ऐसे देवरूप पुत्र के दर्शन से कौन नहीं आनंदहोता अर्थात् सर्व ही होते हैं ॥

क्योंकि अमरसिंहजी बाल्यावस्था में ही गांभीर्य चातुर्य थे पुनः पुनः माता पिता की विनय भक्ति करते थे ॥

फिर यथा योग्य कर्णवेधादि संस्कारों के पश्चात् विद्या अध्ययन संस्कार किया गया अर्थात् अमरसिंह जी पढ़न लगे अपितु बुद्धि ऐसी तीक्ष्ण थी कि अल्पकाल में ही लघक गणितादि सुविद्या में निपुण होगये फिर अपनी दुकान का काम करने लग गये यौवनावस्था जब प्राप्त हुई तब पिताजी ने अति महोत्सव के साथ, स्यालकोट में, लाला हीरालालजी (जो कि लडवाले ऐसे नाम से प्रसिद्ध हैं) की धर्मपत्नी माई आत्मादेवी जी की पुत्री श्रीमती कुमरी ज्वालादेवी जी के साथ पाणिग्रहण करवाया फिर विवाहयात्रा करके अमृतसर में आये और आनंद से फिर दिन जाने लगे ॥

किंतु यह संसार अनित्य है कालचक्र सब के शिरोपरि भ्रमरहा है। किन्तु मोह के वश प्राणी कालचक्र का मूल रहे हैं कि—(काल जीव को अवश्य ही घेरलेता है ॥

सो कितने ही काल के पश्चात् अमरसिंह जी के माता पिता स्वर्ग वास होगये तब मृत्यु संस्कार के पश्चात् शोक दूर किया गया ॥

क्योंकि यह दिन सब पर ही खड़ा हुआ है इत्यादि विचारों से जब शोक दूर हो गया तब अमरसिंहजी ने सर्व काम अपनीदुकान का अपने हाथ में लिया स्तोक काल में ही नामांकित ज्योहरी हो गये ॥

और अमरसिंह जी के गृहस्थाश्रम में निवास करते हुओं के दो पुत्रियें उत्पन्न हुईं ॥

एक उत्तमदेवी द्वितीय भगवान्देवी सो उत्तमदेवी का हुशोयारपुर में लाला अम्बीरचंद के साथ विवाह हुआ और भगवान्देवी का ला हेमराज के साथ विवाह किया गया अपितु लाला हेमराजजी हुशियारपुर के वसने वाले हैं ॥

और लाला अम्बीरचंद के दो पुत्र हुए,लाला नारायणदास १, लाला कृपाराम२, जिन्होंने अमृतसर में जैनसभा सम्बन्धी बहुतसे कार्य किये हैं। और लाला नारायणदासजी के पुत्र लाला मुन्शीराम हैं। और लाला अम्बीरचंदजीके एक पुत्री हुई जिसका नाम श्रीमति नारायणदेवी जी था सो नारायणदेवी जी का विवाह पट्टी नगर जिला लाहौर लाला वधावेशाह के साथ हुआ जिनके तीन कन्यायें हुईं जिनके यह नाम हैं श्रीमती इन्द्रकौर१, श्रीमती पारवती२, श्रीमती अप्पी३, तो श्रीमतीइन्द्रकौरजी का विवाह कपूरथला में लाला गणेशदासजी के प्रिय पुत्र लाला हरभगवानदासजी के साथहुआ जो आजकल लाहौर शहर में रहते हैं जिस के ४पुत्र एक कन्या है जिनके यह नाम हैं लाला [illegible]करदास१, ला०दीवानचन्द२,ला०बन्सीलाल३,ला० प्यारेलाल४,और [illegible]पूर्णदेवी १ ॥ जोकि इस ग्रंथ के प्रसिद्ध करनेवाले हैं और श्रीमती [illegible]रवती जी का विवाह लाहौर शहर में लाला दित्तूशाह के साथ [illegible] जिनके पुत्र लाला छज्जुमल्ल जी हुए और श्रीमती सुखदेवीजी कन्या१,और श्रीमतीअप्पी कुमरी का विवाह निदौन शहर में लाला गोवर्द्धनदजी के साथ हुआ जिनके पुत्र लाला हंसराज जी हैं ॥

और लाला छपारामजी के पुत्र लाला ज्वादरमल्ल—लाला वर्द्ध मानजल जो कि अमृतसर जैनसभा के मन्त्री हैं। और हंसराज, मुलख राज, बाबूराम ॥

यह भी स्वः पितानुकूल धर्म में रक्त हैं और भागामदेवी जिसका लाला हेमराज जी के साथ विवाह हुआ था उस के एक लक्ष्मणदेवी कन्या उत्पन्न हुई उसका विवाह निर्दौन में हुआ ॥

किन्तु तिसके गौरी दुर्गादेवी नाम की दो पुत्रियें फकीरचंद नामक एक पुत्र का जन्म हुआ। सो गौरी देवी का विवाह अमृतसर में लाला धनराज के साथ हुआ और दुर्गादेवी का विवाह सुजानपुर में किया गया ॥

प्रियमित्र वरो देखिये श्रीपूज्य महाराज कैसे विशाल कुल में उत्पन्न हुए और कैसी विस्तीर्ण कीर्ति युक्त हुए क्योंकि अमरसिंहजी गृहस्थाश्रममें सदाचारी भद्र प्रकृति धर्मात्मा पुरुष थे तथा प्रकृति से ही शान्तिरूप थे ॥

सो पूर्व पुण्योदय से सांसारिक पदार्थों से चित्त की निर्वृत्ति होने लगी दीक्षा की भावना उत्पन्न हुई ॥

सत्य है पुण्यवान् आत्मा (उदितो दितो) उदय में उदय होते हैं, जब श्री अमरसिंह जी का वैराग्य भाव उत्पन्न हुआ तो अन्यदा समय जयपुर में व्यापार के वास्ते गये थे तो वहां पर भी सेठ लोगों के साथ धर्म विषय वार्तायें हुई ॥

फिर अपना निज भाव भी प्रग- कर दिया तब वे सेठ लोग अमर सिंह जी के भाव का सुन कर आश्चर्य मान हो गये ॥

पुनः यह कहने लगे कि हे अमर सिंह जी यदि आप दीक्षा धारण करनी चाहते हैं तो हम भी आप —आप दीक्षा धारण करेंगे तब अमरसिंह जी [illegible] होवे ॥

ही करें किन्तु मेरी भाव,

जब अमरसिंह जी पुनः अमृतसर में आए तो दिनों दिन वैराग्य भाव बढ़ने लगा श्रुति मुक्ति मार्ग में प्रवेश होगई जो कुछ संसारी पदार्थ थे वे अनित्यता दिखाने लगे मन निर्ममत्व में लग गया मुनि भाव धारणे की आकांक्षा बढ़ती गई श्री जिनवाणी ने कर्म वा जीव के स्वरूप को भिन्न २ कर के दिखा दिया ॥

तब फिर चित्त में यह निश्चय किया कि किसी मुनिराज के मिलने पर दीक्षा धारण करूंगा ॥

फिर कितनेक समय के पश्चात् श्रीमान् परम पंडित श्रीस्वामी रामलाल जी महाराज श्री भगवान वर्धमान स्वामी के ८५वें पट्टो परि विराजमान अपने अमृत रूपी व्याख्यानों के द्वारा इस प्रांत में मिथ्या पथ का नाश करते थे तब अमरसिंहजी ने चित्त में निश्चय किया कि मैं श्रीमहाराज का शिष्य होकर श्रीभगवत का मार्ग प्रकाश करूं जिस करके बहुत से भव्य जीव मिथ्या पथ को त्याग कर सुगति के अधिकारी बनें क्योंकि मनुष्य जन्म पानेका यही सार है कि धर्म के द्वारा परोपकार करना तब अमरसिंह जी ने अपनी दुकान पर पांच पुरुष गुमाश्ते (दास) करके बठ लाये सब काम उनको समर्पण कर दिया घर का भी नियम पूर्वक कार्य उन को ही कहा गया जिनके नाम यह हैं ॥

लाला घसीटामल्ल १, मइयामल्ल २, सोहनलाल ३, घनैया मल्ल ४, कोटू मल क्षत्री ५, जब आप सब काम कर चुके फिर यथा योग्य धन सम्बन्धियों को भी देकर दीक्षा के वास्ते अमृतसर से चल पड़े परंतु उस काल में परम पंडित श्री स्वामी रामलाल जी महाराज दिल्ली (इन्द्रप्रस्थ) में विराजमान थे तब श्री अमरसिंहजी दिल्ली को ही चले ध्यान रहे उस समय में रेल गाड़ी का प्रचार न होने के कारण से बहुधा लोग इन्द्रप्रस्थ में आने वाले सुनामादि नामक नगरों से होते हुए दिल्ली में पहुंचते थे ॥

जब श्री अमरसिंह जी सुनाम में गये पुनः श्रावक लोगों के साथ धर्म सम्बन्धी वार्तालाप हुआ तो दो पुरुष दीक्षा के लिये भव्य भी उद्यत हो गये जिन के नाम यह हैं कि—रामरत्न जी १, जयंति दास जी २, तब श्री अमरसिंह जी दोनों को साथ ले कर दिल्ली में पधारे ॥

सत्य है पुण्यात्मा आप तरते हैं अन्य को तार देते हैं इसी वास्ते ही शक्रस्तव में भगवत् की स्तुति समय यह सूत्र आया है यथा:—

(तिण्णाणं तारयाणं) अर्थात् भगवन आप तरते हैं अन्य भव्य जीवों को तारते हैं ॥

जब श्री अमर सिंह जी रामरत्न जी जयंति दास जी इन्द्र प्रस्थमें पहुंचे पुनः श्री राम लाल जी महाराज जी के आनंद पूर्वक दर्शन किये श्री महाराज जी की व्याख्यान रूपी अमृत धारा से हृदय रूपी कमल पवित्र किया पुनः निज आशय को चरण कमलों में निवेदन किया ॥

तब श्री राम लाल जी महाराज ने संयम का पालन अति कठिन विस्तार पूर्वक कह सुनाया तब श्री अमरसिंह जी ने राम रत्न जी ने और जयंति दास जी ने सहर्ष मुनि वृत्ति स्वीकार की। क्योंकि सत्य है शूरवीर के लिये कौनसी बात कठिन है ॥

फिर दिल्ली वाले श्रावकों ने १८९८ में विक्रमाब्दे और वैशाख कृष्ण द्वितीया के दिन दीक्षा महोत्सव स्थापितकिया तब अमर सिंह जी ने रामरत्न जी ने जयंतिदास जी ने श्रीपंडित राम लाल जी महाराज के पास उक्त मास में दीक्षा धारण करी अर्थात सामायिक चारित्र ग्रहण किया तत्पश्चात् * पञ्चमहाव्रतषष्टम रात्रि भोजन त्याग रूप छेदोपस्थापनी नामक चारित्र धारण किया ॥

---

* पांच महा व्रतों का स्वरूप तथा श्री दशवैकालिक सूत्र श्री आचारांग सूत्र,श्री प्रश्न व्याकरण सूत्र इत्यादि सूत्रों में मुनि गुण भी वर्णन किये गये हैं।

और सर्व मुनि गुण युक्त होते हुए श्रीपरिडत जी महाराजके पास श्रुता ध्ययन करने लगे ॥

क्योंकि श्रीअमरसिंह जी महाराज सप्त गुरु भ्राता थे जैसे कि-श्री दौलत राम जी महाराज १, श्री छोटनदास जी महाराज २, श्री रामरत्न जी महाराज ३, श्री पूज्य अमरसिंह जी महाराज ४, श्री अर्यतिदास जी महाराज५, श्री देवी चन्द जी महाराज ६, श्री घनीराम जी महाराज ७, ये सर्व यथा विधि श्रुताध्ययन करते हुओं ने विक्रमाब्द १८८८वें का चतुर्मास दिल्ली में किया ॥

किन्तु शोक से लिखना पड़ता है कि काल की कैसी विचित्र गति है कि श्री रामलाल जी महाराज जो कि पूर्ण विद्वान् थे षट् मास के अन्तरगत ही स्वर्ग वास हो गये तब श्री संघ में महान् शोक उत्पन्न हो गया एक महान् जैन संघ में अमूल्य रत्न की हानी हो गई ॥

परन्तु जब कालके सन्मुख तीर्थंकरादि भी स्थिर न रहे तो भला अन्य पुरुष की तो क्या ही बात है, इत्यादि विचारों से शोक दूर किया गया अर्थात उदासी भाव दूर होगया ॥

श्री अमरसिंह जी महाराज चतुर्मास के पश्चात् ग्राम नगरों में जैन धर्म का प्रकाश करते हुओं ने १८९९ वें का चतुर्मास सुनाम नगर में किया उस काल में * स्तोक महान् अर्थ सूचक शास्त्रों की ह्रस्वता प्रगट करने वाला सूक्ष्म ज्ञान सीखा सूत्र भी उत्तम सयोग होने पर बहुत से अध्ययन किये ॥

अपितु इस द्वितीय चतुर्मास में ही श्री पूज्य जी महाराज शास्त्रज्ञ पूर्ण हो गये जिनके दर्शन करके लोग यही कहते थे कि यह

---

* स्तोक शब्द का अपभ्रंश थोकड़ा शब्द बना हुआ है क्योंकि थोकड़ों में महान सूत्रों का ह्रस्व ज्ञान भरा हुआ है तथा थोक शब्द समूह का वाची होने से भी ठीक है क्योंकि थोकड़ों में सूत्रों का थोक ज्ञान है ॥

साधु होनहार हैं जैन धर्म के परमोपासक होवेंगे । सत्य है त्याग भाषा शीघ्र ही फलीभूत हो गई ।

पुनः नाभा पटियाला छींटावाल इत्यादि नगरों में धर्मोपदेश देते हुओं ने १९०० का चतुर्मास अम्बाला नगर में किया नगर में धर्मोद्योत बहुत ही हुआ क्योंकि श्री अमरसिंह जी महाराज धर्मनेता थे सदैव ही धर्म वृद्धि में कटि बद्ध थे पुनः धर्म के पूर्ण प्रकार से प्र चारक थे चतुर्मास के अनन्तर बनूड़, खरड़ रोपड़, माछीवाड़ा, लुधियाना, जगरांवा, चूड़ चक्र जीरा, फीरोजपुर, इत्यादि नगरों में सत्य धर्मोपदेश देते हुए जीवों को भवसागर से तारते हुए बहुत से श्रावकों की अति विज्ञप्ति होने से १९०१ का चतुर्मास फरीदकोट में किया सो श्री महाराज ने जंगल देश के लोगों पर महान् परोपकार किया, बहुत से भव्यजनों के अमृत रूप जिन वाणी से अन्तः करण पवित्र किये क्योंकि श्री महाराज में जिन वाणी के उच्चारण की महान् शक्ति थी और शरीर की कान्ति ऐसी थी कि वादिजन दर्शन करके ही विवाद की भाषा त्याग कर दीक्षा के लिये उद्यत होते थे व्याख्यान की भी शैली अकथनीय थी ॥

श्री महाराज ने इस चतुर्मास में श्री उववाई सूत्रानुसार बहुत ही तप किया तथा सूत्रों का उपधान नाम छादि (मासखमणादि) भी तप किया, चतुर्मास के पश्चात ग्रामानुग्राम विहार करते हुए लोगों के चित्त के संशय नाश करते हुए श्री महाराज अमृतसर में पधारे तब नगर में आनन्द हो गया बहुत से लोग परमतवाले दर्शन करने को आते थे पुनः दर्शन करके आनन्द होते थे क्योंकि श्री महाराज पूर्व अवस्था में अमृतसर में एक सुप्रसिद्ध सर्दारों में से मान्यनीय चौधरी थे ॥

इस समय में ही अमृतसर में श्रीस्वामी मायार मल्ल जी महाराज

का एक* शिष्य बूटे राय जी नामक चिरासमान था तिसमें यहां पर तप करना प्रारम्भ कर रक्खा था ॥

किन्तु उपवासादि तप करते हुए परिणामों की शिथिलता बढ गई थी ॥

अपितु श्री पुज्य महाराज बूटेरायजी के मन के भाव न जानते हुए तप कर्म में सहायक हुए किन्तु पाप कर्म गुप्त कब रह सका है इस कहावत् के अनुसार अन्यदा समय बूटेराय जी श्री महाराज जी से कहने लगे कि हे अमरसिंह जी आजकल तो साधु पद का ही व्यवच्छेद है तब श्री महाराज ने कहा कि आप अपने आप को क्या समझते हो ॥

तब बूटेरायजी ने कहा कि मैं तो अपने आपको श्रावक मानता हूं ॥

श्री महाराज ! बूटेराय जी भगवती सूत्र में लिखा है कि पञ्चम काल के अंत समय पर्य्यन्त भी चतुर् श्रीसंघ रहेगा, आप अपने मन को मिथ्यात में क्यों प्रवेश कराते हैं तथा चारित्रादि को भी देखीये ॥

बूटेराय ! † मैं तो श्रावक हूं ॥

---

* यह वही बूटेराय जी हैं जो श्वेताम्बर मत को छोड़ कर पीताम्बर शाखा में गये थे जिनका नामबुद्धि विजय रक्खा गया था किन्तु यह संस्कृत वा हिंदी भाषा भी शुद्ध नहीं पढे हुए थे देखो इनकी बनाई हुई मुखपत्ती चरचा नामक पुस्तक अपितु यह एक परिग्रह धारी पीताम्बरी के शिष्य हुए थे ॥

† मुखपत्ती चरचानामक पुस्तक में बूटेरायजी लिखते हैं कि—अभी जैन सिद्धान्त के कहे मुजब कोई साधु हमारे देखने में नहीं आया और हमारे में भी तिस मुजब साधु पणा नहीं है तिस्से हम भी साधु नहीं हैं इति वचनात् इसी प्रकार चतुर्थ स्तुति शंकोद्धार के प्रस्तावना पृ० ३१ में भी लिखा है जो राजेंद्र विजय धरणेन्द्र विजय सवेगी का बनाया हुआ है ॥

तब श्री अमरसिंह जी महाराज ने कृपा करी कि सूत्र में लिखा है कि (गिहिणोवेयावडियं) अर्थात् साधु गृहस्थ की वैयावृत्य करे तो अनाचीर्ण है इसी वास्ते मुनि गृहस्थ की वैयावृत्य न करे ॥

सो मैं तो सूत्रानुसार काम करूंगा तब श्री पूज्य जी महाराज ने लाला सोहनलाल, लाला मोहनलाल इत्यादि सुश्रावकों को सर्व वृत्तान्त कह सुनाया तब श्रावकगणने भी बूटेराय जी को बहुत सी हित शिक्षायें दीं किन्तु बूटेराय जी ने एक भी न मानी तब श्रावक वर्ग ने भी जानलिया कि इस बूटेराय जी का चित्त अस्थिर हो गया है ॥

(सत्य है मोहनी कर्म किस २ को नहीं न चाता) अब यह पतित अवश्यमेव ही हो जायेगा ॥

सो वैसे ही होगया तब फिर लोगों ने श्री महाराज को चतुर्मास की अत्यन्त ही विज्ञप्तिकरी तब श्री पूज्य महाराजजी ने १९०२ का चतुर्मास अमृतसर में ही किया किन्तु इस चौमासे में श्री पूज्य जी महाराज श्रुतविद्या ही पूर्ण प्रकार से अध्ययन करते रहे और इस चौमास में परमत वालों को बहुतसा लाभ हुआ चौमास के पश्चात् स्यालकोट के भाइयों की बहुत ही विज्ञप्ति होने से श्री महाराज ने स्यालकोट की ओर विहार करदिया फिर पसरूर गुजरांवाला जम्बू जम्बू इत्यादि नगरों में धर्मोपदेश देते हुए स्याद्वाद रूपी मत से मिथ्यात्व का नाश करते हुओं ने सम्वत् १९०३ का चौमासा स्यालकोट में ही करदिया जिस चौमासे में लाला *सौदागरमल्ल जी जाकि बड़े शास्त्रज्ञ थे तिन से बहुतसा ज्ञान और भी प्राप्त किया ॥

सो चतुर्मास अत्यानंद से पूर्ण हो गया किन्तु इस चौमासे में लाला मुस्ताकराय जी का अति तीक्ष्ण वैराग्य भाव उत्पन्न हो गया ॥

---

* यह वही लाला सौदागरमल्लजी हैं जिन्होंने ने एक वार बहुत से शास्त्रों के प्रमाण देकर बूटेराय जी को समझाया था जब बूटेराय जी ने एक भी शास्त्रोक्त प्रमाण न स्वीकार किया तब सौदागरमल्लजी

सत्य है ऐसे ही मिथ्या हठों से जिन मार्ग की यह दशा हो गई है अर्थात् नूतन शास्त्रे उत्पन्न हो गई हैं ॥

लाला मुस्ताकराय जी लाला हीरालाल खड वाले की पुत्री ज्याला देवी के सगे भाई थे ॥

चौमासे के पश्चात् श्री महाराज ने इन का भी दीक्षित किया यह *महात्मा जी श्री महाराज के ज्येष्ट शिष्य हुए फिर श्री पूज्यजी महाराज ग्रामानुग्राम विचरते हुए भव्य जीवों को सत्योपदेश देते हुए लाहौर (लवपुर) में पधारे फिर कुशपुर (कसूर) में फिर फिरोजपुर इत्यादि नगरों में विचरके फिर फरीदकोट वाले भाईयों की विज्ञप्तिको स्वीकार करके १९०४ का चौमासा फरीदकोट में ही करदिया पूर्ववत् ही धर्मोद्योत हुआ फिर चौमासे के पश्चात् अनुक्रम विचर के १९०५ का चौमास मालेरकोटले में किया सो मालेरकोटले में धर्मोद्योत बहुत ही हुआ ज्ञान की वा तपादि की वृद्धि अतीव हुई क्योंकि उस काल में मालेरकोटले में सूक्ष्म ज्ञान का प्रचार था कई ब्राह्मणगण शास्त्रज्ञ भी थे अपितु घरों की सख्या भी महत् थी, किन्तु अब भी अन्य नगरों की अपेक्षा महत् ही है ॥

चौमासे के पश्चात् ग्राम नगरों में विचरते हुए धर्मोपदेश देते हुए अन्यदा समय श्री महाराज नामानगर के समीप ही एक छोटा चाल नामक उप नगर बसता है तिस नगर में पधारे जब रामी को

ने रामनगर के श्रावकों से कहा कि यह बूटेराय जी तो सयम से शिथिल हो गया है तुम क्यों पवित्र मार्ग से पतित होते हो तब रामनगर के भाइयों ने कहा कि यदि बूटेराय जी वनस्पति विक्रिय भी करने लगजावे तब भी हम तो गुरु करके ही मानेंगे ॥

* श्री स्वामी मुस्ताकराय जी महाराज के शिष्य स्वामी हीरालाल जी महाराज हुए तिन के शिष्य श्री स्वामी तपस्वी गोविंद राम जी महाराज विराजमान हैं ॥

बहुत से श्रावक जन एकत्र हुए तो श्री महाराज जी एक जिन स्तुति या मनोहर उपदेशक पद कहने लगे तो एक जयचन्द्र नामक गृहस्थस्वरों का वेत्ता उपस्थित था जिस ने श्री महाराज के स्वर को सुन के कहा कि श्री महाराज का ऐसा *स्वर है कि ,—

इन का १०० शिष्य का परिवार होवेगा सत्य है स्वरवेत्ता का कथन शीघ्र ही फली भूत हो गया फिर श्री पूज्य जी महाराज अन्यत्र विहार कर गये किन्तु बहुत से भाइयों की विज्ञप्ति होने से १९०१ का चतुर्मास लुधियाना में किया ॥

धर्मोद्योत बहुत ही हुआ तथा सम्यक्त्व में लोग दृढ़ हो गये मिथ्या मार्ग का नाश करते हुए अनुमान कार्तिक मास में ही एक फिरोज़पुर नामक नगर से पत्र भाइयों का लिखा हुआ आया जिस में लिखा था कि—श्री योगराज जी के गच्छ के दो साधुओं का अत्र चौमास अर्थात् श्री स्वामी गंगाराम जी महाराज और श्री स्वामी हरयाल जी महाराज जिस में स्वामी हरयालजी महाराज अति रोग पीड़ित हो रहे हैं इसलिये श्री महाराजजी फिरोज़पुर की ओर शीघ्र ही विहार करदें ॥

इस पत्र के समाचार को सुनते ही श्री पूज्य जी महाराज ने लुधियाना से फिरोज़पुर की ओर विहार कर दिया अनुक्रमता से चलते हुए फिरोज़पुर में जब पधार गये तब श्रावक लोग परमानन्द हुए किन्तु स्वामी हरयाल जी महाराज रोग से अति पीड़ित हो रहे थे तब श्री महाराजजी ने मुख्य रोग पाण्डुभाव को देख कर स्वामी हरयाल

---

* सूत्र श्री स्थानांग जी सूत्र अनुयोग द्वार जी में एक स्वर मण्डल वर्णन किया गया है, जिस मण्डल में मुख्यतया करके सप्त स्वर लिये हैं जैसे कि—षड्ज् १ ऋषभ २ गंधार ३ मध्यम ४ पञ्चम ५ धैवत ६ निषाद ७ इन सप्त स्वरों का फल भी उक्त सूत्रों में ही विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है ॥

जी को अनशन करवाया सो वह अल्पकाल में ही देवगत हो गये फिर श्री गंगाराम जी महाराज अब एकले ही रहगये तो फिर श्री पूज्य जी महाराज ने विचार किया—यदि एक शिष्य नया हो जावे तो यह श्री गंगा राम जी साधु दो हो जायेंगे तब इन के संयम का निर्वाह भी सुख पूर्वक हो जावेगा ॥

सत्य है पुण्यवान् की आशा शीघ्र ही पूर्ण हो जाती है तब उस काल में ही एक ओसवाल जंगल देश के नौरग्राम के वसने वाले श्रावक जीवनरामजी दीक्षा लेने वास्ते फिराजपुर में स्वतः ही आगये तब श्री पूज्य जी महाराज ने *जीवनराम जी को भली प्रकार से दृढ़ करके और फिरोजपुर में ही दीक्षित करके स्वामी गंगारामजी को समर्प्पण करदिये ॥

धन्य हैं ऐसे परोपकारी महात्मा को फिर श्री पूज्य जी महाराज जी अन्यत्र विहार करगये ॥

और ग्राम २ में जैनधर्म का प्रकाश करते हुए अनुक्रमता से दिल्ली नगर में पधारे फिर बहुत से लोगों की विज्ञप्ति होने के कारण १९०७ का चौमास इन्द्रप्रस्थ में ही करदिया चतुर्मास में भव्य जीवों को अमृतरूपी सर्वज्ञोक्त ज्ञान पिलाया और श्रावक लोगों ने भी जैनधर्म की अनेक प्रकार से प्रभावनायें करीं क्योंकि एक तो श्री पूज्यजी महाराज की दिल्ली में दीक्षा ही हुई थी, द्वितीय श्री महाराज परम पंडित थे इस कारण से लोग नाना प्रकार का उत्साह करते थे ॥

---

*यह वही श्रीजीवनराम जी महाराज हैं जिनके शिष्य आत्माराम जी हुए थे फिर श्री जीवनराम जी महाराज ने आत्माराम का अयोग्य ज्ञात करके स्वगच्छ से बाह्य किया था क्योंकि आत्माराम जी का विशेष वर्णन आगे लिखा जायगा, और जिनके गच्छ के पूज्य श्री चन्द्र जी विद्यमान हैं ॥

फिर श्री महाराज ने चतुर्मास के पश्चात् लोगों के परोपकार के वास्ते जयपुर की ओर विहार किया ॥

किन्तु स्वामी मुस्ताकराय जी महाराज वा स्वामी * गुलाबराय जी महाराज की भी यही विज्ञप्ति थी जब श्री महाराज अलवर में पधारे और जिन वाणी का प्रकाश किया तब बहुत से भव्यजनों को वैराग्य भाव उत्पन्न होगया जिस का फल आगे लिखेंगे ॥

अन्यथा समय श्रीपूज्यजी महाराजजी ने जब अलवर से विहार किया फिर अनुक्रमसे जब जयपुर में पधार गये तब जयपुर में आपाऽनंद उत्पन्न होगया चारों ओर श्रीजैन श्वेताम्बरके नामका नाद होने लगा—धन्यपोसाधु नामकी सभासे ढाकपुकारने लगे क्योंकि पूर्वकाल में श्रीमान् आचार्य मनूलचन्द्र जी महाराज ने जयपुर में महान् धर्मोद्योत किया था ॥

फिर चारों ओर से चौमास की विज्ञप्ति होने लगी तब श्री महाराज जी ने १९०८ का चतुर्मास जयपुर का ही स्वीकार करलिया फिर जयपुरके समीप २ विचरके चौमास के वास्ते जब जयपुरमें पधारे तबही विलासराय जी दीक्षा लेने वास्ते जयपुर में ही आगये फिर श्री महाराज ने विलासराय जी का दीक्षित करके निज शिष्य बनाया ॥

---

* यह श्री गुलाबराय जी महाराज भी श्री पूज्य जी महाराज जी के ही शिष्य थे किन्तु इन की दीक्षा अनुमान १९०४ वा १९०५ की है, अपितु पाठकगण क्षमा करें बहुत से दीक्षापत्र मुझे उपलब्ध नहीं हुए हैं इसलिये मैं अनुमान शब्द ग्रहण करता हूं किन्तु यह महात्मा जी फरीदकोट के वासी एक सुप्रसिद्ध भावसार थे ॥

† यह वही श्री स्वामी विलासराय जी महाराज हैं जिन्हों ने १९२८ में विदरागम्बरादि मतधारियों का अनिष्टचरण को प्रगट करके श्री पूज्य जी महाराज से विज्ञप्ति की थी कि इस दुर्गन्ध का क्यों गुप्त करते हैं तब श्री पूज्य महाराज जी ने विदनाम्बरादि भेषधारियों को प्रत्यक्ष पाठ पर दिया था जिस का स्वरूप आगे लिखेंगे ॥

किन्तु यह श्री स्वामी विलासराय जी महाराज बहुत ही दीर्घ दर्शी शान्ति रूप थे और इनका जन्म मालेरकोटला नामक नगर का था दुकान लुधियाना नामक नगर में करते थे ॥

जब चौमास अत्यानन्द से व्यतीत होने लगा तब अकस्मात् अलवर से रामबक्ष जी स्व॰ पत्नी युक्त दीक्षा के वास्ते जयपुर में ही उपस्थित हुए तब श्री पूज्य जी महाराज ने रामबक्ष जी सुखदेव जी को जयपुर के चौमास में ही दीक्षित किया ॥

और तिनकी पत्नी भी आर्याजी के पास दीक्षित हो गई ॥

किन्तु यह महात्मा जी—जैन धर्म में सूर्यवत् प्रकाश करने वाले हुए हैं और पञ्जाब देश में श्री स्वामी परम पंडित *रामबक्ष जी महाराज ऐसे नाम से सुप्रसिद्ध हुए हैं ॥

क्योंकि स्वामी जी महाराज ज्ञानाकर थे स्वामी जी का जन्म १८८३ जन्म लग्न में इस प्रकार से ग्रह स्थित हैं ।

जैसेकि—विक्रमाब्द १८८३ आश्विन मास शुक्ल पक्षे १५ रवि वासरे मृग शीर्ष नक्षत्र ब्रह्मनाम योगे कौलव करणे जन्म बभूव ॥

७श॰ गु॰ ५
८रा॰ बु॰ ६ सू॰ ४
मं॰ ९ शु॰ चं॰ ३
१० १२ के॰ २
११ १

---

* श्री पूज्य रामबक्ष जी महाराज जी के पांच शिष्य हुए हैं श्री गुरु शिवदयाल जी १, विदनचन्द्जी जो कि संवेगी हो गये थे २।

और यह महात्मा जी परम त्यागी वैरागी थे ॥

सो जयपुर के चौमासे में धर्मोद्योत बहुत ही हुआ तत्पश्चात् श्री पूज्य श्री महाराज चतुर्मास के पीछे मरु (मारवाड़) देश में विचरने लगे सो जोधपुरादि नगरों में विचरते हुए बीकानेर (बक्रापुर) में पधारे तब नगर में धर्मोत्साह बहुत ही हुआ। सैंकड़ों नर नारी दर्शन करके अत्यानन्द होते थे। तथा भाव पना सदाय निर्वृत करते थे ॥

जब श्री महाराज व्याख्यान करते थे तब भव्यगण संशयों से निर्वृत होकर सदय चौमासे की विज्ञप्ति करते थे ॥

जब लोगों ने बहुत ही विज्ञप्ति करी तब श्री पूज्य जी महाराज जी ने सम्वत् १९०९ का चौमासा बीकानेर में ही कर दिया धर्म की प्रभावना भी बहुत हुई ॥

किन्तु चतुर्मास के अंतर गत हो एक दिन की वार्ता है। कि श्रीमान् कोठारी रायतमल्ल जी श्री महाराज से पूछने लगे कि—कृपा नाथ जैन मत की जो तीन शाखायें वर्तमान काल में हो रही हैं इन में से सत्य प्रतिपादक तथा सुधर्मा स्वामी की अव्यवच्छिन्न परंपरा से कौनसी शाखा चली आई है ॥

तब श्री महाराज ने शांति भाव से यह उत्तर दिया कि—हे श्रावक जी जो आप्त प्रणीत सूत्रों में वस्त्र अथवा मुनि गुण कथन किये

श्री तपस्वी मौनव्रति राम जी महाराज जिनके शिष्य श्री स्वामी हरनाम दास जी महाराज हुए जो कि रोपड़ के वासी एक सुप्रसिद्ध ओसवाल थे जिन के शिष्य श्री स्वामी मयाराम जी महाराज श्री स्वामी जवाहर लाल जी महाराज हुए ३। श्री स्वामी बल्लेल मल्ल जी महाराज ४। और श्री स्वामी पंडित धर्मचन्द्र जी महाराज जिनके शिष्य श्री स्वामी गिरधारी लाल जी महाराज और श्री आचार्य वर्य्य सोहन लाल जी महाराज हुए जो कि वर्तमान समय में सूर्य्यवत् जैन धर्म का प्रकाश कर रहे हैं जिन का स्वरूप आगे लिखेंगे ॥

हैं सो जो उन तत्त्वों का वेत्ता मुनि गुण धारण करने वाला पुरुष है अर्थात् जो जीव सम्यक् प्रकार से तत्त्वों का ज्ञाता हो करके मुनि पद धारण करता है उसी ही जीव को सूत्र कर्ता बुद्ध पुत्र के नाम से लिखते हैं ॥

तब श्रीमान् श्रावक जी ने कहा कि हे महाराज जी आप का कथन सत्य है अपितु जो कुछ आपने ह्रस्व वाक् से महान् अर्थ सूचक उत्तर दिया है मैं इस को शिरो धारण करता हु किन्तु इस कथन की सत्यता पूर्वक आपके चरण कमलों में निवेदन करता हु ॥

स्वामिन् जो दिगंबरी लोग हैं वे एकान्त नय के स्थापक होने से अनेकान्त मत में अयोग्य होते हुए स्व आत्मा को स्वयमेव ही तिरस्कार करने वाले हो गये हैं ॥

और जो श्वेताम्बर मत से भिन्न हो कर पीताम्बर कहलाते हुए॥ तपागच्छादि धारी लोग हैं वे लोग भी अनेकान्त मत से पृथक् ही हैं ॥

क्योंकि—वीर शासन में एक श्वेत वस्त्र धारण करने की आज्ञा है, किन्तु यह लोग उक्त आज्ञा को न मानते हुए मनमाने पीतादि वस्त्र धारण करते हैं ॥

और यह लोग वीतराग भाषित दया मार्ग से पृथक् हो कर षट्काय वध रूप मदिरोपदेष्टा हो गये हैं और श्री नंदी जी सूत्र में यह कथन है कि जो श्रुत चतुर्दश पूर्वधारी का कथन किया हुआ है वा दश पूर्व धारी का कथन किया हुआ है वे सम्यक् श्रुत है और वे प्रमाण करने योग्य है ऐसे कथन होते हुए भी यह लोग उक्त कथन को सादर पूर्वक न देखते हुए जो मतांध पुरुषों के रचे हुए ग्रथ हैं जिन में सावद्य निर्वद्य का कुछ भी विवेक नहीं किया गया है उन ग्रथों के यह लोग परमोप देशक हो रहे हैं तथा शास्त्रोक्त तीर्थ श्रीचतुर्संघरूप को त्याग करके वाह्यः पाषाणरूप तीर्थों के स्पर्श करने से अपना कल्याण समझते हैं अजीव में जीव संज्ञा धारण

करते हुए मुख से मुखपत्ति उतार करके हाथ में रखते हैं तथा मार्ग को न पालन करते हुए पुनः २ असत्योपदेश देते हैं ॥

इत्यादि कारणों से यह लोग भी अनेकान्त मत के अनधिकारी हैं सो सम्यक् दृष्टि से देखा जाय तो वीर शासन में शुद्ध मार्गोपदेष्य श्वेताम्बर साधु मार्गी जैन ही हैं जब श्रीमान् श्रावक जी ऐसे कथन कर चुके तब श्री महाराज ने कृपाकरि कि—हे श्रावक जी यह कथन आप का अत्यन्त ही निष्पक्षता का सूचक है तब फिर श्रावक जी बोले कि हे स्वामिन् श्रीविवाह प्रज्ञप्ति श्री ज्ञाता धर्म कथांग इत्यादि सूत्रों में तप संयमादि नियमों को यथा बतलाया है किन्तु यह लोग उक्त सूत्रोक्त पाठ होते हुए भी ध्यानपूर्वक नहीं देखते हैं इसी ही कारण से यह लोग सम्यक् ज्ञान से पराङ्मुख हैं ॥

तब श्री महाराज ने कृपा करके श्रावक जी इन्हीं कारणों से आत्मा ने अनन्त जन्म मरण किये हैं फिर और भी श्रावक जी ने प्रश्न पूछे तो स्वामी जी ने सूत्रानुसार युक्ति पूर्वक ऐसे उत्तर दिये कि श्रावक जी परमानन्द हो गये और श्री महाराज की परम कीर्ति करने लगे सो आनंद से साथ १९०९ का चौमासा पूर्ण होने के पश्चात् बूढ़ी कोटे वाले श्री स्वामी, फकीरचन्द जी महाराज मिले तिनके साथ भी धर्म वार्तायें बहुत होती रहीं ॥

तथा नेव सूत्र जो अध्ययन नहीं करे थे वह सब भी श्री महाराज जी ने स्वामी फकीरचन्द जी से पढ़े स्वामी फकीरचन्द जी श्री पूज्य महाराज जी की बुद्धि का योग मुद्रा को देख कर अति आनन्द होते थे और अध्ययन प्रेम पूर्वक कराते थे ॥

विद्या अध्ययन करने के पश्चात फिर श्री महाराज बीकानेर में ही श्री स्वामी हुक्मीचन्द्र जी महाराज को मिले सो उन के साथ प्रेम पूर्वक वार्ता हुई।

अर्थात् जो श्रीमहाराजजी के दर्शन करता था वह अत्यप्रेम ही

परमानंद हो जाता था सो अनुक्रम से श्रीपूज्यजी महाराज विहार करते हुए वा बहुतसे*मुनियोंको मिलते हुए पुनःदिल्लीमें विराजमान होगये।

लोगों को परम उत्साह उत्पन्न हो गया पुनः चतुर् मास करने की विज्ञप्ति होने लगी तब श्री महाराज ने ग्रीष्म ऋतुको व्यतीत करके १९१० का चौमास दिल्ली में ही कर दिया पुनः चतुर्मास के पूर्व आषाढ मास में धर्म के द्योतक श्री मोतीराम जी, रामचन्द्रजी, मोहनलाल जी, सेवाराम जी, यह चारें भाई लुधियाना से दीक्षा के वास्ते दिल्ली में आगये तो श्री पूज्यजी महाराज ने इनको दर्द करके आषाढ कृष्णा १०मी, को दिल्ली में ही दीक्षित किया पुनः स्व शिष्य बनाये जिस में श्री पूज्यजी के पट्टधारी श्री पूज्य रामबक्ष जी महाराज जी के पश्चात् श्री संघने श्री स्वामी † मोतीरामजी महाराज जी को १९३९ में मालेर कोटले शहर में आचार्य पद दिया अपितु यह स्वामी जी महाराज महान् शान्ति मुद्राके धारी हुए हैं।

---

* जिन२ मुनियों को मिले थे, उन के नाम सर्व मेरे को उपलब्ध नहीं हुए हैं इस लिये जीवन चरित्र में सर्व नाम नहीं लिखे गये हैं नाही मरुस्थल के ग्राम नगरों के पूरे२ नाम मिले हैं नाहीं मालूमे के।

† श्री पूज्य मोतीरामजी महाराज का जन्म लुधियाना के जिले में एक बहलोलपुर नामक नगर बसता है तिस में विक्रमाब्द १८८० आषाढ मास में हुआ था जाति के कोली क्षत्री दीक्षा १९१०दिल्ली में। आचार्य पद १९३९ मालेरकोटलेमें और स्वर्गवास१९५८आश्विनमास, लुधियाने में. अपितु श्रीमहाराज के पांच शिष्य हुए,जैसे कि श्रीस्वामी गंगारामजी महाराज १ श्री स्वामी गणावच्छेदिक श्री गणपति राय जी महाराज २ श्री चंदजी जो कि पूर्व पापोदय से संयमसे पतित होगये ३ श्री तपस्वी हर्षचन्द्र जी ४ श्री तपस्वी हीरालाल जी महाराज किन्तु श्री गणावच्छेदिक जी महाराजजी के शिष्य श्री स्वामी जयराम जी महाराज तस्य शिष्य श्री स्वामी शालिग्राम जी महाराज तस्य शिष्य इस पुस्तक के लिखने वाला उपाध्याय आत्माराम नामक मैं हूं।

करते हुए मुख से मुखपत्ति उतार करके हाथ में रखते को न धारण करते हुए पुनः २ मतस्योपदेश देते हैं ॥

इत्यादि कारणों से यह लोग भी अनेकान्त म हैं सो सम्यक् दृष्टि से देखा जाय तो वीर शासन में श्वेताम्बर साधु मार्गी जैन ही हैं जब श्रीमान् धारण कर चुके तब श्री महाराज ने कृपाकरि कि—हे श्राः आप का अत्यन्त ही निष्पक्षता का सूचक है तब फि कि हे स्वामिन् श्रीविवाह प्रज्ञप्ति श्री ज्ञाता धर्म क तप संयमादि नियमों को यात्रा बतलाया है किन्तु पाठ होते हुए भी ध्यानपूर्वक नहीं देखते हैं इसी सम्यक् ज्ञान से पराङ मुख हैं ॥

तब श्री महाराज ने कृपा करके आप आत्मा ने अनन्त जन्म मरण किये हैं फिर और पूछे सो स्वामी जी ने सूत्रानुसार पृथि पृथक् जी परमानंद हो गये और श्री महाराज को आनन्द के साथ १९०१ का चौमासा पूर्ण वाले श्री स्वामी, फकीरचन्द जी महाराज वार्तायें बहुत होती रहीं ॥

तथा ...न सूत्र जो आदन नहीं करे थ जी ने स्वामी फकीरचन्द जी से पढ़े स्वामी महाराज जी की बुद्धि या योग मुद्रा को देख और अत्यन्त प्रेम पूर्वक कराते थे ॥

विद्या अध्ययन करने के पश्चात् फिर श्री श्री स्वामी कुन्दनचन्द जी महाराज को मिल पूर्वक चर्चा हुई।

...जी श्रीमहाराजजी के दर्शन कर

वैयावृत्य करते थे और श्री महाराज जी साधुओं को विधि पूर्वक श्रुताध्ययन कराते थे ॥

क्योंकि सूत्रस्थानाग जी के पाञ्चवें स्थान के तृतीयोद्देशक में लिखा है कि—यदुक्तम्ः—

पचहिंठाणेहिं सुत्त वाएज्जा तज्जहा संग्गहठयाए उवग्गहठयाय णिज्जरठियाय सुत्तेवामे पज्जवयाते भविस्संति सुत्तस्सवा अवोछिन्न थयठयाते ॥

भस्यार्थः—पंच कारणों से गुरु शिष्य का सूत्र पढावे। प्रथम तो मैंने इस को समझा है द्वितीय सयम में यह स्थिर हो जायगा तो गच्छ में आधार भूत होवेगा तृतीय निर्जरार्थे चतुर्थ मेरा श्रुत अत्यन्त निर्मल होजायगा पञ्चम् श्रुत की शैली अव्यवछेदनार्थे इन कारणों से आचार्य्य श्रुताध्ययन मुनियों को करावे ॥

सो श्री महाराज विधि पूर्वक मुनियों को श्रुताध्ययन कराते थे अर्थात् इस चौमासे में बहुत से मुनियों को श्रुत विद्या का लाभ हुआ।

सो चौमासे के पश्चात् गतुक्रम से विहार करते हुए तथा जैन मत का स्थान २ में प्रचार करते हुए मालेरकोटले वाले भाईयों की पुनः अत्यन्त विज्ञप्ति के प्रयोग से १९१२ का चौमास मालेरकोटले नगर में ही कर दिया सो पूर्ववत् धर्मोद्योत हुआ अपितु श्रावगणों ने श्री महाराज जी को एक उपालम्भ रूप वार्त्ता सुनाई सो यह है कि—स्वामी जी आपने श्री जीवन राम जी महाराज को १९०१ में दीक्षा दी थी उन्होंने विक्रमाब्द १९१० में हमारे नगरमें एक बालक को दीक्षा दी है किन्तु इस बालक की शांति तो शुद्ध थी ही नहीं अपितु दीक्षा के पूर्व एक रात्री मेंहदी की भ्रान्ति में अकस्मात् वसमा ही लग गया जब प्रातः काल में उस बालक के हाथ पाद देखे तो कृष्ण वर्ण चौफने दृष्टि गोचर हुए फिर हम लोगोंने श्री जीवनराम जी महाराज से विज्ञप्ति करी कि—हे स्वामी जी यह बालक धर्म का विरोधि होवेगा ॥

इसका पूर्ण स्वरूप (मेरा बनाया हुआ) श्री पूज्य मोतीराम जी महाराज का जीवन चरित्र नामक पुस्तक से देखो तात्पर्य यह है कि दिल्ली में १९१० के चतुर्मास में बहुत ही आनंद हुआ ॥

चौमासे के पश्चात् ग्राम नगरों में विहार करते हुए तथा परोपकार करते हुए नाभा नगरके पास छींटावाल नामक उपनगर में पधारे सो वहां स्वामी * बालक रामजी महाराज को १९११ वैशाख मास में दीक्षित किया, दीक्षा के पीछे श्री महाराज जय विजय करते हुए अम्बाला (अम्बकालय) नामक नगर में पधारे धर्मोद्योत अतीव हुआ ॥

और परमत वाले लोग भी श्री महाराज जी के दर्शन करने को बहुत से आते थे पुनः स्व स्वः संशय निर्मूल करते थे सब भाइयों की चौमासा के वास्ते बहुतही विज्ञप्ति होने लगी सो श्री पूज्य महाराज ने १९११ का चौमास अबाले नगर में ही कर दिया ॥

किन्तु चौमासा के अंतर गत ही श्री स्वामी हीरालाल जी महाराज श्री स्वामी ज्ञानचन्द्र जी महाराज की दीक्षा करी और उस काल में श्री स्वामी † रूप चन्द्र जी महाराज श्रीमहाराज जी की परम

---

* स्वामी बालक राम जी महाराज जी के दो शिष्य हुए श्री स्वामी लालचंद्र जी महाराज। श्री स्वामी प्रेम सुख जी महाराज स्वामी लालचन्द्र जी महाराज के शिष्य पूर्ण चन्द्रादि साधु हैं। श्री प्रेम सुख जी महाराज के शिष्य श्री स्वामी शादी राम जी महाराज हैं। तिन के शिष्य स्वामी हरिचन्द्र जी महाराज हैं इत्यादि॥

† स्वामि रूप चन्द्र जी महाराज की दीक्षा अनुमान १९११ के चौमासे से पूर्व की है यह स्वामी जी दिल्ली के निवासी एक सुप्रसिद्ध ओसवाल जाति के जौहरी थे इनके शिष्य श्री स्वामि तपस्वी चन्दारी सिंह जी महाराज वा स्वामी दयाराम जी हैं तथा स्वामी जी के शिष्य पूर्व चन्द्रादि से। मनसाराम, मनसीराम, हुकम चन्द्र इत्यादि मुनि चरनस पवित्र है [illegible] बनाये च जिनका वृत्तान्त यथा स्थान में लिखा जाएगा॥

वैयावृत्य करते थे और श्री महाराज जी साधुओं को विधि पूर्वक श्रुताध्ययन कराते थे ॥

क्योंकि सूत्रस्थानांग जी के पाञ्चवें स्थान के तृतीयोद्देशक में लिखा है कि—यदुक्तम्:—

पचहिंठाणेहिं सुत्त वाएज्जा तज्जहा संगहठयाए उवग्गहठयाय णिज्जरठियाय सुत्तेवामे पज्जवयाते भविस्सति सुत्तस्सवा अवोच्छिन्न यथठयाते ॥

अस्यार्थः—पञ्च कारणों से गुरु शिष्य को सूत्र पढ़ावे। प्रथम तो मैंने इस को समझा है द्वितीय स्वयम् में यह स्थिर हो जायगा तो गच्छ में आधार भूत होवेगा तृतीय निर्जरार्थे चतुर्थ मेरा श्रुत अत्यन्त निर्मल होजायगा पञ्चम् श्रुत की शैली अव्यवच्छेदनार्थे इन कारणों से आचार्य श्रुताध्ययन मुनियों को करावे ॥

सो श्री महाराज विधि पूर्वक मुनियों को श्रुताध्ययन कराते थे अर्थात् इस चौमासे में बहुत से मुनियों को श्रुत विद्या का लाभ हुआ।

सो चौमासे के पश्चात् अनुक्रम से विहार करते हुए तथा जैन मत का स्थान २ में प्रचार करते हुए मालेरकोटले वाले भाईयों की पुनः अत्यन्त विज्ञप्ति के प्रयोग से १९११ का चौमासा मालेरकोटले नगर में ही कर दिया सो पूर्ववत् धर्मोद्योत हुआ अपितु श्रावगणों ने श्री महाराज जी को एक उपालम्भ रूप वार्त्ता सुनाई सो यह है कि—स्वामी जी आपने श्री जीवन राम जी महाराज को १९०६ में दीक्षा दी थी उन्होंने विक्रमाब्द १९१० में हमारे नगरमें एक बालक को दीक्षा दी है किन्तु उस बालक की जाति तो शुद्ध थी ही नहीं अपितु दीक्षा के पूर्व एक रात्री मेंहदी की भ्रान्ति में अकस्मात् वसमा ही लग गया जब प्रातः काल में उस बालक के हाथ पाव देखे तो कृष्ण वर्ण जीकने दृष्टि गोचर हुए फिर हम लोगाने श्री जीवनराम जी महाराज से विज्ञप्ति करी कि—हे स्वामी जी यह बालक धर्म्म का विरोधि होवेगा ॥

तब श्री जीवनराम जी महाराज ने कृपा की कि हे भावको जो कुछ इस बालक के भाग होंगे सो हो जायेगा इतनी बात कह कर फिर उस बालक को दीक्षित किया। सो उस बालक का नाम प्रथम तो दिवामल्ल था सो फिर श्री जीवनरामजी महाराज ने उस बालक का नाम *आत्माराम रख दिया।

सो यह कार्य अयोग्य ही हुआ क्योंकि इन कारणों से विदित होता है कि धर्म पथ में विघ्न अवश्यमेव ही होवेंगे अर्थात् यह लड़का धर्म का ही विरोधि हो जायेगा। तब भी महाराज ने कृपा की।

हां इन कारणों से तो यह काम अनुचित ही हुआ है तथा धर्म पथ में इस कुलापसर्पिणी काल के प्रभाव से और भी विघ्न होवेगा।

सत्य है गुरु वाक्य कदापि असत्य नहीं होता अर्थात् जैसे श्री महाराजने कृपा की थी वैसे ही कार्य हुआ क्योंकि श्रीमहाराजने कहा कि प्रथम दिवामल्ल के होने से यह अनुचित कार्य नहीं हुआ है तथा भावी बलवान है यथा जमाली जी को। इतने वाक्य श्रीमहाराज के सुन के लोग परमानंद हो गये किन्तु लोगों ने युक्ति से सारांश ही कह सुनाया॥

स्वामी जी महाराज जय विजय करते हुए लोगों को मुक्ति पथ का मार्ग दिखलाते हुए दिल्ली में विराजमान होगये और श्री ५ कनीरामजी महाराज भी दिल्ली में ही विराजमान थे जो कि श्री ५ आचार्य कजोरीमल्लजी महाराज की समदाय के थे ॥

तब श्री कनीराम जी महाराज ने कहा कि अमरसिंह जी आप को व्यवहार सूत्र के अनुसार तृतीय पद के धारक होना योग्य है ॥

क्योंकि व्यवहार सूत्र में लिखा है कि जो साधु दीक्षाश्रुत परिवार करके संयुक्त होवे वह आचार्य्य पद के योग्य होता है, सो आप तीन ही गुणों कर के संयुक्त हैं अपितु उक्त ही सम्मतिराय शेठ चांदमल्ल अजमेर निवासी जी के पिता जी सुश्रावक श्रीमान् लाला अम्बीरमल्ल जी की भी थी किन्तु पुनः पुनः इन्होंने यही सम्मति दी कि श्रीस्वामि अमरसिंहजी महाराज आचार्य्य पदवी के योग्य हैं ॥

फिर श्री कनीराम जी महाराज जी ने यह भी कृपा करी कि श्री सुधर्म्म स्वामी जी से लेकर आज पर्य्यन्त आप के गच्छ में आचार्य्यों की श्रेणी चली आई है और आप के गच्छ के आचार्य्य श्रुत चारित्र में परिपूर्ण थे पुनः तादृश ही आप हैं ॥

तब दिल्ली में श्री संघएकत्र हुआ फिर श्री संघ ने उक्त सम्मति सहर्ष स्वीकार करके बारादरी नामक उपाश्रय में श्री महाराज विराजमान थे वहां पर श्रीसंघ भी आया तब श्रीसंघ ने उक्त विज्ञप्ति श्री महाराज को करी साथ ही श्री कनीराम जी महाराज भी थे ॥

फिर श्री महाराज ने स्वामी कनीराम जी से कहा जैसे आप द्रव्य क्षेत्र काल भाव देखें वैसे ही करें ॥

तब श्रीकनीरामजी महाराज ने श्री संघ की सम्मत्यनुसार श्री स्वामी अमरसिंहजी महाराज को *आचार्य्य पद आरोपण किया ॥

* परम्परा से आचार्य्य पद देने की यह प्रथा चली आई है कि

तब ही श्री संघ ने दीर्घ (उदात्त) स्वर के साथ यह उच्चारण कर दिया कि आज कल भारत भूमि आचार्य पद से प्रायः हीन हो रही है क्योंकि बहुत से गच्छों में आचार्य पद की प्रथा उठ गई है किन्तु यह काम सूत्रोक्त से विरुद्ध है क्योंकि सूत्रों में यह आज्ञा दृष्टि गोचर है कि एक गच्छ में एक आचार्य एक उपाध्याय अवश्य ही स्थापन करने योग्य हैं ॥

सो आज दिन श्रीसंघने सूत्रोक्त प्रमाण के साथ श्री स्वामी अमर सिंह जी महाराज को आचार्य पद दिया है क्योंकि इस गच्छ में अव्यवच्छिन्नता से श्री सुधर्मस्वामी से लेकर आज पर्यंत आचार्य पद चला आया है सो आज परम आनंद का समय है कि श्री वर्द्धमान स्वामी जी के *८६वें पट्टोपरि श्री आचार्य अमरसिंह जी महाराज

श्रीसंघ की सम्मत्यनुसार जिस मुनि को आचार्य पद देना हो तब वह सफेदी (चादर) को केसर से विभूषित करके वादित्रादि से अलंकृत करके बाद उस मुनि का नाम लिखके श्रीसंघ के सन्मुख साधु उस चादर को उस मुनि के ऊपर दे देवे फिर एक मुनि खड़ा होकर आचार्य के गुण वा आचार्य का गच्छ के साथ कैसा सम्बन्ध है और गच्छ को आचार्य के साथ कैसे वर्तना चाहिये इत्यादि सुंदर रस भरे वचनों से व्याख्यान एक निर्णय पट के सुनाये फिर गच्छ यथा न्याय श्री आचार्य महाराज की आज्ञा शिरोधारण करे और इस भांति से उपाध्याय गणि, गणावच्छेदिक, पदों की विधि भी जाननी चाहिये ॥

* श्री भगवान वर्द्धमान स्वामी जी के ८१ पट्ट—श्रीमती आर्य्या पार्वतीजी कृत ज्ञानदीपिकामहत्तम् कृत श्रीपूज्यअमरसिंहजी महाराज का जीवन चरित्र, वा इतिहास जाप श्रीमान् जैनसमाचार के संपादक मि० वाडीलालजी कृत इत्यादि पुस्तकों में प्रकाशित हो चुके हैं ॥

विराजमान हुए हैं और पुनः पुनः जय जय शब्द का भी संबनाद करता हुआ चिट्ठियों में वा पत्रों में तबही से श्रीपूज्यपाद श्रीमाचार्य्य अमरसिंहजी महाराज ऐसे नाम लिखने लग गया तथा तब ही से श्री पूज्य महाराज चारों ओर ऐसे नाम प्रसिद्ध होगया फिर श्रीमहाराज ने दिल्ली से विहार करके अनुक्रम विचरते हुए १९१३ का चौमास सुनाम नगर में किया सो पूर्ववत् चौमासे में धर्मोद्योत हुआ। फिर चौमासे के पश्चात् श्रीस्वामी शिवदयालजी महाराज की दीक्षा हुई॥

श्री महाराज फिर ग्राम नगरों में धर्मोपदेश देते हुए पटियाला, नाभा, मालेरकोटला, लुधियाना, फलौर, फगवाड़ा, जालंधर, कपूरथला, गुरुका जंडियाला इत्यादि नगरों में जैनमत का प्रचार करते हुए मा गोपालवत् जीवों की रक्षा करते हुए अमृतसर में पधारे सो लोगों की अति विज्ञप्ति होने से१९१४का चौमास अमृतसर में ही करदिया॥

अनुमान उक्त ही वर्ष में—ज्ञाति के ब्राह्मण विश्नचन्द को दीक्षित किया क्योंकि यह विश्नचन्द्र, राय शेठ अम्बीरमल्ल राय शेठ चांदमल्ल जी की भोजन शाला में रसोइये का काम करता था, किन्तु यह चंचल स्वभाव था संयम से पराङ्मुख हो कर आत्माराम जी के साथ ही चलागया था॥

क्योंकि श्री महाराज ने जब इन्हों का अनुचित व्यवहार देखा तब ही स्वः गच्छसे बाह्य कर दिये जिनका स्वरूप आगे लिखेंगे॥

सो अत्यानंद से चौमासा पूर्ण होगया फिर परोपकार करते हुए श्री पूज्य महाराज जीरे शहर में पधार गये पुन लोगों की अति विज्ञप्ति होने से १९१५ का चौमासा भी जीरे नगर में ही करदिया, सो धर्म ध्यान बहुत ही हुआ क्योंकि उस काल में जीरे नगर के सर्व भाई सम्यग्दृष्टि थे॥

फिर चौमासे के पश्चात् श्री महाराज ने राहों, नवांशहर जेजों, बंगा, टोडा, जालंधर, इत्यादि नगरों में परोपकार करके* १९११ का चौमास हुशियारपुर में किया, स्याद्वादरूपी वाणी से भव्यजनों का अन्तः करण पवित्र किया, जो लोग दर्शनार्थ अन्य नगरों के आते थे वह श्री पूज्य महाराज का दर्शन करके स्व जन्म को पवित्र करते थे ॥

जब चौमासा शान्ति, पूर्वक पूर्ण होगया तो भाईयों की अति विज्ञप्ति से बांगर देश की ओर विहार कर दिया ग्राम नगरों में परोप कार करते हुए १९१७ का चौमास सुनामनगर में किया चौमासे में पूर्ववत् उद्योत हुआ ॥

फिर श्री पूज्य महाराज चौमासे के पश्चात् ग्राम नगरों में धर्मोप देश करने लगे।

किन्तु उन दिनों में श्री स्वामी रामबक्षजी महाराज वा विलन चन्द्रादि साधु यमुना पार के क्षेत्रों में विचरते थे ॥

अपितु आत्मारामजी मदद्रपुर से आकर इन्द्रप्रस्थ में स्थित था जो श्रीरामबक्ष जी महाराज के दर्शन करने का अभिलाषी था क्योंकि श्रीरामबक्षजी महाराज श्रुत विद्या में परिपूर्ण व क्रिया में अति शोभन थे सो आत्माराम जी श्रुत विद्या के पढ़ने वास्ते इनके पास ही आगये सो स्वामी जी ने प्रेमपूर्वक † श्रुत विद्या का दान दिया ॥

---

* संवत् १९१४-१५-१६। १७—म जो की दीक्षा हुई है किन्तु आगे पंच मूर्ति के नियम के कारण से हो नहीं लिखा है, क्योंकि बहुत से दीक्षा पत्र विलनचन्द्रादिकों के ही नाम थे ॥

† आत्मारामजी के जीवन चरित्र में लिखा है कि १९१८ का चौमासा के पश्चात् आत्मारामजी ने रामबक्ष विलनचन्द्रादि साधुओं

और श्री पूज्य महाराज ने बहुत से भव्य जीवों को सन्मार्ग में स्थापन करके १९१८ का चौमासा पटियाला में करदिया। सो चौमासा में लाला शिशुराम (श्री कृष्णदास) नागरमल्ल, वल्लभमल्ल, करोडा लाला काशीराम, दीवान, लाला घनैयामल्ल, इत्यादि भाईयों ने जैन धर्म का परमोद्योत किया फिर श्री पूज्य महाराज चौमासे के पश्चात् ग्राम नगरों में धर्मोपदेश देने लगे अनुक्रम विचरते हुए दिल्ली में पधारे जिन वाणी का प्रकाश किया लोग व्याख्यान सुन के परमानन्द होते थे फिर चौमासा की विज्ञप्ति करने लगे किन्तु श्री महाराज जयपुर को ओर विहार कर गये ॥

तब श्री महाराज जयपुर में पधारे तो नगर में परमोत्साह उत्पन्न हो गया चौमासा की विज्ञप्ति होने लगी तो स्वामी जी ने १९१९ का चौमासा जयपुर में ही कर दिया ॥

धर्मवृद्धि अतीव हुई अपितु चोमासा में ही स्वामी गणेशदास वा स्वामी जयचन्द्र जी को श्रीपूज्य महाराज ने दीक्षित किया। क्योंकि श्री महाराज जी का ऐसा वैराग्य मय उपदेश था कि भव्यजन सुनते ही संसार मार्ग से भयभीत होने हुए दीक्षा के लिए उद्यत हो जाया करते थे पुनः दीक्षित होकर मुक्ति पथ की क्रिया के साधक बनते थे। किन्तु श्री महाराज चौमासा के पश्चात् अनुक्रम विहार करते हुए पुनःदिल्ली में ही विराजमान हो गये। तब ही धर्म के प्रकाश करने हारे पाखड मार्ग उत्थापक तीन पुरुष दीक्षा के लिए दिल्ली में ही उपस्थित हुए

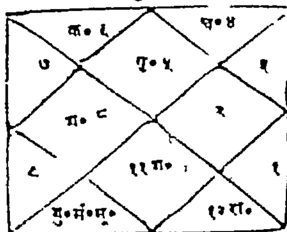
को आचारांग सूत्र, अनुयोग द्वार सूत्र, जीवाभिगमादि सूत्र पढाये। सो यह निकेवल अनुचित लेख है क्योंकि परम पंडित श्री स्वामी राम बक्सजी महाराज से आत्माराम जी विद्या पढते थे और स्वामी जी की सहायता से पंजाब देश में विचरना चाहते थे ! परंतु चर्चाचन्द्रोदय भाग तृतीय के पृष्ठ २७ वें पर लिखा है कि, आत्माराम जी का बहुधा यह स्वभाव ही था कि दूसरे को दोष देना इत्यलम् ॥

जैसे कि मोलापतिराय जी। धर्मचन्द्र जी, दुलेरमल्ल जी, इन्होंने भी महाराज से विज्ञप्ति करी की हमको दीक्षा प्रदान करो तब श्री महाराज ने तीनों को ही दीक्षित करके श्री स्वामी रामबक्ष जी महाराज के शिष्य कर दिये किन्तु *श्री धर्मचन्द्र जी महाराज की बुद्धि परम

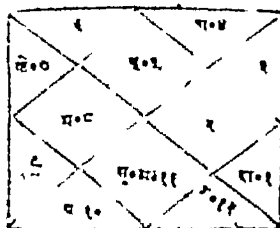
---

* स्वामी जी का जन्म १८०५ माघ मास शुक्लपक्ष १३ बुधवार का था स्वामी जी की जन्म कुण्डली से यही सिद्ध होता है कि यह महात्मा जी परम पण्डित वैराग्य रूप थे ॥

जन्म कुंडली इदम्



चलन चक्र मिदं



तीक्ष्ण थी जिस करके अल्पकालमें ही पंडित की उपाधि से विभूषित होगये। जिन्हों ने अनेक वार आत्माराम की कुयुक्तियोंका खण्डन किया था बहुत से भव्यजीवों के हृदय कुयुक्तियों करके आ विह्वल होगये थे तिन की कुयुक्तियों का नाश करके तिन के हृदय रूपी कमल में सम्यक्त्वरूपी सूर्य्यस्थापन किया था॥

क्योंकि आत्माराम जी का अनुचित भाषणकरने का अभ्यास कुछ न्यून नही था फिर प्राग्वत् ही लेख लिखते थे जैसे कि॥

आत्माराम जी के जीवन चरित्र के—४४ वे पृष्टोपरि लिखा है कि–रामबक्ष जी ने आत्मारामजी से आधीनता के साथ प्रार्थना करी कि आप इस मुलक पंजाब में आगये हैं और मेरे गुरु मारवाड़ को चले गये हैं इस वास्ते आपने इस पंजाब देश में जोर लगा कर अबोध मत की जड़ काटते रहना इत्यादि सो यह उक्त लेख निकेवल असत्य है क्योंकि उन दिनों में आत्मारामजी श्रीस्वामी रामबक्षजी महाराज की सहायता से पंजाब देश में फिरना चाहते थे स्वामीजी से विद्या अध्ययन करते थे किन्तु स्वाभाविक गुण त्यागना दुष्कर है॥ —

इसी वास्ते चतुर्थस्तुति निर्णय शंकोद्धार के पृष्ट ५ पर लिखा है कि त्यारेस्यां श्रीअमरदायादना साधर्मी तथा श्रीसघना श्रावकों ना मुख थी वार्ता सांभली के आत्माराम जी ने उत्सूत्र भाषण करवामां तथा बोली ने फरीजवामो कांशो विचार नथी ने अहंकार मूं पूतलुं छैते अमेंसारी पेठे जाणीए छीए, इत्यादि यह लेख तपगच्छाधिपति का ही है किन्तु श्री महाराज ने प्रथम ही मालेरकाटले म भाईयों को कह दिया था कि–इन क्रियाओं से यही सिद्ध होता है कि यह बालक धर्म पथ में विघ्न करेगा सो वैसे ही होने के चिन्ह दिखने लगे। क्योंकि विक्रमाब्द १८—१९—२० के—अनुमान में पूर्व कर्मो के प्रयोग से अर्हत् भाषित सिद्धान्तों में आत्मारामजी को अश्रद्धा होने लगी मुनिवृत्तों से अरुचि हुई मिथ्यामोहनीकेबल से ऐसी भावनायें उत्पन्न हुई कि मूर्त्तिपद

गर्यो में हानि होगई जैसे कि। जैन शास्त्रों में श्वेत वस्त्र धारण करने की आज्ञा है किन्तु आत्मारामजी को आज्ञा पीताम्बर धारने की हो गई। जैनशास्त्रों में मुखपत्ति नामसे लिखी है जिस का अर्थ ही यह है कि जो सदैव ही मुखके साथ लगी रहे तिसका ही नाम मुखपत्ति है। किन्तु आत्मारामजी ने यही मन में निर्णय किया कि मैं तो हाथ में मुख पत्ति को रक्खूगा। तथा जैनशास्त्रों में मूर्त्तिपूजा का किञ्चिन्मात्र भी कथन वा विधान नहीं है अपितु आत्मारामजी ने यही विचार किया कि अब लोग कुछ जागने लगे हैं फिर भी इन लोगों को एक महान् भ्रम में गेरना चाहिये अर्थात् सूत्रों में जिस वस्तु का विधान नहीं है, उस बात का ही उपदेश करना मुझ योग्य है इसी वास्ते आत्मारामजी ने मोहनी कर्म की प्रबलता से अजीव पदार्थ में जीव की श्रद्धा करली ॥

और महात्मा आत्मारामजी के लेखों से यह भी सिद्ध होता है कि आत्मारामजीने विचार किया कि जैन सूत्रों में कहीं भी असत्य भाषण करने की आज्ञा नहीं है किन्तु अब किसी अन्ययुक्ति से काम करना चाहिये

इसीवास्ते आत्माराम जी सम्यक्त्वशल्योद्धार के पृष्ठ २५१में पर लिखते हैं कि-अपवाद मार्गमाश्रित्य वोल्याजी आज्ञापनाछे, इत्यादि दोनों में अन्यनी इत्यन्न हुई किन्तु यह बातों के आत्मारामजी के अन्तःकरण में भी अपितु व्यवहार शुद्ध रखा हुआ था सं० १९३०का चौमासा आत्मा रामजी ने आगरे शहर में श्रीमान् पं० रत्नचन्द्र जी के पास किया था विद्याऽध्ययनार्थे फिर बहुतसूत्र वा संस्कृत भाषा के व्याकरणादि पढ़ कर चौमासे के पश्चात् विहार किया किन्तु वर्तावव्यवहारस्य से विरुद्ध नहीं करते थे। जैसे कि आत्माराम जी के जीवनचरित्र के ४८वे पृष्ठ पर लिखा है कि श्रीमान् रत्नचंद्र जी ने आत्माराम जी को यह शिक्षा दी कि एक तो श्री जिन प्रतिमा को कभी भी निन्दा नहीं करनी १। दूसरा वेशबदलने बिना धारा हाथ कभी भी शास्त्र को नहीं लगाना २। और तीसरा अपने पास सदा दंडा रखना ३ मैंने तुम का श्री जैनमत का सारटसार बताया है तथा मुखपत्ती २५० वर्ष तक तक रहनेवालों न

मुखपती बांधी है और तेरे पट्टों में अनुमान दोसौ (२००) वर्ष से बांधनी शुरु की है, यह ढूंढकमत अनुमान सवा दो सौ २२५ वर्ष से बिना गुरु अपने आप मनःकल्पित वेषधारणकरके निकाला गया है, इत्यादि यह लेख असमञ्जस हैं क्योंकि आ प्रथम लेख प्रतिमा विषय लिखा है कि प्रतिमा कि निंदा न करनी इस लेख में हम भी सम्मत हैं, इस से यह भी सिद्ध होता है कि आत्माराम जी प्रथम प्रतिमा की निंदा करते होंगे तभी तो उन्होंने शिक्षा दी कि मुनिजनों को क्या आवश्यकता है। कि जड़ की निन्दा करें किन्तु जो लोग प्रतिमा को अर्हत् की सदृश मानते हैं पुनःजड़ में जीवता की संज्ञा धारण करते हैं पूजा की सामग्री से उसे प्रसन्न करते हैं इसलिये मंदिर की प्रतिष्ठा करते हैं अथवा उसके सम्मुख वादित्र बजाते हैं इत्यादि क्रियायें मिथ्यात मार्ग को पुष्ट करती हैं इस प्रकार महात्मा जन उपदेश करते हैं न तु निंदा। सो यदि आत्मा राम जी के आशयानुसार प० रत्नचंद जी का आशय होता तो उनके शिष्य (उनकी सम्प्रदाय के) स्वामी ऋषिराज जी सत्यार्थ सागरादि ग्रंथ काहेकों बनाते जिस में मूर्तिपूजा की जड़ काटी है। अर्थात् मूर्तिपूजा का युक्ति वा शास्त्रानुकूल निषेध किया है इसलिये आत्मारामजी का प्राग्लेख प्रथम शिक्षारूप कल्पित है। दूसरा लेख लिखा है कि—स्वामी रत्नचंद जी ने कृपा करी कि—पेशाब करके बिना हाथ धोये कभी भी शास्त्र को नहीं लगाना, मित्रगण! आप स्वयं विचार करें कि जब उक्त कार्य्य आत्माराम जी करते होंगे तभी तो प० जी ने शिक्षा दी है। और इस लेख से यह तो स्वतः ही सिद्ध है। स्थानक वासी महात्माजन आत्मा रामजीका पुन पुनः शिक्षा करते थे ऐसा काम मत किया करो। क्योंकि जिस शास्त्र में आत्माराम जी आना चाहते थे वा जिस शास्त्र के ग्रन्थ भी पढे थे उस शास्त्र में उक्तकार्य्य अयोग्य नहीं बतलाया है।

उदाहरण श्री प्रतिक्रमण सूत्र श्रावक भीमसिंहमाणक के द्वारा प्रकाशित हुआ जो सम्वत् १९५१ माघवदी १३ मोह मयी में। तिस ग्रंथ के ५७९ वे पृष्टोपरि यह गाथा लिखी है जैसे कि ॥

- खुइमे भत्तोसफलाइ साइमेसुंठिजीरअजमाइ
महुगुडतंबोलाईं अणाहारेमोयनिंबाई ॥ १४ ॥

जिस के मध्य में यह लिखा है कि गो से ले कर सर्व आदि के अनिष्ट मूत्र उपवासादि कृत्यों में पाने कल्पते हैं क्योंकि अर्हन् के मत में उपवास में *चातुराहार का नियम है किन्तु मूत्र अणाहार है ॥

तथा और भी देखिये—श्राद्ध दिन कृत्य १८७६ ई० बनारस जैनप्रभा करप्रेस का प्रकाशित हुआ जिस के ३६ वें पत्रोपरि लिखा है कि—श्रावक साधु को दो प्रकार का पात्र देवे। एक तो आहार का पात्र। दूसरा प्रस्राव का पात्र २ इति वचनात् अब सुज्ञजन विचार करेंगे कि—जब संवेगी मुनि प्रस्रावका पात्र रखते हैं। तथा जब वे विहारादि क्रिया करते हैं तिस समय वे क्या करते होंगे। क्योंकि आहार के पात्र के साथ प्रस्राव के पात्र का स्पर्श कराते हैं या नहीं यदि कहोगे हम प्रस्राव का पात्र नहीं रखते हैं तो आप अपने पर्वाचार्यों से विरुद्ध हुए। यदि कहोगे हम आज कल नहीं रखते हैं। तो हम कहते हैं आप के बड़े पूर्व रखते थे क्योंकि तभी तो श्रावक को प्रस्राव का पात्र देने की आज्ञा लिखी है। यदि कहोगे यह लेख हमको अप्रमाण है। तो हम कहते हैं जो इन ग्रंथों में पूजा की विधि के अर्थ कल्पित लेख लिखे हैं तो उनको प्रमाणिक क्यों मानते हो ॥

यदि कहोगे हम आहारादि के पात्र से स्पर्श नहीं कराते। तो यह वार्ता ही असंभव है क्योंकि। पात्रों का समूह तो आप एक ही हाथ में रखते हैं ॥

---

* चतुराहार यह हैं। अन्न १ पानी २ खाद्यमफलादिखापकामादि स्वाद्यमचूर्णादि ॥ ४ ॥

तीसरा लेख आत्माराम जी का यह है कि। पंडितरत्नचन्द्र जी ने कहा कि दंड हाथ में रखना सो यह भी कथन अयौक्तिक है क्योंकि—यदि पं० रत्नचन्द्र जी की दंड रखने की श्रद्धा होती तो उनके गच्छ में यह प्रथा अवश्य ही चल पड़ता किन्तु उनके गच्छ में उक्त श्रद्धा का प्राय सर्वथा अभाव है क्योंकि वृद्ध रोगी के लिये सूत्र में दंड कहा है अपितु सर्व के लिये नहीं क्योंकि जब अर्हत् के मत में रजोहरण का दंड बिना वस्त्र के वेष्टन किये रखना नहीं कल्पता है कि कोई जीव भय न पावे तो भला दंड की आज्ञा सदैव काल के लिये कैसे संभव होसक्ती है किन्तु संवेगी लोकदंड से जो काम लेते हैं उसका उदाहरण से निश्चय कर लीजिये यथा । श्रीगणावच्छेदिक श्री ५ गणपतिरायजी महाराज श्रीस्वामी जयराम जी महाराज श्रीस्वामी शालिग्राम जी महाराज इणाने पञ्च का चतुर मास १९५१ का अंबाले नगर में था। उस काल में ही चंदनविजय नामक पच संवेगियों का भी चौमासा अंबाले में ही था। तो एक दिन की बात है कि एक संवेगी हाथ में दंड लिये जारहा था तो एक मार्ग मे महिष खड़ी हुई थी तो उस वृद्धी ने बड़े ही बल के साथ एक दंड महिष के मारा तो महिष दंड खाते ही भाग गई मार्ग स्पष्ट हो गया तो जब संवेगी महाशय ने पीछे का देखा तो दो साधु वीरशासन के दृष्टि गोचर हुए तो वह दंडी भी शीघ्र २ चलके भाग गया ॥

अब पाठकगण अवश्यमेव ही विचार करेंगे कि संवेगी लोग दंड से इत्यादि काम लेते हैं किन्तु यह लोग संवेग पथ से भी पतित हैं क्योंकि इनके ग्रंथों मे १ एक संवेगी को पंच दंड रखने की आज्ञा है परन्तु यह लोग एक दो दंड रखते हैं यथा आचारदिनकृत्य ग्रंथ के ३१वें पत्र को पढ़ो ॥ पंच दंड विचाराधिकार ॥

आगे जीवन चरित्र में लिखा है कि—हमारे बड़ों ने १५० वर्ष से मुख पर मुखपती बांधी है तेरे बड़ों ने २०० वर्ष से मुखोपरि मुख-

पत्ती बांधी किन्तु यह ढूंढकमत बिना गुरुके मनःकल्पित बिना गुरु के निकाला गया है इति वचनात् ॥

समीक्षा—सो यह लेख भी आत्माराम जी की बुद्धि का परिचय खूब देता है क्योंकि यदि प० रत्नचन्द्र जी महाराज की उक्त श्रद्धा होती तो वह शीघ्र मुखपत्ती मुख से उतार डालते तथा अपने शिष्यों को सदैव ही उक्त उपदेश दिया करते सो तो उन्होंने नाही उक्तउपदेश दिया है और न अपने मुख से मुखपत्ती उतारी है सो इससे सिद्ध हुआ कि आत्माराम जी सत्य से पराङ्मुख ही रहते थे ॥

प्रिय पाठकवृन्द्—आत्माराम जी का ही मत जिन शासन से विरुद्ध अल्पकाल से उत्पन्न हुआ है जिस का स्वरूप आगे लिखेंगे किन्तु यह श्री जैन श्वेताम्बर स्थानक वासी ही जैन श्री श्रमण भगवत् वर्द्धमान स्वामी से अद्यावि पर्यन्त अव्यवच्छिन्नता से चले आये हैं हां यह अवश्य ही मानना पड़ेगा कि किसी काल में अधिक किसी काल में स्वल्प होते आए हैं मुहपत्ती मुखपर बांधना येही जैनधर्म का लिङ्ग है तथा सर्व विद्वानों ने जैनमत का वेष यही लिखा है—जैसे शिवपुराण आदि ग्रंथों में यह सर्व प्रमाण शास्त्रार्थ *नाभा तथा सपगी मुखमर्दन में प्रकाशित हो चुके हैं । इसी वास्ते यहां पर नहीं लिखे ॥

किन्तु केवल दो प्रमाण ही दिग् दर्शन मात्र लिखते हैं—जैसे कि चतुर्थ स्तुति शंकोद्धार के प्रथम परिच्छेद के पृष्टपन्नोपरि लिखा है कि सम्वत १९५० मी सालमां आत्मारामजी महमदावाद मा समाचार छापामां व्याख्यान के अवसरे मोहपत्ति बांधवी हम अच्छी जानते हैं पण कोई कारण से नहीं बांधते हैं ॥

---

* नाभा शहर में राजसभा के मध्य में श्री स्वामी उदयचन्द्र जी महाराज के सम्मुख सवेगी वल्लभ विजय जी पराजय प्राप्त कर चुके हैं सो उक्त चर्चा का सारा स्वरूप शास्त्रार्थ नाभा नामक पुस्तक प्रकाशित हो चुका है ॥

॥ पहेबुं कपाडयुं त्यारे विद्याशालानी बेठकना

भावकोप आत्माराम जीने पूला साहेब मार्प मोहपत्ति पाधवी कहो आपोछो तो बांधवावेम नथी त्यारें आत्माराम जी एतेने पोतानारागि करवाने कहा के हम ईहां से विहार करके पीछे बांधेंगे। इत्यादि प्रिय गण। जब आत्माराम जी व्याख्यान के समय मुहपत्ति बांधनी अच्छी जानते हैं तो इससे सिद्ध हुभा कि जो पुरुष सदैव ही मुखोपरि मुह पत्ती बांधते हैं व जिनाज्ञानुकूल काम करते हैं क्योंकि जिन लिङ्ग होने से। तथा गुजरात देश में प्राय बूटेरायजी की सम्प्रदाय के बिना शेष सर्व संवेगी लोग मुहपत्ती बांध के व्याख्यान करते हैं तथा कितनेक सवेगी लोग अपने आपको साधु नहीं मानते हैं सो यह अच्छे हैं क्योंकि वह असत्य भाषण से बचाव करते हैं सो आत्मारामजी के कथन से ही मुहपत्ति सिद्ध है मुखोपरि बांधनी। तथा साम्प्रति काल के विद्वान् भी जैनमत का भेष मुहपती करके मुख बांधना ऐसे मानते हैं देखिये जगत् प्रसिद्ध सरस्वती पत्र। एप्रिल १९११, भाग १२ संख्या ४ ॥ संपादक महावीर प्रसाद द्विवेदी—इंडियनप्रेस—प्रयाग से जो प्रकाशित होता है। तिसके २०४ पत्रोपरि सप्तदशाचार्यों का चित्र दियागया है जिस में द्वादशमा चित्र श्रीआदिनाथ (ऋषभदेव) भगवान् का है तिस चित्रोपरि मुखपती मुह पर बांधी हुई है अर्थात्—श्रीऋषभदेव भगवान् के चित्र के मुखोपरि मुखपत्ती बांधी हुई है ऐसे चित्र जैनमत का दिखाया गया है। सो पाठकवृन्द! जब पर मत वाले भी जैनमत का भेष मुखोपरि मुहपत्ती बांधना मानते हैं और श्री जैन श्री उत्तराध्ययन सूत्र, श्री भगवती सूत्र श्री प्रश्न व्याकरण सूत्र, श्रीनशीथ सूत्र, इत्यादि सूत्रों में भी मुनि का चिन्ह मुहपत्ती माना है तांते आत्माराम जी का लेख मुहपत्ती विषय हठ है। तथा पण्डित रत्नचन्द्र जी की श्रद्धा यदि आत्माराम जी के लिखे अनुसार होती तो उनके बनाये मोक्ष मार्गादि ग्रन्थों में यह श्रद्धान् अवश्य ही पाया जाता

किन्तु उनके बनाये ग्रंथों में उक्त श्रद्धा का लेश भी नहीं है बल्कि भी मान् पंडितजी महाराज के हाथ का लिखा हुआ एक हमारे पास जीर्ण पत्र है जिस में देव गुरु धर्म के विषय में लेख लिखा है। यह सम्यग्जीवों के दृष्टान्तार्थ जैसे लेख है वैसे ही (प्रतिरूप) (नकल) लिखा जाता है जिसको पढ़के भव्यजन स्वयमेव ही मालूम कर लेंगे कि श्रीपं॰रत्नचंद्रजी महाराज का क्या आशय था॥अथ देवगुरु धर्मनी चर्चा लिखीय छै।—

१—देवसम्यकदृष्टि के मिथ्यादृष्टी।

२—देव ज्ञानी के अज्ञानी।

३—देव सम्वरी के असंवरी।

४—देव प्रत्याख्यानी के अप्रत्याख्यानी।

५—देव संजती के असंजती।

६—देव वृति के अवृति।

७—देव एकेन्द्री के पंचिन्द्रि।

८—देव त्रस के स्थावर।

९—देव मनुष्य के तिर्यंच।

१०—देव सागार के अणागार।

११—देव सूक्ष्म के बादर।

१२—देव परिग्रहधारी के अपरिग्रहधारी।

१३—देव आहारिक के अणाहारिक।

१४—देव मापक के अमापक।

१५—देव वीतरागी के सरागी।

१६—देव म्हाण पुप्पविलेपण भोगी के अभोगी।

१७—देव ८ मास ४ मास विहारी के अविहारी।

१८—देव चौयेआरे के पंचमे आरे।

१९—देव शास्त्रश्रोता के अश्रोता।

२२—देव सर्वज्ञ के असर्वज्ञ ।

२३—देव ८ कर्म संयुक्त के ४ कर्म संयुक्त ।

२४—देव सण्णी के असण्णी ।

२५—देव ४ प्रजा के ३ प्रजा ।

२६—देव १० प्राण के चार प्राण ।

२७—देव मुक्तगामी के ससारगामी ।

२८—देव १३ गुणस्थाने के चौथे गुणस्थाने ।

२९—देव शुक्ल लेशी के अलेशी ।

३०—देव पुरुष वेद स्त्री वेद के नपुंसक वेदी ।

३१—देव उपदेश देवे के न देवे ।

३२—देव रोमाहारी के कवलाहारी ।

३३—देव कृत गढ के अकृत गढ ।

३४—देव मुक्त के अमुक्त ।

गुरु ।

१—गुरु हिंसक के अहिंसक ।

२—गुरु सत्यवादी के असत्यवादी ।

३—गुरु अदत्तभाक्षी के दत्तभाक्षी ।

४—गुरु कनक कामनी के त्यागी के अत्यागी ।

५—गुरु परिग्रहधारी के अपरिग्रहधारी ।

६—गुरु प्रतिबंधक के अप्रतिबंधक ।

७—गुरु धर्मोपदेशी के हिंसा उपदेशी ।

८—गुरु आश्रवी के अनाश्रवी ।

धर्म्म ।

१—धर्म जीव हिंसामें जीवदया में ।

२—धर्म ज्ञानमें के अज्ञान में ।

३—धर्म दर्शनमें के अदर्शन में।
४—धर्म चारित्र में के अचारित्र में।
५—धर्म आस्रव में के सम्वर में
६—धर्म निर्जरामें के बंधमें।
७—धर्म १२ भदी तपस्यामें के अतपस्या में।
८—धर्म भगवान् की आज्ञामें के आज्ञाबाहिर॥

पाठकगण ! यह सर्व पं० जीके हाथ के लिखे हुए पत्र की नकल है आप स्वयं विचारें कि आत्माराम जीके लेख का कितना अन्तर है इससे सिद्ध होता है कि आत्माराम जी ऋजु प्रकृति नहीं थे किन्तु हठ धर्मी थे।

इस वास्ते चतुर्थ स्तुति निर्णोद्धार के २८५ वें पृष्टोपरि लिखा है कि केमके आत्माराम जी आनन्द विजय जीने समझाया मैं भी जो कदाच महा विदेह क्षेत्र थी केवली भगवान आवेंद बोतो संमव तो न थी इत्यादि सो पूर्व कर्मों के फल से आत्माराम जीके चित में अनेक संशय उत्पन्न हुए जो कि यथा स्थान पर दिखलाये जायेंगे अपितु श्री पूज्य महाराज जीने १९२० का चौमासा दिल्ली में ही कर दिया सो धर्मोद्योत अतीव ही हुआ॥

सो चौमासा के पश्चात् श्रीमान् महाराज अनुक्रम से विहार करते हुए नाभा शहर में पधारे सो नाभा नगर में अतीव चौमासा की विज्ञप्तिहुई सो ओसवाल या अग्रवाल भाइयों के अति आग्रह से १९२१ का चौमासा नाभा नगर में ही कर दिया ! अबपाठकों को यह भी दिखलाते हैं कि पूर्व कर्मोदयसे आत्मारामजी की श्रद्धा पश्चावश्यक से भी विषम होगई क्योंकि श्री भगवन् वर्द्धमान स्वामी से अद्यापि पर्यन्त षड्आवश्यकादागमुक्त जो आवश्यक क्रियानुष्ठान चला आता है उसको भी मिथ्या समझने लगे किन्तु जो कल्पित आवश्यक और

मिश्रत भाषायुक्त मूर्त्तियों को धंदमा रूप रस में रुचि पढ़ने लगी क्योंकि श्री भगवन् की अर्द्धमागधी भाषा है।

यथा—श्री समवायांगजी सूत्र स्थान ३४।

सूत्र-अद्धमागधीए भासाए धम्ममाइखति २२ सावियाण अद्धमागधी भासा भासिज्जिमाणिते सिंसव्वेसिं आयरियमणा रियाण दुप्पय चउप्पयमिय पसु पक्खिसरिसिवाण अपणो हित सिवसुहदाए भास ताए परिणम्मई ॥ २३ ॥

अस्यार्थः—श्रीसमवायांग जी सूत्र के ३४ वें स्थान के। २—२३ वें सूत्रमें यह लिखा है कि श्री भगवान् की अर्द्ध मागधी ही भाषा है अर्थात् भगवन् अर्द्ध मागधी भाषा में ही धर्म कथा कहते हैं सो वह भाषा आर्य अनार्य द्विपाद चतुर्पाद मृग पशुपक्षि सर्पादि सर्व जीव अपनी अपनी भाषामें ही समझ जाते हैं।

तथा प्रज्ञापण सूत्र के प्रथम पद में ऐसे कथन है :—

सूत्रम्- सेकित भासायरिया, भासाय रिया अणेगविहापणत्ता तज्जहा जेण अद्धमागहायभासाए भासति जथण बंभीलिवीपवत्तई बंभीणलिविए अठारसलविहेलेह विहाणे प०त० बंभी १ जवणालिया २ दोसा ३ पुरिया ४ खरोट्टी ४ पुक्खरमारिया ६ भोगवइया ७ पहाराइया उय ८ अतक्खरिया ९ अक्खर-पुठिया १० वेणइया ११ णिण्हइया १२ अंकलिवी १३ गणितलिवी १४ गंधव्वलिवी १५ आदंशलिवी १६ माहेसरी १७ दामिलीपोलवी १८ सेतभासाय रिया ॥

अस्यार्थः—शिष्य प्रश्न करता है कि हे भगवन् आर्य्य कौन हैं ? गुरुउत्तर देते हैं कि हे शिष्य आर्य्य के अनेक भेद हैं किन्तु जो अर्द्ध मागधी भाषाभाषण करते हैं वे आर्य्य हैं और जो *ब्राह्मीलिपी के अष्टादश भेद हैं ब्राह्मी लिपी के साथ ही अर्द्ध मागधी भाषा का प्रयोग होता है वेभी आर्य्य हैं ।

तथा श्री विवाह प्रज्ञप्ति सूत्र के पञ्चम शतक के चतुर्थोदेश में यह सूत्र है ।

यथा–देवाण भंतेकयराए भासाए भासति कयरावा भासा भासिज्जमाणी विस्ससति गोयमा देवाण अद्धमागहाए भासाए भासति सवियण अद्ध मागहा भासा भासिज्जमाणी विस्ससति ।

इतिवचनात् ॥

अस्यार्थः—श्री गौतम प्रभु श्रीभगवन् श्रीवर्द्धमान स्वामी से पूछते हैं कि हे भगवन देवते कौनसी भाषा भाषण करते हैं तथा कौनसी भाषा भाषण की हुई देवतों को प्रिय लगती है ? तब भगवान् उत्तर देते हैं कि हे गौतम देवते अर्द्ध मागधी भाषा भाषण करते हैं यही भाषा भाषण की हुई देवतों को प्रिय लगती है ?

तथा हंटर साहिब अपने रचे संक्षिप्तहिंदुस्तान के इतिहास में लिखते हैं कि हिंदुस्तान् की मूलभाषा पुराणी प्राकृत है तथा रुद्र प्रणीत काव्यालंकार की टिप्पणी करने वाले लिखते हैं कि प्राकृतभाषा सब भाषाओं से प्रथम है ?

---

* यह अष्टादश ब्राह्मी लिपिके भेद किसी स्थान पर सविस्तर लेख देखने में नहीं आये हैं इसलिये नहीं लिखे हैं मूल सूत्र में तो केवल नाम ही हैं

तथा हिंदुस्तानका इतिहास इश्वरप्रसाद एम०ए० भी सर्व भाषाओं से पुराणी सर्व भाषाओंकी माता *प्राकृत ही है अर्थात् सर्व भाषा प्राकृत से निकली हैं ऐसे लिखते हैं तथा चंड व्याकरणका वृत्ति कर्त्ता यूरोपियन विद्वान् भी पूर्ववत् ही लिखता है सो यह मागधी भाषा अनंत अर्थ की सूचक है इसीवास्ते गणधर देवोंने आगम प्राकृत वा मागधी भाषा में ही रचे हैं और आवश्यक क्रियायें भी मागधी भाषा में ही रची हैं। किन्तु जो तपागछियों का आवश्यक है वे सर्व मागधी भाषा में नहीं है अपितु संस्कृत ! प्राकृत, मारवाडी, गुर्जर इत्यादि मिश्र भाषा में हैं सो इसीवास्ते यह गणधर कृत विदित नहीं होता ॥

फिर श्री अनुयोग द्वार जी सूत्र में षडावश्यक के विषय में यह गाथा लिखी है :—

यथा —सावज्ज जोगविरई उक्कीतण गुण वउ पडिवत्ती खलियस्स निंदण वण तिगिच्छं गुण धारणाचेव?

भावार्थ —आवश्यक सूत्र का सावद्य योग निवृत्ति रूप प्रथमाध्याय है १। चतुर्विंशति देवकी स्तुति रूप द्वितियाध्याय है २। गुणवतों को वंदना रूप तृतियाध्याय है ३। पाप से प्रतिक्रम रूप चतुर्थाध्याय है ४। पाप की आलोचना रूप पञ्चमाध्याय है ५। प्रत्याख्यान रूप षष्ठमाध्याय है ६। सो यह सर्व अध्ययन विद्यमान हैं किन्तु संवेगी लोगोंने षडावश्यक में मनः कल्पित चैत्य वंदना स्थापनाचार्य्य शांतादि देवतों की स्तुतियें लिख धरी हैं !

* हिन्दी भाषा की उत्पत्ति नामक पुस्तक में सम्पादक सरस्वती पत्र महावीर प्रसाद द्विवेदी जी भी प्राकृत भाषा को बहुत ही प्राचीन लिखते हैं ॥

सो आत्माराम जीकी श्रद्धा सनातन पड़ावश्यक से भी विषम हो गई मनः कल्पित आवश्य को परि श्रद्धा दृढ होगई।

अब आत्माराम जी मालेरकोटले में आए तो विद्दमचन्द्रादि साधुओं को भी सम्यक्त्व से पतित किया क्योंकि इसी वास्ते सूत्रों में लिखा कि (कुसंग कथा कथा नहीं अकार्य करता) अर्थात सर्व ही अनर्थ इसी से होते हैं किन्तु जो आत्मारामजी के जन्म चरित्र में या लिखा है कि विद्दमचन्द ने पेशाब से हाथ धोए आत्माराम जी ने बस की यहकिय ग॥

प्रियपाठकगण! यह सर्व असमंजसही लेख हैं! क्योंकि आत्माराम जी का यह बहुधा ही स्वभाव था कि अपना दोष पर के शिरधरना इत्यर्थ॥ और यह प्रथा संवेगी लोगों में अब तक भी प्रचलित है किन्तु इस का प्रमाण आगे लिखेंगे अपितु यह संवेगी लोग प्रायः असत्य लिखने से किञ्चित् भी भय नहीं करते देखिये सच्चा सम्यक्त्वोदय भाग तीसरा पृष्ट १२ पंक्ति ७ पर संवेगी साधु जी के जितने पत्र हमारे गुरु महाराज के पास आये सब झूठ लेखों से सरासर भरे हुए थे, इत्यादि सो आत्माराम जी की श्रद्धा पूर्व कर्मों की महत्वता से छिन्न भिन्न हुई इधर श्री आचार्य महाराज जी का १९२१ का चौमासा नाभा नगर में आनंद पूर्वक व्यतीत हो गया फिर श्री पूज्य महाराज ग्रामानुग्राम विचरते हुए तथा जय पताका हाथ में लेते हुए मालेरकोटला, एधियाना, फलौर, फगवाड़ा, जालंधर, कपूरथला, इत्यादि नगरों में धर्मोपदेश करके १९२२ का चौमासा भाइयों के अतीव आग्रह से गुरु ने जडिआले में ही कर दिया! मैं इस बातको पूर्वलिख चुका हूं कि पूर्व कर्मोदय से आत्माराम जी का चित्त सम्यक्त्व से तो पराङ्मुख हो ही गया था किन्तु अब वाया में भी प्रवृति आत्माराम जी की अधिक हो गई जैसे कि आत्माराम जी के जीवन चरित्र के ४७ वें पत्र पर लिखा है कि तथापि

आत्मारामजी ने विचार किया कि इस समय कुछ पंजाब देश में प्रायः ढूंढकमतका ज़ोर है, और मैं अकेला शुद्ध श्रद्धान प्रगट करूंगा तो कोई भी नहीं मानेगा इस वास्ते अंदर शुद्ध श्रद्धान रख के बाह्य व्यवहार ढूंढकों का ही रख के कार्य सिद्ध करना ठीक है अवसर पर सब अच्छा हो जावेगा ! इत्यादि !

पाठकगण ! उक्त लेख से स्वयमेव ही विचार लेवें कि आत्मा राम जी माया में भी कैसे प्रवीण थे, भला शूरताका यही लक्षण है या सत्य वादियों का !

तथा श्री सूत्र कृतांग के प्रथम श्रुत स्कंध के द्वितीयाध्याय के प्रथमोद्देशक की ९वीं गाथा में लिखा है कि :—

जइवियणि गणेकिसे चरे जइवियभुजइमास मतसो जेइह मायाईमिज्जई आगतागभाय अण तसो ॥ ९ ॥

अस्यार्थः—यदि कोई नग्न भी हो जावे शरीर को कृश भी करे देश में भी विचरे मास २ के अन्तरे भी आहार करे यदि ऐसी वृत्ति युक्त होकर भी छल करे तो अनंत काल पर्यन्त गर्भादि में प्रवेश करता है !

प्रिय मित्रगण ! आत्माराम जी ने उक्त सूत्रोक्त कथन को भी विस्मृत कर दिया !

फिर श्री अमीराम जी महाराज आत्माराम जी को मिले जिन्हों ने भी आत्माराम को बहुत हित शिक्षायें दीं !

किन्तु आत्मारामजी को उन शिक्षाओं से कुछ भी लाभ न हुआ अपितु अनेक प्रकारकी बातों से आत्मारामजी ने विश्नचन्द्रादि साधुओं को भी सम्यक्त्व से पतित किया !

और श्रावक लोगों को भी जिनमत से विमुख किया किन्तु जिन पुरुषों के आचार भी शुद्ध नहीं थे उनको धर्म्म के परीक्षक ठहराया जैसे कि आत्मारामजी के जीवन चरित्र के ४८ वें पत्रोपरि लिखा है कि पट्टी वाले लाला घसीटामल्ल ने अपना संशय दूर करने के वास्ते अपने पुत्र अमीचंद को व्याकरण पढ़ाना शुरु कराया जब वो पढ़कर तैयार हो गया तब घसीटामल्ल ने कहा कि पुत्र किसीका भी पक्षपात नहीं करना जो शास्त्र में यथार्थ वर्णन होवे सो तू मुझे सुनाना तब अमीचंद ने कहा कि पिता जी जो कुछ आत्माराम जी तथा विश्न चन्द वगैरह कहते हैं सो सर्व ठीक ठीक है और पूज्य श्रीअमर सिंह जी तथा उनके पक्ष के ढूढक साधुओंका जो कुछ कथन है सो सर्व असत्य और जैन मत से विपरीत है, यह सुन कर लाला घसीटामल्ल भी ढूढक मतको छोडके शुद्ध श्रद्धान वाले होगये पूर्वोक्त अमी चन्द इस समय गुजरात मारवाड़ पंजाब वगैरह देशमें पंडित अमी चंद जी के नाम से प्रसिद्ध हैं और प्राय आत्माराम जी के सवेंग मत अंगीकार किये पीछे जितने नूतन शिष्य हुए सर्वने थोड़ा बहुतजरूर ही पंडितजी के पास विद्याभ्यास किया बल्कि अब तक कियेही जाते हैं!

प्रिय पाठकगण! यह वही पंडित जी हैं जिनका स्वरूप सत्यार्थ चन्द्रोदय भाग तीसरे के स्वप्न के बयान में लिखा गया है॥

देखिये पृष्ट ५० पर—

अपितु श्री पूज्य महाराज चौमासा के पश्चात् अमृतसर में विराजमान हो गये इधर से आत्मारामजी विश्नचन्द्रादि गण भी श्रीमहाराज के दर्शनार्थ अमृतसर में ही आगये।

तब आत्मारामादिगण श्रीपूज्य महाराज जी को बहुतही विनय करने लगे किन्तु श्री पूज्य महाराज महाभद्र पुरुष भ्रमप्रणाशी थे तिन्होंने आत्मारामजी को ही व्याख्यान करने की आज्ञा देदी अपितु सत्य कहा है किसी कवि ने, प्राण क्यों न जाव पर प्रकृति न जावे कि

इस कहावतके अनुसार आत्मारामजी व्याख्यानमें उत्सूत्र भाषण करने लगे तब श्रीपूज्य महाराज ने वा लाला सौदागरमल्ल (जो कि स्याल कोट से श्री पूज्य महाराज जी के दर्शनार्थ आये हुए थे) ॥

तिन्हों ने भी आत्मारामजी को बहुत ही हित शिक्षायें दीं और श्रीमहाराज ने आत्माराम को यह भी कहा कि—हे शिष्य यह मनुष्य भव मिलना पुनः पुन दुर्लभ है हिंसा धर्म से ही आत्मा अनादि काल से परिभ्रमण करता चला आया है एक वर्ण भी सूत्रका अन्यथाः किया जावे तो आत्मा अनंत भवों के कर्म एकत्र कर लेता है ॥

और तू क्यों अर्थो का अनर्थ करता है यदि तुझे किसी बात की शंका है तो तू निर्णय कर ले वा शास्त्र द्वितीय वार पढ़ले ॥

तब आत्माराम विश्नचन्द्रादि साधुओं ने श्री पूज्य महाराज के चरण कमल पकड़ लिये पुनः हाथ जोड़ के कहने लगे कि। हे महाराज जी हमतो आप के दास हैं जो कुछ आप की आज्ञा है सो हमारी है जो हमने सूत्र से विरुद्ध कहा है तिसका हम को यथा न्याय प्रायश्चित देवें या क्षमा कर देवें इत्यादि परम नम्रता करते हुओं को तब श्री महाराज ने यथा योग्य दंड देदिया ॥

फिर उन्हों ने अपने आप ही एक पत्र लिखकर श्री पूज्य महाराज को दे दिया ! पाठकगण पत्र इस लिये दिया सिद्ध होता है कि उन्होंने यह विचार किया होगा कि पत्र लिख कर देने से हमारी प्रतीत ठीक २ श्रीमहाराज के चित्त में बैठ जायगी क्योंकि जब प्रतीत हो जावेगी तब हमारा काम निर्विघ्नता से होवेगा अपितु पत्र भी आमाक्षित करके दिया ॥

सो भव्य जीवों को इस स्थान पर उक्त पत्र की प्रतिरूप (नकल) लिख कर दिखाते हैं ॥

जिस के पढने से पाठकों को भली भांति निश्चय होजायगा कि विश्नचन्द्रादि साधुओं की चित्त वृद्धि कैसी थी ॥

मुख से ज्ञानामृत को ग्रहण करके शेष रूपजल को छोड़ती है गुण को धारण करती है वह सुज्ञात परिषद् है। अज्ञात परिषद् ऐसी होती है जैसे प्रकृतिका मधुर अर्थात् बालावस्था करके युक्त मृग का बालक सिंह का बालक कुक्कुट का बालक जैसे मनुष्यादि का संग करता है। प्रायः वैसे ही प्रकृति-युक्त होजाता है तथा जैसे रत्न धूल में पड़ा हो तो धूल के दूर होने पर वे रत्न शुद्ध हो जाता है ऐसे ही अज्ञात परिषदा अच्छे महात्माओं का संग करने से पवित्र होजाती है॥

दुर्विदग्ध परिषद् इस प्रकार से है जैसे किसी ने गुरु के मुख से तो पदार्थों का निर्णय नहीं किया किन्तु बिना गुरु के अर्थ किये ही अपने आप सीखकर कहलाने लगा यदि किसी विद्वान् का संयोग मिलता है तो अपमान के भय से उनसे दूर ही रहता है अपितु अविद्वानों के मध्य में पंडित कहलाता है किन्तु जैसे वायु करके पूर्ण (परिपूर्ण) मशक, जल से तो हीन होता है अज्ञात जनों को जल से भरी हुई दिखती है इसी प्रकार वह पुरुष ज्ञान से तो हीन है और हठ में बंधा है नाहीं हठ को छोड़ता है उस पुरुष को सुपुरुषों की शिक्षा से कुछ भी लाभ नहीं होता इसी प्रकार आत्मारामजी को श्रीमहाराज की शिक्षाओं से अभीष्ट लाभ न हुआ किन्तु ऊपर से विनय भक्ति करता हुआ जिस का आशय कि, अप्राप्ति देखते हुए ने अमृतसर से विहार करके १९२२ का चौमासा हुशियारपुर में जा किया और श्रीपूज्य महाराजने १९२२ का चौमासा अमृतसर में ही कर दिया और उक्त वर्ष में ही सुनाम नगर के रहने वाला वैश्य तुलसीराम ने श्री महाराज के पास दीक्षा धारण करी॥

पाठकों को स्मृति होगा कि श्री महाराज ने जो आत्माराम जी को हित शिक्षायें दी थीं तिनके ही प्रयोग से आत्मारामजी ने ११ मग्घर १९२१ के चौमासे में लिखकर बूटेराय जी को भेजे क्योंकि उस काल

में बूटेराय जी का चौमासा गुजरांवाले में था सो हम भी यह प्रश्न जैसे के तैसे ही भव्यजीवों के जानने के वास्ते लिखते हैं ॥

स्वस्ती श्रीमच्छांतिनाथायनमः।

अथ प्रश्न लिखते हैं —

१—श्री सिद्धांत में मार्ग तीन कहा है उत्सरग १ अपवाद २ घोष ३ अने अष्ट दस पाप स्थानक कहे हैं सोई उत्सरंगमार्ग में अष्टदस पाप स्थानक किस रीत से वर्णन करया है अने अपवाद मार्ग में अष्ट दस पाप स्थान कैसे कथन किये हैं अने घोष मार्ग में कैसे अष्ट दस पाप स्थान का निरूपण कीया है पर्वपूर्वोक्त प्रकारेण तीनों मार्ग के ५४ पाप स्थानक हुये सो इन ५४ का न्यारा २ स्वरूप लिखणा फिर। जैसे लिखणा इन्ही ५४ मध्ये श्री भगवान् जी की कौन से पाप सेवने की है कौन से मे नही इति ॥

२—श्री प्रवचनसारोद्धारमें श्रावक के ११ सौ कौड ८४ कोड १२ लाख ८७ हजार २०२ भांगा इन का सर्व पृथक् २ स्वरूप लिखणा फिर जैसे लिखणा कौनसे भांगे प्रतिमा जी का पूजना है अनें कौनसे भांगे में यात्रा करणी कही है इति ॥

३—तपागच्छ वाले कहते हैं भगवान् जी के मिंदिर में तरुणी वेस्या का नाटक करवाणा अने खरतरागच्छ वाले निषेध करते हैं सो तुमारे तांइ कौन सी बात रुपाऐ है अने साश्त्र मध्ये तरुणी अथवा वृद्ध वा दोंअक्षा पद्द तीना मांहि किस का नाच करवाणा कह्या है इति ॥

४—और तपागछीये कहते हैं साधु से न रह्या जाय तो वेस्यादि से कुशील सेवे तो पाप नहीं और आचारंगजीमें कहा है शीघ्र में पढे तो गल पासादि करी मरे सो इनका समाधान कैसे है इति ॥

५—आगे तपागछीय कहते हैं द्रोपदी श्राविका है अने उपनियुक्ति मे लिख्या है मिथ्या दिष्टनी कही है सा इसका न्याय कैसे है ॥

६—मौर कल्प सूत्र में लिखा है २ हजार वर्ष भगवान् जी के पीछे उदय २ पूजा साधु साध्वी की होगी सो भस्म ग्रह कर उतरा कौन से सवत् में उदय २ पूजा हुई ॥

७—भोर वर्तमान में आचार्य कौनसा है उपाध्याय कौनसा है तिसका नाम लिखणा सूत्रमंथ करिसहत कौनसे देश में है ॥

८—भोर अष्टादस पाप स्थान उपर पृथग् २ सात नय का स्वरूप लिखणा प्रणाति पात उपर सात नय मृषावाद उपरि सात नय एवं सर्व उपरि उतारणी फिर लिखणा कौन सी नय के मत मे पाप अष्टादस सेवने की भज्ञा है कौन सी नय के मत में पाप सेवने का निषेध है ॥

९—फिर सात कुविसन मध्ये स्याद्वाद के भांगे भ्यारे २ वर्से वमते हैं फिर कौन से भांग मे सात कुविसन सेवने की भज्ञा है ॥

१०—सिद्धांत में मुंप पतका जो चली है जो थूक गिरने की रक्षा वास्ते है या वायु के जीवों की रक्षा वास्ते है या लिंग वास्ते है इति प्रश्न १०—

११—महा नीशीथ के पचमे नवनीत सार अध्ययन में प्रश्न स्वामि के सिष्य ४९९ वर्णन में ऐसा पाठ है चंद्रप्रभ की यात्रा में प्रश्न है तीर्थयात्रा जाणे से परणाम पर्यंत असंजम होता है इस कार्णे से तीर्थयात्रा का निषेध किया गया है महा निशीथ सूत्र३५०० प्रथम पाथमा ४२००वृहद्वाचना४५००ए नोनो मांहि लिखन देर लेना उसेका तात्पर्य लिखणा ११ प्रश्ना का जवाब टीका वा या प्रकर्ण वा सूत्र के पाठ शुद्ध लिखना मुखाग्र वार्ता न लिखणा सत्यसम् दसपत आत्माराम• १९२३–

प्रिय पाठकगणो ! यह प्रश्न आत्मारामजी ने जैसे बूटेराय जी को भेजे थे वैसे ही हमने लिख दिये हैं किन्तु यह प्रश्न अशुद्ध भाषा

में लिखे हुए हैं इन प्रश्नों के देखने से यह तो भली प्रकार विदित हो जाता है कि आत्मारामजी व्याकरण के भी अनभिज्ञ थे सो पूर्ण समालोचना ३४ के चौमास में लिखेंगे अपितु बूटेरायजी ने इन प्रश्नों का किञ्चित भी उत्तर नहीं दिया है क्योंकि बूटेराय जी कोई विद्वान् पुरुष नहीं थे नाही उन्हों ने कोई सूक्ष्म ज्ञान सीखा था शेष इन की बनाई हुई मुखपत्ती चर्चा नामक पोथी से निर्णय हो जाता है कि यह * बूटेराय जी विद्वान नहीं थे और तपगच्छ को भी अन्तःकरण से अच्छा नहीं समझते थे क्योंकि इस बातको बूटेराय जी ने अपनी बनाई पुस्तक में स्पष्ट कर दिया है ॥

---

* बूटेरायजी का जन्म-पंजाब देश में लुधियाना शहर के तरफ बलोलपुर से सात आठ कोस दक्षिण के तरफ दूलवां ग्राम में टेकसिंह जाट की कर्मी नामा स्त्री की कूख से विक्रम संवत् १८६३ में हुआ था पुण्योदय से इन्हों ने सम्वत् १८८८में श्री १००८ पूज्य मलूकचंद जी महाराज के गच्छ के श्री मुनिनागरमल्ल जी महाराज के पास दीक्षा धारण करी फिर यह चित्त की चंचलता के प्रयोग से एकले ही फिरने लगे अन्यदा समय यह पंजाब देश के स्यालकोट के जिला में पसरूर नामक नगर में चले गये सो वहां पर इन्हों ने अपने उपदेश द्वारा मूलचंद ओसवाल को वैराग्य दिया और बिनाज्ञा ही मूण्ड लिया तब मूलचंद का ताया(महत्‌पिता) सोहनेशाह स्यालकोट वाला जीवंदेशाह गुजरांवाला पसरूरवाला जो कि मूलचंद का मामा(मातुल) था तिन्हों ने गुजरांवाला में बूटेराय जी को वा मूलचंद की मुखपत्ति तार डाली फिर मुख से कहने लगे आपने किसकी आज्ञा से शिष्य किया है यदि तुम सूत्रानुसार क्रिया नहीं करसके हो तो तुम मुखपत्ति को मत रखो अर्थात् मुखोपरि मत बांधो क्योंकि साधु के यह कर्म नहीं है तब इन की श्रद्धा मुखपत्ति बांधने की उत्तर गई किन्तु जो

ढूंढेयाय की तो क्या किन्तु अन्य किसी भी सम्वेगी महाशयने इतना साहस नहीं किया है कि इन प्रश्नों का यथार्थ उत्तर दे देवें और आत्मारामजी के जीवन चरित्र के पढ़ने से यह तो स्वतः ही निश्चय होजाता है कि आत्माराम जी श्री महाराज के सन्मुख होने में असमर्थ थे जब कभी दर्शन करते थे तो श्री पूज्य महाराजजी की स्तुति करके किनारा पकड़ते थे किन्तु सत्य से पराङ्मुख होकर स्वकपोल कल्पना द्वारा लोगों को भ्रम में डालते थे और पूछने पर असत्य भाषण का प्रयोग अधिक करते थे जैसे कि आत्माराम जी के जीवन चरित्र के ५१ वें पृष्ठोपरि लिखा है कि—हुश्यारपुर में क्लेश करके गणेशीलाल बूटेराय जी के पास आकर सम्वेगी दीक्षा लेकर विचरने लगा और ठिकाने ठिकाने कहने लगा कि—आत्माराम जी के अन्दर शुद्ध सनातन जैनमत की श्रद्धा होगई है और मायस में ढूढक मत का भेष और व्यवहार रक्खा है परन्तु ढूढकमत की आस्था बिलकुल नहीं है ।

मूलचंद को लेगये थे सो मूलचंद फिर भी बूटेराय जी के पास आगया सो बूटेरायजी ने फिर भी बिन आज्ञाही मुण्डलिया फिर बूटेराय जी अपने आपको साधु कहाना नहीं चाहते थे इसलिये इन्होंने मुखपत्ति मुखोपरि से उतार डाली अपितु यह तपागच्छ को भी अंतरंग से अच्छा नहीं जानते थे जैसे कि महात्मा जी आपही बनाई मुखपत्ति चर्चा नामक पुस्तक में लिखते हैं कि—मेरी सरधा तो श्री जसोविजय जी के साथ घणी मिले हैं जिमउपाध्याय जी नाम मात्र तपेगच्छ का कहीलाता था तिम मेरे को भी नाम मात्र तपेगच्छ का कहिला जोइए मैंने उपाध्याय जी के अनुराग करके लोकव्यवहार मात्र समाचारी अंगीकार करी—राजनगर मध्ये सुभागविजयतथामणिविजय पाठेगच्छ धारी ने हम तथा मूलचंद तथा वृद्धिचंद सेठा की धर्मशाला में घने माए एवा उनके साथ मेरा संबंध थी-मेने धर्म जोरे पांचमा काल में

इसके ऐसे अनुचित समय में इस तरह के कथन से और पूर्वोक्त कारखाई अंगीकार करने से कितन ह।शहरों के लोगों को सनातन जैनमत की शुद्ध श्रद्धा प्राप्त होनी बंद होगई क्योंकि बहुत अनजान लोगों ने बिना ही समझे हठ कदाग्रह करके आत्माराम जी वगैरह के पास आना जाना बंद कर दिया इत्यादि पाठकगण ! क्या विद्वानों का यही लक्षण है कि सदैवकाल ही स्वइच्छानुसार वर्ताव करना अब कभी स्वकृत प्रगट होजाये तो शोक करना वाह !!! जिस जीव के पूर्वोक्त लक्षण होवें उस को सत्य भला मानना क्योंकि

अम लिया विरागपिण आश्यागुरु सञोगन मिलया तो पाप का वधा इत्यादि कथन से सिद्ध है कि—बूटेराय जी तपगच्छ का अन्त. करण से अच्छा भी नहीं जानते थे किन्तु नाम ही तपगच्छ का रखते थे और जिसके पास तपगच्छ धारण किया था उनका स्वरूप बूटेराय जी मुखपत्ति चर्चा नामक पोथी के ५८ वें पृष्टोपरि लिखते हैं कि बाइदिक्षा लेने वाली थी ते साधा को रूपइये चढाय क पूजा करने लगी प्रथम तो रूपइये चढाइने रत्न विजयजी की पूजा करी फिर मणिविजयजीने आगे रुपैये चढाइने पूजा करी पीछे मेरेको रूपइये चढावने लगो तिवारे नित विजयजो बोल्या हमारे आगे रुपये चढावने का कुछ काम नहीं हमारे रुपयां की खप न थी इम कहीने मने कर दीनो तिवारे हम सबे तहां ते ऊठ के चले आये तिनोंने बाई कू दिक्षा देके शहर में चले गये इत्यादि इस प्रकार चतुर्थ स्तुति निर्णय शंको द्धार के पृष्ट २८ वा २९ वें पर भी लिखा है ॥

पाठकगण देखिये अब मणि विजयादि संवेगी द्रव्य रखते थे और बूटेराय जी अपने आप को साधु ही नहीं मानते थे ना ही बूटेराय जी को गुरु का सयोग मिला नाही तपागच्छ को अन्तःकरण से भला समझते थे—तो फिर भला तपागच्छिये किस तरह कह सके हैं कि हमारी परम्पराय शुद्ध संयमधारियों की है ॥

अब आत्माराम जी सत्य में दृढ़ न्याय पक्षी थे तो इतना प्रतिहार क्यों करते थे जो कि उनके जीवन चरित्र से सिद्ध है !

तब श्रीपूज्य महाराज ने अमृतसर से विहार करके भव्य जीवों के हृदय सत्यतत्त्व रूपी ज्योति से प्रकाश करते हुए सम्वत् १९३५ चौमासा फीरोज़पुर में ही करदिया और पूर्वोक्त सम्वत् भर में ही अमृतसर में तीन दीक्षायें हुईं !

जैसे कि—लाला अमीरचन्द, निधाममल्ल, निहालचन्द यह तीन ही गृहस्थ रावलपिंडी के निवासी थे। और इस ही वर्ष में लाला जीवनमल्ल जी दिल्ली के निवासी (वृद्ध आलोयणा) भाषा ग्रन्थ के कर्त्ता जोकि वैराग्य मुद्रा थे जिन को श्रीमन् आचार्य्य रामबक्ष जी महाराज ने श्रुतविद्या का दान दिया था वह भी आत्माराम जी को मिले जिन्हों ने भी बहुत ही हित शिक्षायें आत्माराम जी को दी और कई प्रश्न भी पूछे जैसे कि—

लाला जी ने प्रश्न किया कि—महात्मा जी सूत्रों में द्वि प्रकार से धर्म प्रतिपादन किया गया है जैसे कि—मुनिधर्म १ गृहस्थ धर्म २ सो प्रतिमा जी का पूजन किस सूत्र में कहा गया है। क्योंकि जैसे उक्त द्वि प्रकार के धर्म का सविस्तार उववाई आदि सूत्रों में अर्हन्देव ने किया है इसी प्रकार किस सूत्र में अर्हन्देव ने मन्दिर के बनाने की विधि प्रतिष्ठा की विधि बिंब को मूलनायक बनाना इत्यादि विधि कथन करी है और ऐसा कथन करने वाला कौनसा सूत्र है या सूत्र का पाठ है !

और जीव को अजीव मानना अजीव को जीव मानना यह मिथ्यात्व है या नहीं क्योंकि अजीव में जीव सञ्ज्ञा धारण करनी यही परम मिथ्यात्व है फिर किस सूत्र में श्री गौतम स्वामी ने भगवन् से प्रश्न किया है कि प्रतिमा जी के पूजन से जीव मोक्षमें चला जाता है।

फिर धर्म हिंसा में है या दया में है और भगवान् की आज्ञा अहिंसा में है या हिंसा में है ?

यदि कहोगे सूत्रपाठ व्यवच्छेद होगये हैं ? तो हम कहते हैं जो *अन्यधर्म विषय अनेक ही पाठ हैं वह व्यवच्छेद क्योंना होगये भला कोई बुद्धिमान यह बात मान सका है कि सिद्धान्त के नियम तो व्यवच्छेद न होवें और नित्य नियम व्यवच्छेद होजाये सो महात्माजी उक्त बातों का शान्ति पूर्वक मुझे उत्तर दीजिये 'अब' लाला जी ने इस प्रकार आत्माराम जी को अनेक प्रश्न पूछे तब आत्माराम जी ने एक ही मौन धारण कर लिया सत्य है उत्तर देते क्या सूत्रों में उक्त विषय का कोई भी कथन नहीं है । इसी वास्ते आत्माराम जी के जीवन चरित्र में ५२ पृष्टोपर लिखा है कि—आत्माराम जी ने लाला जीतमल्ल को अयोग्य समझ के उपेक्षा करली इत्यादि वाहजी वाह जिस के प्रश्न का उत्तर न आवे वही धर्म के अयोग्य-सो इसी वास्ते लाला जी को हठधर्मी वा धर्म के अयोग्य लिखा है पाठकगण ! यह आत्माराम जी को विद्वत्ता है किन्तु श्री महाराज ने फीरोजपुर के चामासा के पश्चात् अनेक ग्राम नगरों में धर्मोपदेश देकर १९२५ का चौमासा गुरु के जण्डियाला में किया-सो उक्त चौमासे में श्रावक लोगों को ज्ञान का परम लाभ हुआ कई भव्य जीव प्रश्न-पूछ के निस्स...

---

* प्रश्न व्याकरण सूत्र वा उपासक दशांग सूत्र आवश्यकादि अनेक सूत्रों में मुनिधर्म वा गृहस्थ धर्म का पूर्ण स्वरूप प्रतिपादन किया गया है इतना ही नहीं किन्तु श्री अनुयोगद्वारजी सूत्र में आवश्यकादि अधिकार में परमत के अनेक मंदिरों के विषय में पाठ हैं । अपितु श्री चतुर्संघ को दो समय नित्यप्रति षडावश्यक करने की ही आज्ञा लिखी है इसीलिये जो कहता है कि मंदिर विषय के पाठ व्यवच्छेद होगये हैं सो निकेवल स्वकपोल कल्पित कथन है ।

म्बेह हुए पुन' उक्त वर्ष में रक्खाराम ओसवाल स्यालकोट का वसने वाला तिस को भी श्री महाराज ने दीक्षित किया।

अपितु जब १९२८ सम्वत् में श्रीपूज्य महाराज ने विश्नचंद्रादि साधुओं को अपने गच्छ से बाह्य किया था तब रक्खाराम को भी तिन के ही साथ गच्छ से भिन्न किया था किन्तु यह भिन्न होता ही यति होगया था॥

सम्वत् १९३० का चौमासा भोगणावच्छेदिक श्री १००८ स्वामी गणपतिराय जी महाराज स्वामे ७ का चौमासा स्यालकोट में था पुन मैं भी श्री महाराज जी के पास ही था तब उस काल में यह रक्खाराम यज्य भी स्यालकोट में ही स्थित था सो मैंने एक दिन रक्खा रामजी से आत्मारामजी वा विश्नचंद्रादि के अलग होने का कारण पूछा तब रक्खाराम जी ने अतीव घृणा दायक आत्माराम जी का विश्नचन्द्रादि का आचार सुनाया अपितु तिस के लिखने की हमरा किञ्चित् भी आवश्यकता नहीं है। क्योंकि हमारा धर्म अहिंसा है जिस करके किसी भी क्षुद्र आत्माओं को दुःख प्राप्त होवे यह लेख हम नहीं लिखेंगे नाही किसी का मर्मकारी शब्द वा काम प्रगट करेंगे पर यह तो पाठकगण ज्ञात हो गये होंगे कि जब आत्मारामजी से अर्हन् भाषित सुन्दर क्रिया न पल सकी तब ही आत्मारामजी श्वेताम्बर मत से पृथक् हुए क्योंकि निर्ग्रंथ वृत्ति का पालना अतीव कठिन है और इसी वास्ते श्वेताम्बर मुनियों को अनुचित लिखने लगे-जैसे कि —

जन्म चरित्र के पृष्ट २३ पर लिखा है कि —

लुहारा गाम में रात के समय फिर जीवनमल्ल जी रो कर कहने लगे तथा दिल्ली वाले श्रावक बहुत खुश हुए-चर्चा करने में अहारा हारगये इत्यादि-मिथ्यरा। यह मर्मभेदी-आत्माराम जी के-अनुचित हैं क्योंकि आत्माराम जी स्वयम् यत्न करते थे जो कि इन-

के लिखे पत्र से सिद्ध है भव्यगण को उक्त पत्र की नकल आगे लिख कर दिखलावेंगे अपितु जब आत्माराम जी का व्यवहार सूत्रा नुकूल न रहा तब ही स्वामी जीवनराम जी महाराज ने आत्माराम जी को स्वगच्छ से बाह्य कर दिया तब ही आत्माराम जी रुदन करने लगे तो स्वामी जी ने कृपा करी कि अब रोने से क्या बनता है ? और दिल्ली की यह बात है कि जब दिल्ली में आत्माराम जी गये तब ही लाला जीतमल्लादि श्रावकों की भेंट हुई। तब वहां से विहार ही करना सूझा क्योंकि ला० जीतमल्ल से प्रथम एकबार वार्तालाप हो चुका था, जिस कारण से ही आत्माराम जी ने शीघ्र विहारकर दिया ! और श्रीमहाराजने भी चौमासा के पश्चात् कपूरथले की ओर विहार कर दिया फिर जालन्धर, फगवाड़ा, जेजों, रांवा इत्यादि नगरों में परोपकार कर के १९२६ का चौमासा हुशियारपुर में किया इस चौमासा में जिन भाईयों को मिथ्या भ्रम हो रहा था जिस का नाश किया अर्थात भ्रमोच्छेदन किया किन्तु जो हठाग्रही थे तिन को प्रश्नोत्तर करके निरुत्तर किया क्योंकि श्रीमहाराज स्वमतपरमत के परम ज्ञाता थे। इस चौमासे के पश्चात बहुत से भव्यजीवों को सम्यक्त्व का बोध देकर १९२७ का चौमासा जालन्धर नगर में कर दिया सो चौमासा में परमोद्योत हुआ।

फिर श्रीमहाराज चौमासे के पश्चात् विचरते हुए जगरावां शहर में पधार गये फिर अन्यदा समय जगरावां से विहार कर के श्रीमहाराज किशनपुरे को जारहे थे दैवयोग से आत्माराम जी मार्ग में ही मिलगये पुनः श्रीमहाराज के चरण कमल पकड़ लिये मुख से कहने लगे कि—श्रीपूज्य महाराज जी मैं तो आप का दास हुं आपने मेरे ऊपर इतना उपकार किया है कि जो ऋण मैं भव भव में नहीं देसक्ता हुं क्योंकि आपने मेरे गुरु महाराज को दीक्षित किया और मुझे ज्ञान पढ़ाया।

(1) तब श्रीमहाराज कहने लगे कि हे आत्मारामजी तू मिथ्यात्व में प्रवेश करके क्यों जन्म को बिगाड़ता है क्या तू ने उत्सूत्र भाषी के फल को नहीं सुना है कि जो अनन्तकाल पर्यन्त उत्सूत्र के भाषी को सम्यक्त्व की भी प्राप्ति नहीं होती ।

(2) और जो तेरे मन में शङ्कायें हैं तो तू निर्णय करले क्योंकि सूत्रों में यह पुनः २ कहा है कि जो अजीव को जीव मानता है वही मिथ्या दृष्टि है सो जब तू एक पाषाण के खंड को अर्हन् मानता है तो भला फिर तू मिथ्यात्व मार्ग से कैसे विमुक्त हो सक्ता है ।

(3) और फिर तू लोगों के पास कहता है कि पूज्य जी मेरी रोटी बंद करते हैं ।

(4) प्रियवर ! हमको अंतराय लेने की क्या आवश्यकता है किन्तु जैसे तू कर्म करता है इन कर्मों से तो यही सिद्ध होता है तुझ को मनुष्य भव पाना ही दुर्लभ हो जायगा तात्पर्य यह है कि तू शंकाओं को प्रकाश कर और हम उन शङ्काओं का समाधान करेंगे ।

(5) अपितु वक्रता से वर्त्ताव मत कर इत्यादि जब श्रीमहाराज कृपा कर चुके तब आत्मारामजी कुछ भी उत्तर न देसके अपितु नम्रता करके अपने मार्ग चलते भये ।

सत्य है हठ धर्मी पुरुष को भी नदी का ज्ञान है क्योंकि अक्षसुता से वर्त्ताव करना आत्मारामजी के जीवन चरित्र से ही सिद्ध है देखिये जीवन चरित्र पृष्ट ५६—जब आत्माराम जी अगरांवा में विश्नचंद्रादि साधुओं को मिले तब विश्नचंद्रजी ने कहाकि महाराज जी मन से तो हम सदाही आप के साथ मिले हुवे हैं, क्योंकि आपने शुद्ध सनातन जैनमत का यथार्थ स्वरूप दिखलाके हमारे ऊपर जो उपकार किया है हम जिसका बदला भव भव में भी नहीं देसक्ते हैं, परंतु क्या करें अपना मतलब सिद्ध करने के वास्ते ऊपर ऊपर से जुदाई रखते हैं यदि इतनी भी जुदाई न रखें तो पूज्य जी नाराज हो जाते हैं और

उनके नाराज होने से अपना कार्य सिद्ध होना मुश्किल है इत्यादि प्रिय पाठकगण ! उक्त लख को स्वय पढकर विचारें कि आत्मारामजो या विश्नचन्द्रादि साधुओं का अन्तरग था यारा विचार कैसा विचार नीच है और फिर विश्नचन्द्रादि साधु अगराथा से विहार करके अनुक्रमें अम्बाला छावनी में पहुंचे फिर अपने हाथों से एक (चिट्ठी) पत्र लिख कर अम्बाला छावनी से अम्बाला शहर में माफत लाला मनाशियां मल्ल, मालमल्ल की श्रीपूज्य महाराज जो को भेजा जाकि १९२८ ज्येष्ठ कृष्ण १५ का लिखा हुआ सो पाठकों के जानने वास्ते हम उस पत्र की नकल यहां उद्धृत करते हैं —

श्री वीतरागायनम

स्वस्ति श्रीमत शुभस्थान विराजमान श्री श्री श्री परम पुज्य परम दयालू परम कृपालू परम स्वेगी चारित्र निधी दया के सागर विमा के भडार सूरवीर धीर गभीर अनेक गुणधारी विराजमान ॥

कागज थोडा गुनघना, मोपे कह्या न जाय ।
सागर में तो जल घना, गागर म न समाय ॥

श्री श्री श्री परम पुज्य जी महाराज हमारे सिर के छत्र समान मस्तक के मुकट सामान अनेक गुनधरी विराजमान स्वामी जी महा राज पुयचदजी महाराज के चरणा विच वदणा नमस्कार वाचना श्री स्वामी जी विश्नचदजी महाराज चरणा चाकर गुलाम हुकमे की वदना नमस्कार बहुत २ करके वचनी चरणा विच सासलगा हुथा वांचना ठाने ७ की जुदी २ वदना नमस्कार बहुत २ करके वाचनी सबका ध्यान आपके चरणा विच लगरहा हूयगा स्वामी विश्नचदजी का चरणा के गुलाम का हुकमे का ध्यान हरदम आपके चरणा विच लगा रहेदा हैगा आपने हमारी तरफ से ति किस बात की चिंता सोच करना नहीं हम को तो आपके चरणा का बडा अधार हूयगा घन

उदित होगा जिस दिन आपका दर्शन होवेगा हमारे को बहुत मवल्लब लग रही हएगो श्री श्री श्री १००८ श्री श्री श्री पुज्य जी महाराज के चरणों विच विद्गलचद की हुकमचद को वदना नमस्कार तिखुतो के पाठ से १००८ घार पुनर २ वाचणी सुपसाता बहुत २ करक पुछणी आगे मेरी तथा हुकमचद की मरजी आपके चरणो में चौमास करने को हेगी सा चदर क्षेम होवे तो हुकमचद कहे के मेरा चित पूज्य जी महाराज के पास चौमासा करण का है सो आप जोण से स्थान सहर विच विराजमान होवेगे सो हमारे उपर दया भाव करके महर दिष्टी करके इस लिखाये देणी हम इस ठीकाणे हैं हमारे चित की वृति आप के चरणा म बहु रहे है अब इस बात में चित कुछ फरक नहीं समझणा अबपसीतमेर तथा हुकमचद भाइहेंगी पुज्यजी महाराज के चरण विच चतुरमासा कर के रुणा करणी आप खातर जमा रखणी आपके तावेदार हैं चरणो के चाकर है इसीतरा जामना घणु बधा लीवु श्री केवली महाराज जानते है हमारा तो आपने बडा उपकार किया है सो हमारे मन में बदि हैं आप के पास रहे २ शास्त्र विचारे सुमध्यान आप का धर्मतो हमारी मनसा पुरी हुवे सो अबके तो तुरका मवमा है फेर मेरा फरमायोगे *उसतरा होयेगी इसम फरक नहीं जामणा यह बात सतसरम से लिखो है आप बडे गभीर हो उत्तम हो आपके गुणा का पार नहीं है सो आप करके साता की खबर जरूर भेजणी कृपा करके जरूर जरूर आपनि सुखसाता की खबर जल्दी कृपा कर के भाव्यों सेता लखा देनी हमारा ध्यान बहुत लगरया हएगा—इति —और इस पत्र के द्वितीय पृष्टा परि वैदय लोगों का जो (बही)

---

*शात हैं यह पत्र अतिजीण होने से इस स्थान के पर्व ही उड गये ह पत्र भी छिन्न भिन्न हो रहा है किन्तु इस स्थान में ऐसे शब्द प्रतीत होते हैं कि मेनु आप जो आज्ञा भेजोगे तथा जिस तरा फुरमा वोगे-इत्यादि-

नित्यम् पत्रादि में हिंदी लिखने में आती है यह लिखी हुई है उस में लिखा है कि—अम्बाला छावनी का पता और पत्र भेजा लाला मस्तानियामल्ल भाळूमल्ल की माफत श्री पूज्य महाराज को भजा १९२८ ज्येष्ट कृष्ण १४–इत्यादि–और आत्मारामजी के जीवन चरित्र के ५७ वें पृष्टो पर लिखा है कि–कितने दिनों पीछे अमरसिंहजी की तरफ से पत्र ऊपर पत्र आने से लाचार हो कर श्रीविश्नचंदजी लुधी आने से विहार करके अम्बाला शहर में जा चौमासा रहे इत्यादि— प्रिय पाठक वृन्द उक्त पत्र विश्नचंद वा हुकमचन्द का लिखा हुआ है पत्र में दानों प्रकार के वर्ण विद्यामान हैं तथा दोनों ने ही पत्र को वर्णा से अंकित किया है! अपितु पत्र अशुद्धी बहुत हो है सो उक्त पत्र के पढ़ने से निश्चय हो जाता है कि यह महात्मा जी व्याकरण के अप ठत थे अपितु संवेगी लोक इनको विद्या की महान् स्तुति करते हैं सो ठीक है—यथा—

प्रिय मित्रवरो इस सारे पत्र की सर्व ५० पंक्तिये हैं प्रत्येक पंक्ति में अशुद्धियों की भरमार है यथा प्रथम पंक्ति में तीन अशुद्धिये हैं यथा– मत् के स्थानो परिमत ऐसे लिखा है वा शुभ स्थान के स्थान में सुभ स्थान लिखते हैं अथवा पूज्य शब्द का पुज्य लिखा है तथा पंक्ति २ कृपालु शब्द को कृपालु निधि शब्द को निधी प० ३ क्षमाका, पिना, प० ४ कागज़ को कागद मे का मे पूज्य शब्द को पुज्य महाराज शब्द को महांराज ७–८–९–१०—इत्यादि पंक्तियों में स्यमान, मुगट, पुष पद गमस्कार, हपगा, हेगी, इत्यादि अनेक प्रकार की अशुद्धिये हैं प्रगट होता है कि महात्माजी संस्कृत हिंदी वा उर्दू भाषा के विद्वान् बनने की इच्छा से लिखना चाहते थे परन्तु उक्त भाषाओं को हो उपालम्भ है जो बिना पढे महात्माजी के हृदय में प्रवेश न कर गई अर्थात पत्र अशुद्धियों से अङ्कित कर दिया है और पद योजना का तो कहना हो क्या है धन्य है संवेगमत के उपाध्यायजी का किन्तु आचार्यजी की विद्या का स्वरूप अध्यजन ३४ के पर्व के चौमासे में दर्शन करेंगे!

उष्ट्राणा विवाहहेतु रासभास्तत्रगायकाः।
परस्परप्रशसन्ति अहोरूप महोध्वनि॥

इसी ही न्याय से लोक महात्मा जी की स्तुति करते हैं। इस्यर्थ पुन आत्माराम जी के जीवन चरित्र में लिखा है कि पूज्य जी के पारम्पाग पत्र आने से लाचार होकर विदनचन्द्रादि साधु एधिमाता से विहार करके अम्बाला चौमासा जा रहे इत्यादि पाठक गण! यह कैसी असंगत बात है कि श्रीपूज्य, महाराज के पत्रों से अम्बाला में चौमासा हुआ क्या विदनचन्द जी के पत्र से सिद्ध होसक्ता है कि श्री महाराज विदनचन्द का पत्र भजने थे कदापि नहीं! सो अब विदनचन्द जी के लिखे हुए पत्र का भी विचार लीजिये कि --

यदि उक्त पत्र विदनचन्द जी ने अन्तःकरण से ही लिखा होवेगा और पत्र के लिखे अनुसार ही भाव होगा तब जो आत्माराम जी के जीवनचरित्र में लिखा है कि--

जगराओं में आत्माराम जी को विदनचंद्रादि साधु मिले तब विदनचन्द्र जी ने कहा आत्मारामजी को हम तो अंदर से सदा ही आप से मिले हुए हैं बाहर से जुदाई रखते हैं इत्यादि।

यदि यह कथन विदनचन्द्र जी का ही है तब विदनचन्द्र जी ने आत्माराम जी के ही साथ प्रपञ्च किया!

अथवा विदनचन्द्र जी ने ऐसा न कहा हो तब जीवनचरित्र के लिखने वाले ने मनकल्पित लिखा है! तथा अन्तःकरण से अथवा आत्माराम जी के साथ ही मिले हुए थे तब अम्बाला छावनी से पत्र लिख कर श्रीपूज्य महाराज की सेवा में भेजने की क्या आवश्यकता थी! सो हे साधुगण!

जो पुरुष माया में ही प्रवीण हैं क्या वे धर्म के परीक्षक होसक्ते हैं कदापि नहीं!

सो इत्यादि कुत्सित विधि विद्दनचन्द्र जी ने आत्माराम जी से सीखी क्योंकि आत्माराम जी ने विद्दनचन्द्रादि साधुओं को भी अपने ही समान कर लिया !

अपितु जब श्रीपूज्य महाराज जी को विद्दनचन्द्र जी का लिखा हुआ पत्र मिला तब श्रीपूज्य महाराज ने द्रव्य क्षेत्र कालभाव को देख कर उक्त पत्र का किञ्चित भी उत्तर नहीं दिया पुनः श्रीमहाराज ने १९२८ का चौमासा जीरे नगर में कर दिया ।

चतुर्मास में बहुत से भव्यजनों के संशय छेदन किये, अपितु बहुल संसारियों के लिये क्या उपाय बन सका है जब के गोशालाजी वा जमालीजी को भगवान भी शिक्षा करने में असमर्थ होगये !

सो चौमासा में बहुत ही धर्मोद्यत हुआ फिर श्रीपूज्य महाराज जी चौमासा के पश्चात् अनुक्रम से विहार करते हुए मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष में लाला सावसिंह ओसवाल जौहरी की बैठक में जगरावां शहर में विराजमान होगये । और श्रीस्वामी विलासराय जी महाराज श्री स्वामी पूज्य रामबक्षजी महाराज श्री स्वामी पूज्य मोतीराम जी महाराज श्री स्वामी हीरालाल जी महाराज श्री स्वामी पं॰ धर्मचन्द्रजी महाराज श्रीस्वामी तपस्वी रामचन्द्र जी महाराज इत्यादि मुनि भी महाराजके संग थे और श्रीस्वामी रतनचन्द्रजी महाराज स्वामी ज्वाहरलाल जी श्री स्वामी हीरालाल जी महाराज इत्यादि पांच साधु मारवाड़ी भी श्री पूज्य महाराज जी के दर्शनार्थ जगरावां शहर में ही आये हुए थे । और तब ही विद्दनचन्द्रादि साधु भी अम्बाला शहरसे विहार करके लुधियाने में आगये थे ।

जब इन्हों ने सुना कि जगरावां शहर में श्रीपूज्य महाराज वा अन्य बहुत से साधु एकत्र हुए हैं तब इन के चित्त में यह निश्चय हुआ कि जो हम सूत्रों से विरुद्धाचर्ण करते हैं सो श्रीपूज्य महाराज भली प्रकार से जान गये हैं अब हम को गच्छ से बाह्य करने के लिये ही एकत्र हुए हैं ॥

सत्य हैं प्रतिहारक पुरुष अपनीमाया को स्मृति करके आप ही भय पाता है,' इसलिये जो हमारे पास सूत्र हैं वह सब भाई छीन लेंगे इस वास्ते पुस्तकादि उपकरण लुधियाना में ही रख कर फिर भी पूज्य महाराज के दर्शन करें तब सर्व पुस्तकादि लुधियाना में ही रख कर विहार करके अगरावां शहर में ही श्रीपूज्य महाराज के दर्शन आ किये ।

फिर नम्रतादि करने लगे तब श्रीपूज्य महाराजजी ने सब साधु एकत्र करके कहा कि मैं इन विहनचन्द्रादि पूज्य साधुओं का अपने गच्छ से पृथक् करता हूं क्योंकि इन्हों का न ता चारित्र ही शुद्ध रहा है नाही दर्शन शुद्ध है इसी वास्ते यह विचारे छल करते हैं अपने दोष ढांपने के लिये असत्य बोलते हैं तब भी विलासरायजी महाराजने वा मारवाड़ी मुनियों ने कहा कि सड़े हुए ताम्बूल (पान)का रखना किसी प्रकार भी अच्छा नहीं होता इसी प्रकार यह विहनचन्द्रादि भी असत्य बोलते हैं वा छल करते हैं और नाही इन्हों का चारित्र शुद्ध है नाहीं दर्शन सो इसी वास्ते इन को गच्छ से शीघ्र ही पृथक् करना चाहिये ॥

तब विहनचन्द्रादि भी बहुत ही नम्रता करने लगे और अर्हन् सिद्धों की शपथें खाने लगे पुनः रुदन करते हुए गद्गद वाणी बोलने लगे, और पुनः पुनः यह कहते हुए रुदन करते थे हे श्रीपूज्य महाराजजी अब हमारा अपराध क्षमा करो फिर जो कुछ आप दण्ड देंगे सोई हम मानेंगे हम भूल गये हैं आप अब अवश्य ही हमारा अपराध क्षमा करें ॥

तब श्री पूज्य महाराज ने कृपा करी कि तुम बड़े ही प्रपञ्ची हो क्योंकि तुम लुधियाना में क्यों पुस्तकादि छोड़ कर आये हो इस लिये सिद्ध होता है कि तुम्हारे मन में छल है अब मैं तुम को कदापि

गच्छ में नहीं रखूंगा। क्योंकि तुम *असत्य ही लिखते हो। असत्यही बोलते हो। उस काल में ही लाला टोकमराय, लाला राधामल्ल, अंगोरीमल्ल, गणपतिराय, शंकरदास, छज्जुमल्ल घोसुमल्ल इत्यादि भाई भी स्थित थे। सो उन्हों ने भी श्रीपूज्य महाराजजी से बहुतही विज्ञप्ति करी कि श्री पूज्य महाराज जी अब इन पर क्षमा करो क्योंकि यह अब भूल गये हैं। तब श्री पूज्य महाराज जी ने कृपा करी कि हे भाइयो यह विल्लघचन्द्रादि महान् छल कर रहे हैं और इन का चारित्र या दर्शन कलंकित होगया है और भी इन का सर्व आचार श्रीपूज्य महाराज ने अब भाईयों को सुनाया तब सर्व भाई कहने लगे कि हे महाराजजी अब इन को नितान्त मत रखो उसी ही समय श्री महाराज ने विल्लघचन्द्रादि गण को अपने गच्छ से बाह्य करदिया तब यह लाला सावसिंह की बैठक से नीचे उतार गये जिनके नाम यह हैं। यथा :—

विल्लघचन्द्र जी १, हुकमचन्द्र जी २ निहालचन्द्रजी३, निधानमल्ल जी ४,सलामतरायजी ५ तुलसीरामजी ६ कनैयामल्लजी ७,चम्पालाल जी ८, कल्याणचन्द्रजी ९, धाकमचन्द्रजी १०, गुरदित्तामल्ल जी, ११, रलारामजी १२,जब यह अगरांवा से दो वा तीनकोस के अनुमान चले गये तब इनके मनमें न जाने क्या बात आई फिर यह अगरांवामें ही आ गये पुन श्रीमहाराज जी से वदन करते हुए विज्ञप्ति करने लगे कि आप हमारा अपराध क्षमा करें और जो इच्छा हो वही प्रायश्चित दे देवें हम आपके दास हैं अपितु यह कथन भी इनका छल ही का था क्योंकि इनकी इच्छा और भी कतिपय भव्य जीवों को सन्मार्ग से

---

* बहुत से पत्र विल्लघचन्द्रादि साधुओं ने अर्हन की शपथें खा कर श्रीमहाराज को लिखकर दिये थे।

शोक है प्रमाद से वह पत्र छिन्न भिन्न होगये।

पराङ्मुख करने की थी। किन्तु श्रीपूज्य महाराज जी ने इनके उक्त कथन को फिर भी न स्वीकार किया और श्रीमहाराज ने फिर भी यही कृपा की कि हम को तुम्हारे वचनों की प्रतीति नहीं है और असत्यवादी दीक्षा के भी अयोग्य होते हैं सो हमने सूत्रानुसार काम किया है अब श्रीपूज्य महाराज ने इनको गच्छ में रखना नाही स्वीकार किया तब यह निराश होकर लुधियाना से ही भागये। तिस काल में आत्माराम जी जालन्धर में थे तब विश्नचन्द्रादि साधु आत्मारामजी को जालन्धर में ही जा मिले फिर इन्होंने सोचा कि उदर भरने के लिये कोई उपाय करना चाहिये जो कि आत्मारामजी के ही जीवन चरित्र से सिद्ध है जैसे कि जीवन चरित्र के पृष्ठ ५८ में पर आत्माराम जी कहते हैं कि यदि तुम को इस देश में विचरना होवे तो जोर लगा कर शहरों शहर श्रावक और ग्रामों ग्राम फिर के शुद्ध श्रद्धान का उपदेश करके श्रावक समुदाय बनाओ क्योंकि बिना श्रावक समुदाय के इस पञ्चमकाल में संयम का पालना कठिन है इत्यादि फिर य लिखते हैं कि, -

प्रायः सबही क्षेत्रों में पैर रखने जितना ठिकाना हमने कर रखा है इस देश को हम कदापि न छोड़ेंगे इत्यादि कथन से उदर पोषण उपाय विचार कर लिया किन्तु जब से श्री पूज्य महाराज ने इनको अपने गच्छ से बाहर किया तत् पश्चात् प्रायः कोई भी मनुष्य इनके असत्योपदेश में नहीं फसा किन्तु जो प्रथम ही अपने अनुकूल कर रखे थे वह भी किञ्चित् सन्मार्ग में आगये। अपितु जालन्धर में विश्नचन्द्रादि मुखपत्तिका मिथ्याचार विचारने वास्ते उद्यत हुए॥

फिर यह जीव न पहुँच गये और सौमासा भी वहीं ही किया किन्तु जब लाला गङ्गशाह भ रशाह, जीवनदास, गणेशदास, निहालशाह, मोतेशाह इत्यादि भाईयों के सन्मुख निज आशय प्रकाशित करने लगे तब किसी ने भी इनके असत्योपदेश को न स्वीकार किया।

अपितु लाला रणजीतसिंह ने अंबू में पधार कर विश्नचंद्रादि के साथ प्रश्नोत्तर कर के तिन को निरुत्तर किया सो उस काल का स्वरूप विश्नचंद जी ही जानते थे इस ही प्रकार प्रायः अन्य नगरों में भी इनके साथ यही वर्ताव होता रहा। और श्रीपूज्य महाराज के गच्छ में रहने वाले श्री वीरशासन के मुनि इन की स्वकपोल कल्पित बातों को असत्य करके दिखाने लगे थे*साध्वियें भी यथाशक्ति इनके असत्योपदेश की सूत्रों द्वारा समालोचना करके भव्यजीवों को दिखाने लगीं अपितु श्री महाराज ने १९२९ का चौमासा पटियाला नगर में ही कर दिया।

तब ही लाला वस्तीराम नामे वाल ला० शिशुराम (श्रीकृष्णदास) पटियाले वाले इत्यादि बहुनसे सद्गृहस्थोंने स्व सम्मत्यनुकूल पंडित शंभूनाथ को एक पत्र देकर प्रायः पजाब देश में यह प्रगट कर दिया कि यह विश्नचंद्रादि वेषधारी जिनाज्ञा से विरुद्ध उपदेश करते हैं और विरुद्ध ही इन का चारित्र होरहा है सो यदि यह किसी भी भव्य को मिथ्याउपदेश देवें तो वह उपदेश मानने योग्य नहीं है तथा किसी के मन में कोई भी शंका हो वह सूत्रों द्वारा निर्णय कर लेवे और इन का आचार व्यवहार जैन मतानुकूल नहीं रहा है अब ऐसे कथन को पण्डित जी ने नगर नगर ग्राम ग्राम में प्रसिद्ध कर दिया तब लोगों ने उक्त ब्राह्मण को यह उत्तर दिया कि पंडित जी हमने तो प्रथम ही इस बात को विचारा हुआ है सो कइयों ने पत्रोपरि लिखितादि भी कर दी ॥

---

* श्रीमती आर्या पार्वती जी ने भी संवेगियों को बहुत ही सुन्दर उत्तर दिये हैं कई स्थान पर इन को पराजय भी किया है ज्ञानदीपिकादि कई सुन्दर पुस्तक भी लिखे हैं देखो इन का जीवन चरित्र उर्दू भाषा में भी छपा हुआ है ॥

अब पाठकगण विचारें कि यदि आत्माराम जी का था किन चक्रादि द्रव्य लिङ्गियों का सत्योपदेश था फिर क्यों न किसी को सत्य पथ पर लाये किन्तु जिन को प्रथम ही अपने मतानुसार कर रक्खा था उनको हठ त्यागना दुष्कर होगया । अब बतलाइये आत्मा राम जी ने चार वर्णों में से किस को जैन धर्मी बनाया ?

फिर श्रीपूज्य महाराज चौमासा के पश्चात् देश में अपने सत्यो पदेश द्वारा भ्रमोच्छेदन करते हुए विचरने लगे । और इसी प्रकार श्री स्वामी जीवनराम जी महाराज ने भी * धूड़कड़ नामक ग्राम में आत्माराम जी को अपने गच्छ से पृथक् किया जब आत्माराम जी बहुत ही रुदन करने लगे तब श्री जीवनरामजी महाराज ने कृपा करी कि अब क्यों रुदना रोता है तुमको तो अब मन में रुदन करना पड़ेगा अपितु मैं तुम को अब गच्छ में कदापि न रक्खूंगा। तब आत्माराम जी ने स्वाप्रकृत्यानुकूल यह काम किया कि एक पत्र लिखकर श्री स्वामी जीवनराम जी महाराज को दे दिया । और साथ ही यह कह दिया कि यदि कोई आप से पूछे कि आत्माराम को आपने क्यों गच्छ से बाहर कर दिया तब आपने यह मेरा लिखा हुआ पत्र दिखला देना । स्वामी जी महाराज महान् भद्र पुरुष थे उन्हों ने इस बात को स्वीकार करके आत्मारामजी से पत्र ले लिया अब हम भी उस पत्र को नकल भव्य जीवों के दिखाने वास्ते इस स्थान पर लिख देते हैं यथा पत्रम् ।

श्री जीवणरामजी को श्रद्धा आराधना द्वादशांग की करके मोक्ष में जावे हैं और जो श्रीनंदी जी में सूत्रां के नाम हैं सो सूत्र भगवान

---

*यह धूड़कड़ ग्राम पंजाब देश व फीरोजपुर ज़िले में जीरे नगर से पांच कोश के अंतर पर बसता है ।

के बणाय हुई नहीं आचार्य के बणाय हुए हैं सो सर्व सच्चे नहीं आपनी मत कल्पना से मेळ संमेळ करके बणाय है।

और जो बत्तमान में ग्यारा अंग है इण में भी मेळ संमेळ करया हुआ है यह श्रद्धान श्री जीवनराम का ॥

बत्तीसूत्र पईंताली सूत्र चौराली सूत्र तथा १४००० हजार ए सर्व मत कल्पना के बणाय हुए है भगवान की वाणी नहीं।

आराधना द्वादशांगी करके मोक्ष जावे है और श्रीनंदीजी में जितने सूत्रां के नाम है सो सब सच्चे है। और जो पिछले आचार्य्य प्रमाणी का के बणाय हुए जो ग्रंथ है सो झूठे नहीं है यह श्रद्धान आत्माराम की है इति।

यह पत्र लिखकर आत्मारामजी ने श्रीस्वामी जीवनराम जी महाराज को दे दिया और श्रीमहाराज ने आत्माराम को गच्छ से भिन्न करके १९२९ का चौमासा फिरोजपुरमें ही करदिया पाठकगण आत्मारामजी की विद्याको भी देख लेवें। सो अनुमान कार्तिक मासमें लाला रणजीतसिंह जी भी फीरोजपुर में ही आगये तब श्री जीवनराम जी महाराज ने यह पत्र आत्मारामजी का लिखा हुआ श्रीमान् श्रावकजी को दिखला दिया तो उस ने कहा कि आत्माराम जी ने आप के साथ प्रपञ्च किया है क्योंकि जो कुछ आत्मारामजी ने आपको श्रद्धा विषय लेख लिखा है सो क्या यह लेख आप को सम्मत है तब स्वामी जी महाराज ने कृपा करी कि मुझे तो उक्त लेख प्रमाण नहीं है और नाहीं मेरा उक्त कथनानुसार श्रद्धान है तब श्रीमान् ने कहा कि जो कुछ आपका मन्तव्यामंतव्य है सो यह इस पत्र पर ही लिखें क्योंकि जो इस पत्र को पढेगा उसको आपका श्रद्धान वा आत्माराम जी का श्रद्धान विदित हो जावेगा तब स्वामी जी ने उक्त पत्रोपरि ही यह लेख लिख दिया ॥ देखिये ,—

अब पाठकगण विचारें कि यदि आत्माराम जी का या विल्लभ्यादि प्रभ्य लिङ्गियों का सत्योपदेश था फिर क्यों न किसी को सत्य पथ पर लाये किन्तु जिस को प्रथम ही अपने मतानुसार कर रक्खा था उनको हठ त्यागना दुष्कर होगया । अब बतलाइये आत्मा राम जी ने चार वर्णों में से किस को जैन धर्मी बनाया ?

फिर श्रीपूज्य महाराज चौमासा के पश्चात् देश में अपने सत्यो पदेश द्वारा भ्रमोच्छेदन करते हुए विचरने लगे । और इसी प्रकार श्री स्वामी जीवनराम जी महाराज ने भी * चूड़चक नामक ग्राम में आत्माराम जी को अपने गच्छ से पृथक् किया तब आत्माराम जी बहुत ही रुदन करने लगे तब श्री जीवनरामजी महाराज ने कृपा करी कि अब क्यों इतना रोता है तुमको तो भव भव में रुदन करना पड़ेगा अपितु मैं तुम को अब गच्छ में कदापि न रक्खूगा। तब आत्माराम जी ने स्वाभिप्रायानुकूल यह काम किया कि एक पत्र लिखकर श्री स्वामी जीवनराम जी महाराज को देदिया । और साथ ही यह कह दिया कि यदि कोई आप से पूछे कि आत्माराम को आपने क्यों गच्छ से बाहर कर दिया तब आपने यह मेरा लिखा हुआ पत्र दिखला देना । स्वामी जी महाराज महान् भद्र पुरुष थे उन्हों ने इस बात को स्वीकार करके आत्मारामजी से पत्र ले लिया अब हम भी उस पत्र को सकल भव्य जीवों के दिखाने वास्ते इस स्थान पर लिख देते हैं यथा पत्रम् ।

श्री जीवणरामजी को श्रद्धा आराधना द्वादशांग की करके मोक्ष में जाये है और जो श्रीमंदी जी में सूत्रां के नाम है सो सूत्र भगवान

---

*यह चूड़चक ग्राम पंजाब देश के फीरोज़पुर ज़िले में जीरे नगर से पांच कोश के अंतर पर बसता है।

के बनाय हुई नही आचार्य के बनाय हुए है सो सर्व सच्चे नही आपनी मत कल्पना से मेल संमेल करके बणाय है ।

और जो वत्तमान में ग्यारा अग है इण में भी मेल समेल करया हुआ है यह श्रद्धान श्री जीवनराम का ॥

बत्तीसूत्र पईंताली सूत्र चौरासी सूत्र तथा १४००० हजार ए सर्व मत कल्पना के बणाय हुय है भगवान की वाणी नहीं ।

आराधना द्वादशांगी करके मोक्ष जावे है और श्रीनंदीजी में जितन सूत्रां के नाम है सो सब सच्चे है । और जो पिछले आचार्य्यं प्रमाणी का के बणाय हुय जो ग्रथ है सो झूठे नहीं है यह श्रद्धान आत्माराम की है इति ।

यह पत्र लिखकर आत्मारामजी ने श्रीस्वामी जीवनराम जी महाराज को दे दिया और श्रीमहाराज ने आत्माराम को गच्छ से भिन्न करके १९२९ का चौमासा फिरोजपुरमें ही करदिया पाठकगण आत्मा रामजी की विद्याको भी देख लेवें । सो अनुमान कार्तिक मासमें लाला रणजीतसिंह जी भी फोरोजपुर में ही आगये तब श्री जीवनराम जी महाराज ने यह पत्र आत्मारामजी का लिखा हुआ श्रीमान् श्रावकजी को दिखला दिया तो उस ने कहा कि आत्माराम जी ने आप के साथ प्रपञ्च किया है क्योंकि जो कुछ आत्मारामजी ने आपकी श्रद्धा विषय लेख लिखा है तो क्या यह लेख आप को सम्मत है तब स्वामी जी महाराज ने कृपा करी कि मुझे तो उक्त लेख प्रमाण नहीं है और नाहीं मेरा उक्त कथनानुसार श्रद्धान है तब श्रीमान् ने कहा कि जो कुछ आपका मन्तव्यार्मतव्य है सो यह इस पत्र पर ही लिखें क्योंकि जो इस पत्र को पढेगा उसको आपका श्रद्धान वा आत्माराम जी का श्रद्धान विदित हो जावेगा तब स्वामी जी ने उक्त पत्रोपरि ही यह लेख लिख दिया ॥ देखिये ,—

१२ सूत्र परमुख सर्वमत कल्पना के बनाय हुए हैं व ऊपर की लिखत मुला कर लिखी सो नहीं परमाण विचतमान वि प्रसरवणा पसपण करि हो से सब मिच्छामिदु० २ घोखे स०,१९२१ कार्तकसु०११-१२ भगवी भगवान केवलीज्ञानी के पक्षपे सर्व तहत प्रमाण सो गणधर देसादेश श्रुत केवली के कहे सब सावभयार २ परमाण है ! जिन धर्म का सासन परमान नहीं द० जीवणराम साधु के फीरोजपुर में।

मियवरो ! जैसे उक्त पत्र में लेख हैं वैसे ही हमने भी लिख दिय लाये हैं ! अब देखिये अब भी जीवनराम जी महाराज स्वयम् लिखते हैं कि —

ऊपर की लिखत मुला कर लिखी इत्यादि अब पाठकगण ! स्वयम् विचारेंगे कि भात्मारामजी के जीवन चरित्र में लिखा है कि जीवन राम जी को भ्रमालिया अब पाठकगण विचारें कि श्रीजीवनरामजी को किसने भ्रमाया मियवरो ! अवश्य ही कहना पड़ेगा भात्मारामजी ने।

अपितु श्रीपूज्य महाराज नगर २ ग्राम २ से मिथ्या मत का नाश करते हुए जालधर नगर में पधार गये।

सो वहां ही १९१० आषाढ शुक्ल ५ मी को स्वामी हरनामदास जी वा स्वामी गार्विन्दरामजी वा स्वामी मधायाराम जी को दीक्षा दे करके १९२० का चोमासा हुशियारपुर में आ किया।

सो बहुत से भव्य जीवों को मिथ्या मार्ग से मुक्त करके जिन धर्म का उद्योत करते हुए चोमासे के पश्चात अनुक्रम से विहार करके लुधियाना में पधार गये तब लुधियाना में लाला भद्रामल्ल लाला मखमीमल्ल लाला अट्टमल्ल लाला गारीमल्ल इत्यादि सुश्रावकों ने शुद्ध जैनधर्म में दृढ़ होकर जनधर्म का बहुत ही उद्योत किया फिर श्रीपूज्य महाराज ने मलौद शहर की ओर विहार कर दिया।

क्योंकि जिस समय मलौद शहर में तपस्वी सेवकरामजी महा

राज ने तपस्या भी हुई थी तब, श्री महाराज मलीर शहर में पधारे तब भाईयों की अतीव विज्ञप्तिके प्रयाग से १९३१ का चौमासा मलीर में ही कर दिया सो चौमासा में धर्मोद्योत बहुत ही हुआ चौमासे के पश्चात् श्री महाराज विचरते हुए भव्य जनों के संशय छेदन करते हुओं ने १९३२ *का चौमासा नाभा नगर में कर दिया सो नाभे नगर के वासी ओसवाल वा वैश्य लोगों ने धर्मोद्योत बहुत ही किया और इस चौमासा में लोगों ने ज्ञान भी अतीव सीखा।

अब पाठक जनों को यह आकांक्षा भी अवश्य होवेगी कि जब श्री पूज्य महाराज ने विदनचन्द्रादिकों को अपने गच्छ से भिन्न किया था और श्री जीवनराम जी महाराज ने आत्मारामजी को स्वगच्छ से पृथक् किया था तो फिर यह किस महात्माके शिष्य बने और उस महात्मा के पूर्वज महात्मा कैसे थे सो पाठकों के संदेह छेदनार्थे हम इस बात के निर्णयार्थे स्व लेखनी को आरूढ़ करते हैं॥

प्रिय मित्रवरो! जब आत्मारामजी वा विदनचन्द्रादि सर्वद्रव्य लिङ्गी सुधर्मगच्छ से पृथक् किये गये फिर इन का अनुचित उपदेश प्रायः किसी भी मठपने न ग्रहण किया किन्तु इन को ही लोक गुरु होन कहने लग गये फिर इन्होंने अनुमान १९३२ में भगवान् वर्द्धमान स्वामी का लिङ्ग परिवर्तन कर दिया और शहर अहमदाबाद में पहोंच गये फिर वहां पर बुद्धि विजय को गुरु धारण किया जोकि पूर्व सुधर्म गच्छ से निकलकर तपागच्छमें गया था जिसका नाम बूटेरायजी था।

ध्यान रहे रत्नारामजी ? गङ्गाविशनमल्ल जी ! तो इमसे प्रथमही पृथक् हो चुके थे।

किन्तु जो अहमदाबाद में पहोंच गये थे उन्होंने तपागच्छ का वासक्षेप लिया था।

---

* श्रीपूज्य महाराज ने इसी सम्वत्सर में गच्छ को उन्मार्गसे सम चामुकूल १२ अङ्क लिखे थे जोकि अद्यापि पर्यन्त गच्छ में प्रचलित हैं।

अथ हम पीताम्बर मतका किञ्चित् वृत्तांत चतुर्थस्तुति निर्णय शंकोद्धार से लिखते हैं।

सज्जन जनो ! चतुर्थ स्तुतिनिर्णय शंकोद्धार प्रस्तावना पृष्ठ ५४ पंक्ति १४ वीं से देखिये —

हवे तमारे श्रावक लोकों ने विचार करवो जोईये के आत्माराम जोनी त्रीजी पीढी थी चोथी पीढी वाला उन्नो परिग्रह असंयम तो सर्व सधर्मा प्रसिद्धछेने जैन शास्त्रोना अभिप्राय थी तो एमनी सर्व पेढीयो असयमी सिद्ध थायछे केमके आत्माराम जी आनंद विजय जी ए पोतानी बनावेली पूजामा गुरु आवलि लखीछे ते एवयीछ ।
सत्य विजय १ कपूर विजय २ क्षमा विजय ३ जिन विजय ४ उत्तम विजय ५ पद्मविजय ६ रूप विजय ७ कीर्ति विजय ८ कस्तुर विजय ९ मणि विजय १० बुद्धि विजय ११ मुक्ति विजय १२ तस लघुभ्राता आनंद विजय एसर्व पेढीया श्री गच्छाचार पोछपत्र प्रमुखग्रंथों ना अभिप्रायथी अने जैन लिंग थी विरुद्ध सिद्धथाय छे केमके ते ग्रंथोमां पलियांवर तथा पित प्रमुख रंगेला वस्त्र धारवा वालाने गुरु गच्छ आचार्य आज्ञा रहित जन लिंग थी विराधि कह्याछेने प्रथम एमनी पेढीमां श्री सत्य विजय जीएपणाले गुरु आज्ञा विना पलियांवर करवा ने त्यार पछी केटलीक पेढी वालाए एकाविया करयो नेपछीतो फक्त रंगोला केशरी या करयां ते धर्ममाममां वर्ते छे तथा जैन प्रथमां तो आचार्य उपाध्यायनो निश्रायविना साधुकग्रामयोने आत्मारामजी पोते तथा तेमनी पेढी वाला श्री तपागच्छना नामधरायोने श्री तपागच्छना आचार्यो ने शिथिल असयमो जाणो तेमनी आज्ञामां प्रवर्तता न थी ने गणीप्रमुख पदवी पोतानो मेळे धारण करेछे पण श्री अंगचूलिया प्रमुख जैन सूत्रोमां गुरुगच्छ आचार्य विना पोतानी मेळे गणी प्रमुख पदवी धारवा वाला ने महा मिथ्यात्व दृष्टि दुरारायक पाखंड मतियो ने हस्तिये पण देख वा वर्ज्याछे ने आत्मारामजी आनंद विजय जोनी

गुरु पर परा मां अद्यापि जुभी कोई आचार्य्य उपाध्याय थया नथी तो पणकोई संयमो गुरुगच्छा चार्य पासे उपसंपदा चार्य पदवासक्षेप कराया विना अर्थात् नवीदिक्षाने आचार्य पद वासक्षेप कराव्या विना अनेपालीताणामां कोई संयमी आचार्य ने संघे आचार्य पदवी दी धाविना पोताना दृष्टिरागी थाणियाउ मा दीधेलो आचार्य पदस्वीकार करी पोताना। करेला प्रश्नोत्तरातम प्रथमा ३१४ मा पृष्टमां छपा व्युछेके पालीताने में * चार प्रकार महा संघके समुदाय ने आचार्य पद दृत्त।

---

* चर्चा चन्द्रोदय भागतीसरेके पृष्ट ३० पंक्ति ५ पर लिखा है कि प्रश्न ? तुम आत्माराम जीके नाम के साथ में सूरीश्वरपद देख कर क्यों जलते हो अनुमान होता है तुमको मनसे कुछ द्वेष भाव है।

उत्तर—मित्रवर हम जलते भी नहीं हैं और हमको मन से कुछ द्वेषभाव भी नहीं परंतु दरिद्री का नाम लक्ष्मीपति रखना युक्त नहीं उपहास्य होता है।

प्रश्न—क्या आत्माराम जी को संकल श्री संघने सूरिपद नहीं दिया है (उत्तर) संवत (१९४३) में आत्मारामजी ने पालिताणे में चौमासाकिया और कार्त्तिक शुक्ल १५ को शत्रुंजय तीर्थ की यात्रा को अनेक श्रावक आते ही हैं। उनमेंसे दो चार शहर के रहने वालों मे जो आत्माराम जीके रागी थे) आत्मारामजी से कहा हम आपको आचार्य पदवी देना चाहते हैं आत्मारामजीने न मालूम क्या लाभ जान कर इसबात को स्वीकार करलिया और मनमें फूलगये इतना भी नहीं कहा कि ? हमारे बड़े गुरुभाई गणि जी श्री मूलचंदजी महाराज तथा श्री वृद्धिचन्द् जी महाराज से इसबात में सलाह और आज्ञा लेना चाहिये दूसरे दिन श्रावकों ने शेठ नरसिंह केशव जी की धर्म शाला में एक मकान सजा कर आत्माराम जीको पाट पर बैठाय दिया और कितनेक श्रावकों ने इकट्ठा हो कर जंनाघम्म किया कि आजकल भारत

नाम विजयानन्द सूरि अपर प्रसिद्ध नाम आत्माराम मुनि इत्यादि पोतानी आचार्य पदधराओ आत्मारामजी ने नरक निगोदना कारा गारमां पड़वानो इच्छा करशो न जोइये ॥

मादे आत्माराम जाना हितके वास्ते तमने कहिये छीयके जो

भूमि आचार्य पदसे हीन हो गई सबकी सलाह हो तो श्री आत्माराम जीका इस पदसे विभूषित करें कितनक श्रावकोंने तर्क की कि महाराज पर आचार्य पद का वास क्षेप कौन करेगा। वास क्षेप करने वाला साधु होना चाहिये जो महाराज से दीक्षा में बड़ा होवे आचार्य पद मिले पीछे महाराज जी गणि जी श्री मूलचन्द्र जी महाराज तथा वृद्धि चन्द्रजी महाराज को वन्दना करेंगे वा नहीं ? करेंगे तो आचार्य पद की न्यूनता होगा। और नहीं करेंगे तो परस्पर विरोध होवेगा इस बात को सोच ला कितनेक श्रावकों ने कहा कि सोच लिया है जो काम करने को आपलोग इकठे हुये हैं उसको करना ही मुनासिब है बस इतने में मरुस्थ और पंजाब के कितनेक श्रावकों ने जो आत्मा राम जी के मान्य श्रावक गिन जाते हैं ? ऊंचे स्वर से कहदिया कि पीछे श्री सूरीश्वर महाराज की जय न किसी से वासक्षेप किया न कुछ क्रिया अनुष्ठान किया आत्माराम जी उस दिन से अपने आपको सूरिमानने लगे शिष्यवर्ग से कहदिया आजसे हम का सूरि लिखा करो हम कहते हैं जंगल में मोर नाचा किसने देखा ? इत्यादि कथन उक्त पुस्तक में हैं अपितु उक्त पुस्तक साधुमार्गियों की विरचित नहीं है शोक है आत्माराम जीके जीवन चरित्रमें लिखा है कि ३५००० सहस्र मनुष्य में सूरिपद आत्माराम जी ने प्राप्त किया सो हम पूछते हैं। आचार्य पदसाधु देसके हैं या गृहस्थी और क्या विधि क्या वर्णन है और किस गच्छ के आत्माराम जी आचार्य बनाये गये क्योंकि आत्माराम जी के गुरु के श्वेत वस्त्र थे और आत्माराम जी के पीत, अर्थात् पीले वस्त्र इत्यर्थ' ॥

भारमाराम जी मश्नमोरू हाय तो जेम मनेथी जैम शास्त्रोमा न्यायथी श्रोजी चौथी पेढी वाला श्री प्रमोद विजय जी ना गुरू ने संजमी। जाणी तथा साधु समाचारी पोतानी परंपरामां सर्वथा उच्छिन्न न थइ तो पण श्रीगुरू माहाए क्रियावंत संयमी गुरू नो हा थे दिक्षा प्रमुख साधु समाचारी तथा गुरू परंपराए आवेली महासंघ समस्त श्री गुरू वोधेली आचार्य पदवीना धारक श्री विजेयराजेन्द्र सूरिजी ने संयमी जाणीतेमनो पासेउपसंपद् अर्थात् नयी दीक्षा ग्रहण करी क्रिया उद्धार करयो तेम एमने पण संयमी मुनीनी पासे चारित्रोप संपत् अर्थात् दीक्षा लेवी जोइए केम के फरी दीक्षा लेवी थी एक तो कुलिंगपना नु कलकटली अमोमान वेग लोपइ जशे ने बीजु पोते साधू नथी तो पणअमे साधू छीए एवु लोकोने कहे वु पडे छे ॥

तद् रूप मिथ्या भाषण दुषणथी बचो जसे ? अने त्रीजु जे कोई मोछा श्रावकएम ने साधु करीने माने छे ते श्रावका नु मिथ्यात्व पण वेगलु थइ जशे इत्यादि बहु गुण उत्पन्न थशे माटे जो भारमाराम जी आनंदविजयजी आत्मार्थी छे तोए अमारुं कहे व परमोपकाररूप जाणी ने अंगीकार करशे तथा आचार्यपद लेवानी वांछा हाय तो भारमाराम जी ने उचित छे के प्रथम कोई परंपरागत संयमी आचार्य देखीने तथा संघु मम परंपराए पोसह सालाए पमाय थइताए के महाणु भागसु रिणोगण पोढग धारगा संयमे सुवइता ? इत्यादि श्रीभग चूलिया प्रमुख जैन सुत्रोनो माहाना धारक श्रीसुधर्म परंपराए पोषधसाला प्रमुख परिग्रह प्रमाद छोडीने अर्थात् शिथिला चारपणु मुकी ने क्रिया उद्धारना करवा वाळा एवा कोई महाणु भागसूरि आचार्य जो इवेमनी पासे दीक्षा लेई आचार्य पदधारण करे तो आगमनो भग रूप दुषण थी बचीजाय अनेएम ने आचार्यमानवा वाळा श्रावकोनु मिथ्यात्व पण वेग लुथइजय मे नरकनिगोद रूपो कारागारमी मोजमान थानो भयपण टली जाय केमके समाचारीने साधू तथा मनाचार्यने आचार्यमान यो एम

हातु मिथ्यात्व छे वली परंपरागत संयमी गुरु आचार्यनी पासे चारित्रोप संपदा चार्यपद अर्थात् दीक्षा अने आचार्य पद लीधाविना कदापि जैन शास्त्रमा साधू पणु तथा आचार्य पणुमान्य करुं न थीं ॥

माटे संयमी गुरु तथा आचार्यनी पासे संयम छोडीने साधू पणु तथा आचार्य पणु आत्माराम जी ने धारण कर्युं ओंयेने पूर्वोक्त रीतो थी साधू पणु तथा आचार्य पणु धारण नहीं करतो तो जैनमत ना शास्त्रों नी श्रद्धा वाला एम ने जैनमत ना साधू तथा आचार्य केथी पते परमाण करी अंगीकार करशे ! इत्यादि तथा उक्त ही पुस्तक के पृष्ट २९ पर लिखा है कि पहिले आत्मारामजी थानकपंथी ढुंढिया था वेप छो स्वलिङ्ग श्रीमहावीर स्वामिना यति ना श्वेत मानो वेत कपडामो छोडीने अन्यलिङ्ग पीताम्बर भयतिनो ग्रहण करवो परन्तु कोई संयमी गुरु नीपासे चारित्रोप संपत् अर्थात् फरीने दिक्षा लीधी नहीं अने जैनो पासे दिक्षा ग्रहण कर साधु कहे छे तेपमना गुरु पासे मुख कहता के में संयमी नहीं हूं ! तथा पीताम्बर मणिविजयादिक नी गुरु परंपरालो बहु पेढीया थी संयम रहित हतो तो फरी असंयती नी पासे दीक्षा छोडने उप संपद ग्रहन करवोप जिनमत ना शास्त्रोंथी विरुद्ध इत्यादि तथा पृष्ट २९ परापरि लिखा है कि कारणके सोमाग विजयजी तो जेम श्रीरूप विजयजीए रूपनी पद्मनी नामनी ढुंढियो चलावी तेम सोमाग विजयजी पणढुंढियो चलावता तथा असंयम प्रवृत्ति श्री गुर्जर मारवारऊ देशमा सर्व संघमा प्रसिद्ध छे इत्यादि तथा पृष्ट २१ पर लिखा है कि श्री बुटेराय जीए सर्वसंवेगी नामधारी ने कुगुरु समझी तेमनो लिंग त्यागन करी श्वेत कपडा धारण करी इत्यादि तथा पृष्ट २७ पर लिखाहै कि आत्माराम जी आनंदविजयजी तो विद्वान् पणानो अभिमान धारण करी ढुंढकमत मांथी नीकलीने कुलिंग पणधारण करयुंपण कोइ संयमीगुरु देखी तेमनी पासे उपसंपद नयी दिक्षालीधो नही इत्यादि ॥

ाठकगण ! उक्त लेख आत्माराम जी के ही गच्छका है सो
यं विचार करें कि आत्माराम जी श्री भगवान् वर्द्धमान स्वामी
त्पादन किया साधु धर्म वा लिङ्ग छोड़ करके परिग्रह धारियों
शिष्य बने जो कि संयम से रहित धन से विभूषित हुंडियां
थे पाठकगण क्या जाने आत्मारामजी ने इनके धन को ही देख
र विचार लिया हो कि यही भगवन् के शासन के हैं।

क्योंकि इनके पास धन बहुत है सो भगवान् भी संसार पक्ष
पुत्र होने से बड़े ही धनाढ्य थे शोक !!! शेष समीक्षा इनके
ो पाठकों पर छोड़ते हैं।

क्योंकि अधिक समालोचना में विस्तार का भय है सो यह तो
गण जान ही गये होंगे कि आत्माराम जी संयमवृत्ती त्याग कर
ह धारियों के शिष्य हुए और न तो कोई इनके गच्छ में
र्य ही हुआ है नाही उपाध्याय सत्य है जब संयम ही नहीं है तो
आचार्य कहां से होवे।

किन्तु श्री पूज्य महाराज का १९३२ का चौमासा नाभे शहर में
दि से पूर्ण होगया श्री महाराज चौमासा के पश्चात् विहार
 देश में जय विजय करने लगे।

फिर श्री पूज्य महाराज ने मालेरकोटला, रामपुरा, लुधियाना
र, फगवाड़ा, जालंधर, कपूरथला, गुरुका जंडियालादि नगरों में
ोत करके लाला हरनामदास सवलाल ओसवाल की बैठक में
३ का चौमासा कर दिया।

चौमासा में धार्मिक कार्य्य बहुत से हुए और चौमासा में दो
: पुरुष धर्म के प्रकाशक पत्रक्षयोपशमता के कारण से वैराग्य
र को प्राप्त होते हुए अमृतसर में ही आगये जैसे कि—श्री पूज्यो
मी, १ श्रीशिवदयालजी, २ श्री सोहनलालजी, ३ श्री गणपतिराय

जो, ४ सो श्री बूलोरायजी पसरूर के वासी और श्री शिवयालजी रोहतास के वसने हारे और श्रीसोहनलालजी समबयाले के वसने वाले श्री गणपतिरायजी पसरूर के रहने वाले तिन्होंने श्रीपूज्य महाराज के पास दीक्षा के वास्ते विज्ञप्ति की श्री महाराज ने विज्ञप्ति को स्वीकार करके १९३३ मार्ग शीर्ष शुक्ला पञ्चमी चंद्रवार के दिन चारों को ही दीक्षित किया।

फिर श्रीमहाराजने बूलोरायजी * को श्री खूबचन्द्रजी महाराज के शिष्यकर दिये और श्रीशिवयालजी महाराज वा श्रीसोहनलाल जी श्री धर्मचन्द्र जी महाराज के शिष्य कर दिये श्रीगणपतिरायजी महाराज श्री मोतीरामजी महाराज के शिष्य किये गये।

जिन में से श्री सोहनलाल जी महाराज ने विद्याध्ययन करके थोड़े ही काल में संवेगमत का पराजय किया स्वामी जी महाराज की युक्ति के सन्मुख आतमारामजी खड़े नहीं होते थे और जिन्हों ने बहुत से भव्यजीवों की मिथ्यात्व को नष्ट करके पुनः उनको सम्यक्त्व में स्थिर किया है आज दिन सुधर्म्म स्वामी† के ८९ वें पट्टोपरि विराजमान हैं सूर्य समान प्रकाश कर रहे हैं।

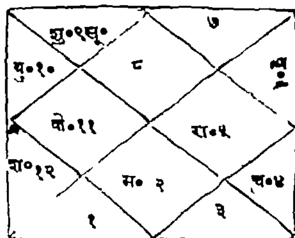
---

*प्रथम श्रीबूलोराय जी को श्रा पूज्य मोतीरामजी महाराज की निश्राय किया था अपितु श्री महाराज ने स्वीकार नहीं किया फिर श्री खूबचंद्रजी महाराज का शिष्य किया गया।

†श्री भगवान् वर्द्धमान स्वामी के ८९ पट्टोपरि विराजमान श्री पूज्य सोहनलालजी महाराज हैं जिन्होंने संवेगमत का शास्त्र द्वारा कर प्रार पराजय किया है जिसका स्वरूप आगे लिखा आयगा।

अपितु श्री पूज्य महाराज (श्री सोहनलालजी) का जन्म सम्वत् १९०६माघ मास कृष्ण पक्ष प्रतिपदा स्यालकोट के ज़िलामें समड़याल नामक नगर के लाला मथुरादासजी की धर्म पत्नी माई लक्ष्मीदेवी के कुक्षसे हुआ है देखिये ! जन्म कुण्डली तथा आचार्य वर्य श्रीपूज्य सोहन लालजी महाराजका जन्म लग्न ! श्रीविक्रमाब्द १९०६ पोह मास धनार्क प्रविष्टा १८ माघ कृष्णा प्रतिपदा रविवासरे ऐन्द्र योग पुनर्वसु नक्षत्रे वृश्चिक लग्नोदये ओसवंश ।

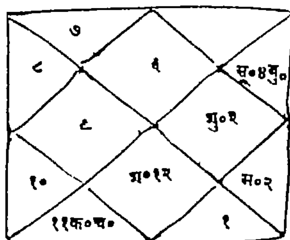
श्रीपूज्य सोहनलालजी महाराज की जन्म कुण्डली !



श्री पूज्य महाराज परमशान्ति मुद्रा हैं श्री गणपतिराय जी महाराज भी उक्त गच्छ में गणावच्छेदिक वा स्थविर पदसे विभूषित हो रहे हैं जो महान् दीर्घ दर्शी हैं और श्री संघ के परम हितैषी हैं स्वामीजीका जन्म पसरूर शहर ज़िला स्यालकोट श्रीविक्रमाब्द१९०१ भाद्र पद कृष्णा पक्ष तृतीय मगळ वार के दिन लाला गुरुदासमल्ल श्रीमाल की धर्म पत्नी माई गोर्यां की कुक्षसे हुआ है स्वामीजीके जन्म लग्नके ग्रह देखने से यह स्वयमेवही सिद्ध हो जाता है कि स्वामीजी महाराज परम हितैषी हैं !

अथ श्रीगणावच्छेदिक गणपतिराय जी महाराज की जन्म कुण्डली।

विक्रमाब्द १९०६ माद्र पद कृष्ण पक्ष तृतीया सोमवासरः।



सो यह कथन प्रसंग से अत्र लिखा गया है ।

किन्तु दीक्षा देकर श्री पूज्य महाराज ने ग्राम नगरों में धर्मोप देश दे कर लुधियाना माछीवाड़ा, खरड़, रोपड़ इत्यादि नगरों में विचरके १९३४ का चौमासा मालागढ़ में जा किया सो चौमासे में धर्मोद्योत बहुत हुआ ।

पाठकों को स्मृति होगा के हमने पूर्व लिखा था कि १९३४ के चौमासा में आत्मारामजी का वरम करना लिख करेंगे सो पाठक वृन्द ! ध्यान से पढ़ें कि १९३४ का चौमासा आत्मारामजी का जोधपुर में था और श्रीस्वामी जीवनरामजी महाराज का चौमासा तब ही अंगलदेश के भाईदे कोट नामक नगर में था तब आत्माराम जी नेजोधपुर से अपने हाथ से एक पत्र लिख कर स्वामी जीवनराम जी महाराज को भाईदे कोट में भेजा सो उस पत्र की नकल यथातथ्य भव्य जीवों के दिखाने वास्ते लिखता हूं ? और जिसके पढ़ने से पाठकों का आत्मा राम जी की विद्या बुद्धि भली प्रकार से विदित हो जायेगी ।

अथ पत्रम् ।

स्वस्ति श्री मारवाड़ कांटे साधु जी श्री श्री श्री श्री श्री श्री जीवणरामजी योग लिखी जोधपुर सेती आत्माराम मे सुखसाता षिमा-षणा संवछरी संबंधी बहुत बहुत करके वाचजो मने आपने तो मेरे कू भूलाय दीया है परन्तु मेरे मन में तो आप घड़ी एक भूलते नहीं हैं कारण यह है जो बाल अवस्था सूं आपने मेरी पालना करी अने पढा या जो विद्या मेरे कु आई है सो सर्व आपका उपगार है अने अब जो अनुमाने लाखां श्रावक मेरी सेवा करते हैं तथा १४ साधु मेरे साथ हैं एसर्व आप ही का उपगार है सो आप कूं मिलणे के बहुत अभिलाषा लग रही है सो आप के गुण तो मेरे कूं सर्व मालूम हैं मुह स कहे नहीं जाते हैं ग्राम चूरुषक में आप से घणी अरज करी थी के मेरे कू आप दूर न करो परन्तु आप तो गुरु के दरजे थे सो मेरा क्या जोर चलता था दूसरा मने तो आपका अविनय कदेई नहीं कीया अने आज दिन तक अपना मूंढा थी कदेई आप की निंदा नहीं करी बलके आपके भद्रिक स्वभाव का तथा ब्रह्मचर्य का तथा तपस्या की महिमा घणे लोकां आगल करता हूं परन्तु जब आप याद आवते हो तथा दिल भराईजता है आंखां में पाणी आजाता है सो मेरे कूं बड़ा दाह होता है सो तो कहां लग लिखूं सो अब आपने कृपा करके मेरे कू अपना मुख कमल का दर्शन करावणा सो इठे चौमासे में दिल्ली की तर्फ विहार करके आवणा महीने माघ तक सो आपने बी बागर के गामां में विहार करके पधारणा ।

सो आपका मेल हो जावेगा अने जो मैं समुद्र के अंतलग रचना देखी है तथा जीर्ण ताड पत्रां के भंडार देखे हैं सो सब आप कू सुणाऊंगा मेरा जैसा राग आप के उपर था वैसाही राग अब है मैं तो अच्छी तरे जाणता हूं जो आप परभव सुधारणे के वास्ते ऊटेहो

अमे आप कू मलूम ही है जितने मत अब जन नाम के हो रहे है मागे आप कू किसी श्रावक के मुलाहजा से मेरे से मिलना बंद नहीं करणा आप ओ मेरेसे न्यारे रहते हो यमेरे कूं बडा दुख है मेरी मरजी यह है जो आप की सेवा करूं सदा पास रहूं पुस्तक मेरे कू इतने मिले है जो गिणती से बाहिर है ।

श्रावक तो अनुमाने १०००००० दस लाख सेवा करत है अने साधू मेरे पास है सो बडे विनय वान है परन्तु एक आपका विजोग है यही मेरे कू दुःख है असे असे क्षेत्र है जिनमें७०००हजार श्रावक के घर है परमेश्वर की तरे साधू कू मानते हैं क्षेत्रथी ५००० हजार गुजरात में होवेगे परंतु साधू भगवान के थोडे हैं साधू त्यागी अनुमान ७० वा ८० है साध्वीया १५० के अनुमान है सो हमारी ए मरजी है जो आपके साथ फेर सर्व देस अने तीर्थ जिन के उपर २५०० मंदिर हु अने २४ से वर्ष के बणे हुए मंदिर अब तक करडे है ए सर्व वस्तु का हाल आप मिलोगे जब कहुगा सर्व साधु आप कू चाहये है अने मेरे साधू जैनेन्द्र व्याकरण वगेरे घणे २ शास्त्र भणे है ए सर्व आप आप मिलोगे तब देखोगे ए चिट्ठी मैंने पूर्व रागथी लिखी है।

मुझ कोइ मतलब नहीं इतने दिन जो चिट्ठी नहीं लीखी सो आपने मना कर दीया था। परन्तु मैं कहांलग सबर करु इस वास्ते लिखी है सो इसका समाचार सर्व पाछा लिखणा ।

जोधपुर में भालचंद पारख की दुकान उपर चिट्ठी लिखो सं० १९३४ कार्तिक वदि ८ दसखत आतमाराम के ।

अथ किञ्चित् उक्त पत्र की समालोचना करके मध्यजनों को दिखाता हूं।

प्रियपाठकवृन्द ! जो आतमाराम जी के जीवन चरित्र के ४१वें पृष्ठोपरि लिखा है कि-आतमाराम जी ने १९२१ में चौमासा में, सार स्वत, चन्द्रिका, कोष, अलंकार न्याय काव्यादि ग्रंथ पढे । सो पाठक

गण स्वय ही विचार करेंगे कि इतने विद्वान का ऐसा नियम विरुद्ध पत्र होसका है कदापि नहीं इससे स्वत ही सिद्ध होगया कि आत्मारामजी ने व्याकरण को ही कलङ्कित किया तथा नाहो आत्मारामजी सुदर पद रचना करके शब्द लालित्य लिखना ही जानते थे जैसे कि उनके लिखे पत्र से स्पष्ट सिद्ध है तथा लिखने की शैली इस प्रकार से ग्रहण करते हैं कि—परन्तु जब आप याद आवदो हो तदा दिल भर आंवदा है आखां में पाणी भाआंन्दा है सो मेरे को बड़ा दाह होता है सो सो कहां लिखू। *इत्यादि मित्रवरो क्या यह व्याकरण के विद्वानों की भाषा है क्योंकि उक्त लेख से सिद्ध होता है कि आत्माराम जी को व्याकरण का नितान्तम् बोध नहीं था यदि बोध होता तो उक्त पत्र विभक्ति तिङन्त कृदन्त प्रत्यय समासादि से विरुद्ध क्यों लिखते तथा व्याकरण का यदि संज्ञा प्रकरण भी देखा होता तो वर्णों के स्थान तो ज्ञात होजाते जैसे कि व्याकरण के संज्ञा प्रकरण में लिखा है कि—

अकुहविसर्जनीय जिह्वामूलीयानां कण्ठ तथा ऋटुरषाणां मूर्द्धा ॥

अर्थात् अष्टादश प्रकार का अवर्ण पुनः कवर्ग जैसे कि—क ख ग घ ङ, और विसर्जनीय जिह्वा मूलीया इनका कण्ठ स्थान है और ऋवर्ण के अष्टादश भेद टवर्ग जैसे कि—टठडढण र, ष, इनका मूर्द्धन स्थान है ?

मित्रवरो उक्त पत्र में आत्माराम जी ने प्राय कण्ठ स्थान के वर्णों के स्थानोपरि मूर्द्धस्थान के वर्णों को ही लिखा है जैसे कि—आखां में पाणी आआंदा है,(कहांलग लिखूं)इत्यादि सो क्या यह आत्मराम जी ने अपनी बुद्धि का परिचय नहीं दिखाया है अवश्य दिखाया है ?

* वाह ! ! ! कैसी सुन्दर काव्य आत्माराम जी ने लिखी है जिस से इमसमादि महात्माचार्यों की काव्य लज्जित होरही हैं ॥

फिर संवेगी लोग कहते हैं कि--आत्माराम जी ने ढूंढक मत मनः कल्पित जान के त्याग दिया ! किन्तु ! महात्मा जी अपने पत्र में लिखते हैं कि—आपके गुण तो मेरका सर्व मालूम हैं मुह से कहे नहीं जाते गाम चकवाक में आप से घणी अरज करी थी कि मेरे को आप दुर न करो परन्तु आप तो गुरु के दर्जे के थे सो मन क्या जोर चलता इत्यादि। पाठकगण ! आप स्वयं विचार करें कि इस लेख से क्या सिद्ध होसकता है या कोई यह कह सका है ! कि आत्मा राम जी ने श्री स्वामी जीवनराम जी महाराज का छोड़ दिया या ढूंढक मत को मनःकल्पित जान करके त्याग दिया !

किन्तु जब आत्माराम जी का दर्शन चारित्र शुद्ध न रहा तो गच्छ में भी रखना अयोग्य था इसीवास्ते स्वामीजी ने आत्मारामजी को गच्छ से भिन्न किया फिर लिखा है कि—मैंने कभी भी आपका अविनय नहीं किया किन्तु स्तुति करता रहता हूं—इत्यादि—

जब वीरशासन के मुनियों को असत्य कटुकवाक्य प्रदान किये हैं तो क्या यह अविनय नहीं है अवश्य है तथा सम्यक्त्वशल्योद्धार नामक ग्रंथ को पढ़कर देख लीजिये (जो कि महात्मा जी का रचा हुआ है) आद्य से इतिपर्यन्त पठन करते हुए आपको सत्य, मृदु,वाक् कहीं भी दृष्टि गोचर नहीं आवेंगे ! हां-ढूंढिये चमार, मुसलमान, नरक दुर्गति के पढ़ने वाले इत्यादि शब्दों की वर्षा अच्छी को हुई है ! अर्थात भरमार है ॥

फिर और भी देखिये आत्माराम जी के कथन में सत्यता भी प्रतीत नहीं होती है जैसे कि आत्माराम जी स्वपत्र में लिखते हैं कि जो मैं समुद्र के अंत लग रचना देखी है तथा जीर्ण ताडपत्रों के भंडार देखे हैं सो सब आप को सुणाऊंगा इत्यादि पाठकवृन्द आत्मा रामजी कौनसे समुद्र के अंत लग रचना देखकर आये हैं-क्या लवण समुद्र या कालोदधि-तथा स्वयंभूरमण समुद्र सो क्या यह अनु

चित ऐसा नहीं है भवश्य है क्योंकि सांप्रतम काल के शोधकलम तो यह कहते हैं कि–उसे कोई भन्त नहीं मिला ॥

फिर एक यह भी बात है कि–आत्माराम जो १९३२ सम्वत् म पञ्जाब देश से विहार करके अमदावाद में चौमास आ रहे फिर १९३३ का चौमास भावनगर में किया १९३४ का चौमास जोधपुर में किया तो क्या यह तीनही नगर समुद्र के मन में बसने वाले हैं॥

हा यदि किसी बालका नाम आत्माराम जी ने समुद्र कल्पन करलिया हो तब तो न्यारी बात है क्योंकि जब आत्माराम जी ने एक भचित्त द्रव्य को अर्हन मान लिया है तो भला समुद्र की तो क्या ही बात है ।

क्योंकि भोर किसो प्रकार भी आत्माराम जी का समुद्र तक रचना देखना सिद्ध नहीं हो सकता क्योंकि भारत वर्ष के सूत्रों में ३२००० हजार देश लिखे हैं किन्त आत्माराम जी के जीवन चरित्र में केवल पञ्जाब, गुजरात, मारवाड़, मालवा, इत्यादि देशोंके हो नाम लिखे हैं मत भन्य देशों क नाम ॥ सो शोक है ! ऐसे लिखने पर फिर लिखा है कि मैं भच्छी तरह जानता हु जो आप परमत सुधारणे के वास्ते ऊठे हो तथा मेरा जैसा राग मा र के उपर था ऐसा ही राग भब है इत्यादि मित्र परो ! जब राग की न्यूनता भी न हुइ स्वामी जी परलोक वास्ते उत्थित हुए भो निश्चिन्त होगया ॥

तो फिर ढूंढिया शब्द ग्रहण करके वीरशासन के मुनियों की व्यर्थ निन्दा करके पत्र काले क्यो किये हैं ॥

भपितु जो किये हैं इस से आत्माराम जी ने अपनी बुद्धि का परिचय दिखा दिया है ॥

पुनः लिखा है कि मेरी मरजी यह है जो आपकी सेवा करूं सदा पास रहू पुस्तक मेरे क इतने मिले हे जो गिनती से बाहिर हैं आपको भनुमाने दश २००००० लाख सेवा करते हैं इत्यादि॥

प्रियगण ! जो सेवा वास्ते अन्तःकरण से लिखा होवेगा तो सिद्ध होता है कि-संवेग मन वा तपागच्छ आत्माराम जी को प्रिय नहीं लगा होवगा प्रटेरायमीमत । फिर लिखा है कि-पुस्तक मेरेकू इतने मिले हैं जो गिनती से बाहिर हैं,सो गणना से बाहिर तो असंख्य वा अनन्त ही शब्द हैं तो क्या आत्मारामजी को असंख्य पुस्तक मिल गये थे ॥

किन्तु आजकल तो प्राय महान् २ पुस्तकालय की भी लिष्ट विद्यमान हैं जैसे जैन हितैषी नामक मासिक पत्र में प्रकाशित हुआ है कि लन्दन नामक सुप्रसिद्ध नगर में एक महा पुस्तकालय है जिस के पुस्तक अनुक्रम से रखे जायें तो ४२ वा ४३ मील के स्थान में रखे जा सक्ते हैं ॥

देखिये ! इतना महत् पुस्तकालय भी गणना से बाहिर न हुआ तथा जैन सूत्रों में सब से महान् हप्टिवाद माना है अपितु तिस के भी संख्याते ही वर्ण लिखे हैं ! तो भला आत्माराम जी को गणना से बाहिर पुस्तक कहां से मिल गये ! भला यदि कल्पना कर भी लेवें कि आत्माराम जी को इतने पुस्तक मिलगये थे जो कि गणना से बाहिर ही थे ॥

तो फिर श्री पूज्य जी महाराज के सूत्र वा श्री जीवनराम जी महाराज के सूत्र विना आज्ञा क्यों लेगये थे ॥

तथा फिर भी वह सूत्र नहीं दिये तो क्या उक्त पुस्तकों को अनंत बनाना था हा शोक ॥

फिर लिखा है कि १०००००० दस लाख श्रावक मेरी सेवा करते हैं यह भी लेखकथन मात्र ही है क्योंकि प्रथम तो यह लेख अहंकार का सूचक है जोकि साधु धर्म से विरुद्ध है फिर यह लेख देखिये सत्यता कहांतक रखता है क्योंकि जैन इतिहास बाबू बनारसीदास एम॰ ए॰ का बनाया हुआ जिसके प्रथम पत्र पर लिखा है कि १३ लाख

३४ सहस्र १०० एकसो ४८ सर्व जैन हैं इसी प्रकार भारतमित्र नामक पत्र में भी प्रकाशित होचुका है ॥

तथा किसी २ तारीख में जैन १५ लाख भी लिखे हैं सो वर्तमान काल में जैनमत की तीन शाखें हैं जैसे कि श्वेताम्बर जैन १, श्वेताम्बर मूर्त्तिपूजक जैन २, दिगंबरजैन ३। श्वेताम्बरमूर्ति पूजक जैनों की शाखा ही एक पीताम्बर जैन हैं ॥

सो सर्व जैनों में पांच लाख तो अनुमान श्रीश्वेताम्बर स्थानक वासी जैन हैं। शेषदिगंबर श्वेताम्बर जैन हैं अब विचारने की बात है कि अब पोताम्बर जैन ही आत्माराम जी के लिखे ऽनुसार है हो नहीं, तो भला संवा की तो क्या ही आशाहे तथा श्री श्रमण भगवत् वर्द्धमान स्वामीके श्रावक १००००० लाख उनसठ सहस्र ही कल्प सूत्र में लिखे हैं सो आत्माराम जी का कथन असमंजस है फिर लिखा है कि साधु भगवानके शासनके थोड़े हैं साधु त्यागी अनुमान ७०वा८०साधवीयां एक सौ पचास १५० के अनुमान हैं। जिनवरो जैसे आत्माराम जी त्यागी वैरागी थे तैसे हो वह ७०,८० साधु १५० साधिवयें होंगी धन्य हे ऐसे२ परीक्षकों को पुन मंदिर विष२ लेख लिखा है यह भी पानसर के तीर्थवत् ही होवेगा ॥

पुनः देखिये आत्मारामजी को जब श्रीजीवनराम जी महाराजने स्वागच्छ से भिन्न किया था। फिर आत्मारामजी को किसी भी पत्र द्वारा नहीं चाहा ॥

किन्तु आत्माराम जी लिखते हैं कि-इसने दिन जो चोठी नहीं लीनी सो आपने मना कर दिया था परंतु मैं कदाग्रह समर कक इत्यादि पाठकगण—देखिये आत्माराम जी के लेख को परंतु स्वामी जीवनराम जी महाराज ने इस पत्र का भी कोई भी प्रत्युत्तर नहीं दिया। सो इक पत्र से पाठकों को आत्माराम जी की विद्या बुद्धि विवेक सत्य सर्व ज्ञात होगया होवेगा।

अपितु श्रीपूज्य महाराज का भी चौमासा अम्बाला से पूर्ण होगया फिर श्रीमहाराज देश में परोपकार करते हुओं ने लोगों के अतीव आग्रह से १९३५ का चौमासा नाभा में किया पाठकों को ज्ञात हो १९३५ का चौमासा आत्मारामजी का लुधियाने में था ! किन्तु लुधियाने में आत्माराम जी ज्वर से भयभीत होते हुए रेल गाडी में आरूढ हो कर चौमासा में ही अम्बाले में जा रहे थे ।

अपितु आत्माराम जी के जीवन चरित्र में लिखा है कि—जब आत्माराम जी अम्बाला में गये तब विचारते हैं ।

मैं कहां आगया हूं क्या मुझे कोई स्वप्न आया है या कोई इन्द्रजाल हो रहा है या मुझ भ्रम हो रहा है इत्यादि अनेक हास्यपूर्ण वचन लिखे हैं ! सो पाठकगण आत्माराम जी के स्वभाव को तो जानते ही हैं ।

और श्रीपूज्य महाराजने नाभा नगर में जैनधर्म का, परमोद्योत किया पुनः श्री महाराज ने एक *दयाशतक* नामक महान ग्रंथ भी निर्माण किया जिस में अनेक सूत्रों के प्रमाणों द्वारा भगवान की आज्ञा दया में सिद्ध करके सम्यक्त्व को पुष्टा दी है फिर चतुर्मास के पश्चात श्री पूज्य महाराज ने बहुत से भव्य जीवों को प्रतिबोध देकर १९३६का चौमासा लुधियाना में किया ! सो लुधियाने में बहुत ही धर्मोद्योत हुआ अपितु लाला अयामल्ल, लाला मदलीमल्ल, लाला अष्टमल्ल गौरीमल्ल, लाला अमनादास, लाला कारसैन, लाला पृथ्वी मल्ल, लाला मिहालचंद, इत्यादि भाइयों ने धर्म की प्रभावना बहुत की सो चौमासे के पश्चात श्री महाराज अनेक ग्राम नगरों में धर्मोपदेश करते हुए अमृतसर में पधारे तब श्रीमान लाला हरनामदास सनलाल श्रावक की बैठक में विराजमान होगये तब प्रति दिन धर्म ध्यान की वृद्धि होने लगी सैंकडों लोग दर्शन करने को आने लगे ।

तब ही आत्माराम जी विदनचंद्रादि संवेगी साधु भी ममृतसर में ही आगये ! किन्तु विदनचंद्रादि सवेगियों ने कहला भेजा कि ! हमने भी श्री पूज्य महाराज के दर्शन करने हैं सो हमको दर्शन करने की आज्ञा मिलनी चाहिये ।

तब श्री पज्य महाराज ने कृपा करीकि–जैसे उनकी इच्छा हो ! तब ही विदनचन्द्रादि सवेगी साधु श्रीपूज्य महाराज के दर्शनार्थं लाला हरजामदास, सतलाल जी बैठक में हो भागये इच्छामि खमासमणो इत्यादि पाठ पढ़ के स्थित होगये पुन प्रेम की बातें करने लगे तब श्री पूज्य महाराज ने कृपा करीकि—विदनचंद्रजी क्या देखा ! तब विदनचंद्रजी कहने लगे ! हे महाराज जी सिद्धाचल जो देखे ! तथा अनेक मन्दिर देखे हैं तब श्रीमहाराजजी ने कहा कि–क्या कोई अढाई द्वीप में ऐसा स्थान है कि–जहां कोई भी सिद्ध न हुआ हो ? क्योंकि अब तो यह स्थान ऐसे हैं जैसे किसी शेठ की दुकान चलती है तब अनेक लोक शेठ जीके पास आते हैं व्यापार करते हैं जब वह आपण उठाई जाती है या शेठ उस दुकान को छोड़ जाता है वह आपण गिर पड़ती है फिर वह व्यापारी जन वहां पर नहीं आते हैं ।

इसी प्रकार सिद्धाचलादि पर्वत् है ! क्योंकि जब मुनि जन पर्वतों पर साक्षात विद्यमान थे तब अनेक गृहस्थ वा जिज्ञासु जन वहां जाया करते थे और ज्ञान दर्शन चारित्र का लाभ उठाते थे ! परन्तु अब क्या है वहां पर ! तब श्री सोहनलाल जी महाराज ने श्री पूज्य महाराज से विज्ञप्ति करी कि—मुझे आज्ञा होवे तो मैं इनसे कुछ वार्ता करू ॥

तब श्री पूज्य महाराज जी ने श्री स्वामी सोहनलाल जी महाराज को आज्ञा देदी ॥

आज्ञा पाते ही श्री स्वामी सोहनलाल जी महाराज ने विदनचंद्रादि तपागच्छियों का निम्नलिखित प्रश्न किये ॥

१ आप लोग प्रतिमा जी की आशातना ८४ मानते हैं कहना चाहिये अतिशय प्रतिमा की कितनी हैं ॥

जैसे कि अहत देव की जन्म अतिशय १ दीक्षा के पश्चात जो अतिशय प्रगट होती हैं वा केवल ज्ञान के पीछे अतिशय प्रादुर्भूत हैं सर्व का वर्णन पृथक् २ है ऐसे ही प्रतिमा जी की बतलाइये ॥

२ भगवन् की आज्ञा दया में है या हिंसा में यदि हिंसा में कहोगे तो नवकोटी प्रत्याख्यान कैसे रह सकता है जेकर दया में आज्ञा है तब आप का वर्ताव सूत्रानुसार नहीं है ॥

३ जब आप लोग भविष्यत काल में मोक्ष होने वाले जीवों को नमोत्थूण् के पाठ से वदना करते हैं तब जिन मंदिर में शिवजिा वा श्रीकृष्णजी की प्रतिमा क्यों नहीं *प्रतिष्ठित की जाती हैं क्योंकि शिवजी को आप के मत में अव्रति सम्यक् दृष्टि श्रावक माना गया है।

४ जब द्वारका जी भस्म होगई थी तब द्वारका में जिन मदिर थे वा नहीं यदि थे तब भस्म क्यों हुए यदि नहीं थे तब मत कल्पित सिद्ध होवेगा तथा फिर अतिशय कहां रही।

---

*देखो भाषा पूजा समह नामक पुस्तक पृष्ट ८४ की पंक्ति ४।५।६।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादि वीरान्त चतुर्विंशति जिन समूह अत्र अव तर अवतर संवौषट ॥ ॐ ह्रीं श्री वृषभादि वीरान्त चतुर्विंशति जिन समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ॥ ॐ ह्रीं श्री वृषभादि वीरान्त चतु र्विं शति जिन समूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट ॥ यह तो आह्वान का प्रमाण अब विसर्जन का प्रमाण भी देखिये उक्त ही पुस्तक के पृष्ट ५८ की प्रथम वा द्वितीये पंक्ति पूर्वार्थे के बाद विसर्जन करना चाहिये इत्यादि सो यह प्रतिष्ठा वा पूजा करने वाले मंत्र हैं ॥

प्रियवरो १ यह लोक प्रतिष्ठा के समय मोक्ष प्राप्त तीर्थंकरों का आव्हानादि कर्म करते हैं और मंत्र भी पढ़ते हैं ॥

५ द्रौपति जी ने किस जिनकी पूजा करी वह जिनका क्या नाम कब उसका मंदिर बना किस आचार्य ने प्रतिष्ठा करवाई।

६ भगवान् ने किस नगरी में प्रतिमा के पूजन का उपदेश किया किस श्रावकने धारण किया विधि विधान भी पूछा ३२ सूत्रमें कौनसा सूत्र कौनसा श्रावक और पञ्च समित त्रिगुप्ति का क्या स्वरूप है।

७ हिंसा का कारण क्या है दयाका कारण क्या है ? और इन के कार्य क्या २ बनते हैं।

८ नमस्कार मंत्र के पंच पदों के ४ निक्षेप कैसे बनते हैं फिर वह वंदनीय कितने हैं अवंदनीय कितने हैं।

इत्यादि जब प्रश्न पूछे भला यहां उत्तर की क्या आशा थी तब विल्लभचंद्रजी कहने लगे कि हमतो भी पूज्य महाराज के दर्शन करने वास्ते आये हैं तब श्रीसोहनलालजी महाराजने कहाकि हां दर्शन करें।

अपितु जब विल्लभचंद्रादि साधु जाने लगे, तब फिर कहने लगे कि यदि आत्मारामजी ने दर्शन करने होवें तो वह भी करलेवें तब श्री पूज्य महाराज ने कृपाकरी जैसे उसकी इच्छा हो फिर विल्लभचंद्रजी बोले ? यदि प्रश्नोत्तर करने होवें। तब श्रीपूज्य महाराज ने कृपा करी कि—यदि आत्माराम जी की इच्छा प्रश्नोत्तर करने की है तो हम तय्यार हैं। यदि किसी और से करने हों या किसी अन्यस्थान पर करने हों तो हम श्री सोहनलाल जी को भेजेंगे।

भला प्रश्नोत्तर किसने करने थे ? यह तो केवल कहने मात्र ही था ? जब विल्लभचंद्रादि चले गये।

तब श्री सोहनलाल जी महाराज ने १०० प्रश्न लिख कर आत्माराम जी को भेजे तब आत्माराम जी ने १०० प्रश्न लेकर जंडियाला की ओर विहार कर दिया।

किन्तु उत्तर देने का काम ही क्या था।

फिर श्री पूज्य महाराज को लोगों की अतीव विज्ञप्ति होने लगी तब श्री महाराज ने १९३७ का चौमासा अमृतसर में ही कर दिया ?

चौमासा में धर्मोद्योत बहुत ही हुआ किन्तु चतुर्मास के पश्चात् अब बलक्षीण हो जाने के कारण से श्री पूज्य महाराज अमृतसर में ही विराजमान हो गये। सो श्री पूज्य महाराज के विराजमान होने से द्रव्य क्षेत्र, कालानुसार श्रावक जन धार्मिक कार्य करने लगे। और फिर अमृतसर में ही तीन पुरुषों को दीक्षा श्री पूज्य महाराज ने प्रदानकरी। जैसे कि—श्री स्वामी मानकचन्द्र जी महाराज १, श्री स्वामी केसरीसिंहजी महाराज२, श्रीस्वामी देवीचन्दमहाराज ३॥

किन्तु काल की विचित्र गति है यह सब को ही देखता रहता है समय को न देखता हुआ किसी निमित्त को सन्मुख रख कर शीघ्र ही आ घेरता है सो १९३८ आषाढ कृष्णा १५ का श्री पूज्य महाराज ने पक्षी तपस् किया फिर आषाढ शुक्ला प्रतिपदाका जब पारणा हुआ सो वह सम्यक् प्रकार से प्रणमत न हुआ तब श्री पूज्य महाराज ने अपने ज्ञान बल से अपनी आयुको ज्ञात करके पुनः आलोचणादि सर्व विधि विधान करके और सर्व जीवों से क्षमापन (खमावना) करके शान्ति भावों से श्री संघ के सन्मुख दिन के ३ तीन बजे के अनुमान अनशन कर दिया॥

फिर परम सुन्दर भावों के साथ मुखसे अर्हन् अर्हन् का जाप करते हुए १९३८ आषाढ शुक्ला द्वितीय दिन के १ बजे के अनुमानश्री पूज्य महाराज इस अनित्य संसार से स्वर्ग गमण हो गये॥

तब ही देश में श्री संघ का शोक उत्पन्न होगया पुनः अमृतसर के श्रावक मंडल ने तारद्वारा नगर २ में श्री पूज्य महाराज के स्वर्गवास होने का समाचार सूचित किया सो समाचार सुनते ही ग्राम २ नगर २ का श्रावक मंडल अमृतसर में ही उपस्थित होगया।

और लोग नाना प्रकार के शब्दों से मोहोदय से विलापात करते थे क्योंकि एक प्रकार का उस समय सूर्य अस्त ही हो गया था श्री पूज्य महाराज वीर शासन में सूर्य वत् प्रकाश करने हारे थे फिर श्री स्वामी सोहनलाल जी महाराज ने श्री संघ को महान् संसार की अनित्यता दिखलाई॥

फिर लोग निरानंद होते हुए एक सुन्दर विमान बना के तिस में श्री पूज्य महाराज के शरीर को आरूढ करके महान् महोत्सव के साथ जिन क व्रिमानो परि ९४ दुशाले पड़े हुए थे वादित्र बजते हुए मृत्यु संस्कार की भूमि में पहोंच गये ॥

फिर चंदन के साथ मृत्यु संस्कार किया गया जिन लोगों ने उक्त महोत्सव को देखा है वह लोग महाराजा रणजीतसिंह जी के मृत्यु महोत्सव की उपमा दिया करते हैं ॥

तात्पर्य यह है कि–जैसा श्री पूज्य महाराज जी का पवित्र मृत्यु समाधि युक्त हुआ था तैसे हो लोगों ने परम महोत्सव के साथ श्री पूज्य महाराज के शरीर का अग्नि संस्कार किया ॥

मित्रवरो श्री पूज्य महाराज ने इस भारत भूमि म जैन मार्ग का परम प्रकाश किया। और आत्मा की शुद्धि अर्थ जिन्हों ने एक से लेकर ३३ उपवास पर्य्यन्त तप किया और प्रति चौमासामें एक अष्टा दश भक्त त्याग रूप तप करते रहे अर्थात् हर एक चौमासा में एक अठाइ करते थे आपका सर्वदीक्षा काल चतुर्विंशति वर्ष हुआ और भी आपने बहुतसे षष्टम् अष्टम् अर्द्ध मास मास इत्यादि तप किये ॥ आप प्राकृत १ संस्कृत २ और जैनसूत्रों वा परमत के शास्त्रों के भी वेत्ता थे। सो ऐसे महानाचार्य्य के स्वर्गवास को देख कर भव्य जन संसार को अनित्यता विचारते थे। क्योंकि जब इस भूमि पर तीर्थंकर चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव इत्यादि न रहे तो भला अन्य की तो क्या ही बात है। इत्यादि विचारों से लोगोंने आत्मा को शान्त किया फिर आचार्य पद स्थापन करने की सम्मति होने लगी क्योंकि सूत्रों में यह कथन है कि आचार्य उपाध्याय बिना गच्छ के मुनियों का विचरना नहीं कल्पता है किन्तु श्री पूज्य महाराज के द्वादश *शिष्य हुए जिन के निम्नलिखित नाम हैं तद्यथा ॥

---

* वर्तमान काल में श्री पूज्य महाराज के शिष्यों का परिवार

देव तो किसी के भी घर के देव नहीं हैं अपितु अणगार हैं और देवाधिदेव हैं। तथा यदि मूर्त्यादि सिद्ध करोगे तब सम्यक्त्व में दूषण लगता है कामदेव श्रावक के स्वरूप को पढ़के देखो॥

३ ओघनिर्युक्ति के प्रमाण से आत्मारामजी ने द्रौपदी जी को विवाह से प्रथम मिथ्यादृष्टिनी सिद्ध किया है देखो प्रश्न ५ वां जो आत्मारामजी ने १९२३ में ११ प्रश्न बूटेराय जी को पूछे थे तिन में। किन्तु अब आत्माराम जी मूर्त्ति विषय द्रौपदी जी का प्रमाण देकर भद्र पुरुषों को मिथ्यारूपी जाल में फंसाते हैं अब बतलाइये आत्माराम जी का कौन सा प्रमाण सत्य है, यदि प्रथम प्रमाण सत्य है तो अब प्रमाण देना मिथ्या है लेकर द्रौपदी जी का मूर्त्ति पूजन ही विषय सिद्ध है तो प्रथम प्रमाण असिद्ध हुआ जब ऐसा हो रहा है तब आत्मा रांम जी परस्पर विरोध कथन करने वाले सिद्ध हुए॥

४ किस अर्हन् ने किस स्थान पर मूर्त्ति पूजा का उपदेश किया है क्योंकि पांच महाव्रत और द्वादश श्रावक के व्रत इनका पूर्वविधि से उपदेश तीर्थंकर भाषित सूत्रों में विद्यमान है तो भला मूर्त्ति का विधि विधान क्यों नहीं कथन किया गया॥

५ तथा किस अर्हन् ने मूर्त्ति की प्रतिष्ठा करवाई क्योंकि जब तीर्थंकर देव सहस्रों जीवों को दीक्षित करते हैं सहस्रों ही जीवों को द्वादश श्रावक के व्रत ग्रहण करवाते हैं तो भला मूर्त्तिकी प्रतिष्ठा भी कराते होंगे सो किस सूत्र में उक्त विधान है॥

जब यह प्रश्न बाबू तिलोकचंद्र जी आत्मारामजी के पास लेगये और आत्माराम जी को सुना भी दिए किन्तु आत्माराम जी ने कुछ भी उत्तर नहीं दिया सत्य है उत्तर क्या देवें सूत्रों में कोई पाठ भी मिले अपितु कल्पित ग्रंथो में अनेक भद्र जीवों को भ्रान्तियुक्त करने वास्ते गाथा बना कर लिख धरी हैं जैसे कि श्राद्ध दिन कृत्य के चतुर्विंशति पत्रो परि लिखा है कि—

केवली जोगेपुच्छा कहणे बोही तहेव रवेउ।
किइत्थमुचियमिण्हि चेइयदव्वस्स वुड्डित्ता ॥१२०
रूव्व चदव्वसोमयाए सूरोवातेयवतया।
रइनाहव्वरूवेण भरहोव्वजणहठया ॥१०६॥
कप्पदु मुव्वचिंतामणिव्व चक्किव्वबासुदेवव्व।
पूइज्जतिजणेण जिण्णुद्धारस्स कतारा ॥१०७॥

भावार्थ।—इन गाथाओं का सारांश इतना हि है कि केवली भगवान् ने कहा है कि चैत्य द्रव्य की वृद्धि करने से मनोकामना पूरी होती है तथा काव्य कला की शक्ति चन्द्रवत सौम्यरूप तथा सूर्य समान कान्ति कामरूप जो जनों को मानदकारी कल्पवृक्ष तुल्य तथा चिंतामणि रत्न समान तथा चक्रवर्तीवासुदेव के समान पूज्यनीय होता है जो पवय जीर्ण मंदिरों का उद्धार करता है ॥

प्रिय मित्रवरो! यह मनोक्त कथन नहीं तो और क्या है क्योंकि किस केवली ने उक्त उपदेश किया है किस सूत्र में गौतम जी ने उक्त विषय कोई भी प्रश्न किया है सो इससे स्वतः ही सिद्ध हो जाता है कि यह सब नूतन ग्रंथकारों ही की लीला है ॥

फिर भत्तपच्चक्खाणपइन्ना में लिखा है कि —

नियदव्वमउव्वजिणिंद, भवणाजिणबिंबवरपइठासु।
वियरइपसरथपुत्थए,सुतित्थतित्थयरपूआसु ॥ ३१

भावार्थ।—इस गाथा में यह दिखलाया है कि श्रावक जिन मंदिर जिन बिंब प्रतिष्ठा जिन पूजा तथा पुस्तक लिखाने में धन को देवे इत्यादि तथा आराधना पइन्ना की ११ वीं गाथा में ऐसे लिखा है। तथाच।

जंविरईउविणासो चेईयदव्वस्सजविणासतो।
अन्नेउविविखउमे मिच्छामि दुक्कडतस्स॥

भावार्थ —यदि मैंने चैत्यद्रव्य का विनाश किया हो तथा विनाश करते को अनुमोदना करि हो तिस का मुझेमिच्छामि दुक्कड होवे॥

समीक्षा—मित्रवरो यह किस अर्हन का सत्योपदेश है किस सूत्र में अर्हत् ने मन्दिर के वास्ते धन देने की आज्ञा लिखी है तथा किस केवली ने प्रतिष्ठादि क्रिया करवाई हैं सो यह सर्व मनोक्त कथन हैं॥

प्रश्न —आनंद श्रावक ने श्रीमदुपासकदशांग सूत्र में लिखा है जिन पूजा करी है ऐसे हमारे आत्माराम जी सम्यक्त्व शल्योद्धार नामक ग्रंथ में लिखते हैं सो यह क्या उनका असत्य कथन है॥

उत्तर।—हे भव्यगण! यह आत्माराम जी का असत्य ही कथन है क्योंकि उक्त सूत्र में जिन पूजा का विधान ही नहीं है अपितु हमारे इस लेख को आत्माराम जी भी स्वीकार करते हैं॥

पूर्वपक्ष —आत्माराम जी ने किस पुस्तक में लिखा है कि उक्त सूत्र में जिन पूजा का विधान नहीं हैं॥

उत्तरपक्ष—सम्यक्त्व शल्योद्धार में॥

पूर्वपक्ष—यह लेख हमको भी दिखलायें॥

उत्तर पक्ष—देखिये सम्यक्त्व शल्योद्धार प्रथम वार का प्रकाशित हुआ पृष्ठ १११ महात्मा जी क्या लिखते हैं यद्यपि उपासक दशांगमाते पाठ देखा हो न थी कारण के पूर्वाचार्योंद सूत्रो संक्षेपीनां क्यांछेपिण आनंद श्रावके जिन प्रतिमा पूजीहती इत्यादि।

मित्रवरो! जब आत्माराम जी को उपासक दशांग में आनंद श्रावक के मूर्ति पूजा के विषय का पाठ मिलता ही नहीं तो भला आनन्द श्रावक जिन पूजा कर्ता कैसे सिद्ध होवेगा फिर जो यह लिखा है कि! सब संक्षेपित होगये हैं सो यह कथन भी युक्ति शून्य

ही है क्योंकि जब आनंद श्रावक का सूत्रकर्ता ने व्यापारादि वा द्वादश व्रत एकादश श्रावक प्रतिमा इत्यादि सब कथन कर दिये तो भलाविचारने की बात है कि एक नित्यनियम रूप जिन पूजा का ही पाठ संक्षेप करता था कि जिसकी आप के कथमानुकूल परम आवश्यकता थी इस से सिद्ध होता है कि यह कथन ही हठ रूप है।

फिर जो आत्माराम जी ने श्री समवायांग जी सूत्र का प्रमाण दे कर स्व सेवकों को आनंद किया है यह भी कथन आत्माराम जी का हासजन्य है क्योंकि :—

श्री समवायांग जी सूत्र में तो केवळ उपासक दशांग सूत्र का इतना ही कथन है कि, श्रावकों के नगर के नाम नगरों के बाहिर के उद्यानों के नाम फिर उद्यानों में जिन देवनों के मंदिर थे उनके नाम श्रावकों के धर्माचार्यों के नाम इत्यादि कथन हैं किन्तु जिन मंदिर का कहीं भी कथन नहीं हैं इसलिये आत्मारामजी का कथन अमान्य है। सो श्री पूज्य महाराज आत्माराम जी के साथ शास्त्रार्थ करने वास्ते जयपुर तक पधारे तो भला आत्माराम जी क्या शक्ति रखते थे कि श्री पूज्य महाराज के सन्मुख आते।

क्योंकि जिन लोगों ने आत्मारामजी के साथ प्रश्नोत्तर किये हैं वे कहते हैं कि आत्माराम जी को प्रश्नोत्तर करने की शक्ति बहुत ही न्यून थी।

जैसे कि लुधियाना में आत्माराम जी ठहरे हुए थे और श्री पूज्य महाराज भी लुधियाने में ही विराजमान थे तब श्रीमान् लाला दलियामल्ल, लाला सोहनलाल यह दो श्रावक आत्माराम जी के पास गये और पूछने लग कि ? हेमहाराम!

एक पुरुष ने श्रीरामचन्द्र जी का मंदिर बनवाया और एक ने

जंविरईउविणासो चेईयदव्वस्सजविणासतो।
अन्नेउविक्खिउमे मिच्छामि दुक्कडतस्स॥

भावार्थ —यदि मैंने चैत्यद्रव्य का विनाश किया हो तथा विनाश करते को अनुमोदना करि हो तिस का मुझेमिच्छामि दुक्कड होवे ॥

समीक्षा—मित्रवरो यह किस अर्हन का सत्योपदेश है किस सूत्र में अर्हत् ने मंदिर के वास्ते धन देने की आज्ञा लिखी है तथा किस केवली ने प्रतिष्ठादि क्रिया करवाई हैं सो यह सर्व मनोक्त कथन हैं ॥

प्रश्न —आनंद श्रावक ने श्रीमदुपासकदशांग सूत्र में लिखा है जिन पूजा करी है ऐसे हमारे आत्माराम जी सम्यक्त्व शल्योद्धार नामक ग्रंथ में लिखते हैं सो यह क्या उनका असत्य कथन है ॥

उत्तर।—हे भव्यगण ! यह आत्माराम जी का असत्य ही कथन है क्योंकि उक्त सूत्र में जिन पूजा का विधान ही नहीं है अपितु हमारे इस लेख को आत्माराम जी भी स्वीकार करते हैं ॥

पूर्वपक्ष —आत्माराम जी ने किस पुस्तक में लिखा है कि उक्त सूत्र में जिन पूजा का विधान नहीं हैं ॥

उत्तरपक्ष—सम्यक्त्व शल्योद्धार में ॥

पूर्वपक्ष—यह लेख हमको भी दिखलावें ॥

उत्तर पक्ष—देखिये सम्यक्त्व शल्योद्धार प्रथम वार का प्रका शित हुआ पृष्ट १११ महात्मा जी क्या लिखते हैं यद्यपि उपासक दशांगमाते पाठ देखा तो नथी कारण के पूर्वाचार्योंए सूत्रो संक्षेपीनां कर्याछेपिण आनंद श्रावके जिन प्रतिमा पूजीहती इत्यादि ।

मित्रवरो ! जब आत्माराम जी को उपासक दशांग में आनंद श्रावक के अर्चि पूजा के विषय का पाठ दिखता ही नहीं तो भला आनंद श्रावक जिन पूजा कर्त्ता कैसे सिद्ध होवेगा फिर जो यह लिखा है कि ! सब संक्षेपित होगये हैं सो यह कथन भी युक्ति शून्य

ही है क्योंकि जब भानद श्रावक का सूत्रकर्ता ने व्यापारादि था द्वादश व्रत एकादश श्रावक प्रतिमा इत्यादि सब कथन कर दिये तो महाविचारने की बात है कि एक नित्यनियम रूप जिन पूजा का ही पाठ संक्षेप करना था कि जिसकी आप के कथनानुकूल परम आवश्यक्ता थी इस से सिद्ध होता है कि यह कथन हो हठ रूप है।

फिर जो आत्माराम जी ने श्री समवायांग जी सूत्र का प्रमाण दे कर स्व सेवकों को आनंद किया है वह भी कथन आत्माराम जी का हास्यजन्य है क्योंकि :—

श्री समवायांग जी सूत्र में तो केवल उपासक दशांग सूत्र का इतना ही कथन है कि, श्रावकों के नगर के नाम नगरों के बाहिर के उद्यानों के नाम फिर उद्यानों में जिन देवों के मंदिर थे उनके नाम श्रावकों के धर्माचार्यों के नाम इत्यादि कथन हैं किन्तु जिन मंदिर का कहीं भी कथन नहीं हैं इसलिये आत्मारामजी का कथन अमान्य है। सो श्री पूज्य महाराज आत्माराम जी के साथ शास्त्रार्थ करने वास्ते जयपुर तक पधारे तो भला आत्माराम जी क्या शक्ति रखते थे कि श्री पूज्य महाराज के सन्मुख आते।

क्योंकि जिन लोगों ने आत्मारामजी के साथ प्रश्नोत्तर किये हैं वे कहते हैं कि आत्माराम जी को प्रश्नोत्तर करने की शक्ति बहुत ही न्यून थी।

जैसे कि लुधियाना में आत्माराम जी ठहरे हुए थे और श्री पूज्य महाराज भी लुधियाने में ही विराजमान थे तब श्रीमान् लाला बलियामल्ल, लाला सोहनलाल यह दो श्रावक आत्माराम जी के पास गये और पूछने लग कि ! हेमहात्मन्।

एक पुरुष ने श्रीरामचन्द्र जी का मंदिर बनवाया और एक ने

श्री पार्श्वनाथ तीर्थंकर का मंदिर बनादिया सो आप कृपा करें कि द्वादशमा स्वर्ग किस के लिये है क्योंकि जैन सूत्रों में लिखा है कि।

श्रीरामचन्द्र जी और श्रीपार्श्वनाथ जी यह दोनों ही महापुरुष मोक्ष में गये हैं।

तब आत्माराम जी ने कहा कि, श्रीपार्श्वनाथ जी के मंदिर के बनवाने वाला तपसंयम के बल से द्वादशमें स्वर्ग में जासका है किन्तु रामचन्द्र जी के विषय में कुछ नहीं कह सक्ता।

तब श्रावकों ने कहा कि ! क्यों नहीं आप कह सक्ते जब कि आप मंदिर के उपदेष्टा हैं फिर आपने तपसंयम के साथ द्वादशमा स्वर्ग माना है तो फिर मंदिर की अधिकता ही क्या रही।

इतने कहने पर आत्माराम जी क्रोध के शरण जा प्राप्त हुए।

पाठकगण ! यह कैसी निर्बलता का लक्षण है जब कि दोनों ही महात्मा मोक्ष में गये फिर एक के पूजक को १२वां स्वर्ग। एक के पूजक को मौन ! वाह !!!

सो सत्य है जेकर दोनों ही पूजकों की द्वादशमा स्वर्ग आत्मा राम जी कहदेते तब आत्माराम जी का मतही विध्वंसित हो जाता।

सो हठ धर्म को प्राप्त हुआ जीव क्या २ नहीं कार्य करता और किस २ को नहीं दोषारोप्पण करता अर्थात् सब को ही दोष देता है।

जैसे कि सम्यक्त्व शल्योद्धार नामक ग्रंथ के १० वें पृष्ठो परि लिखा है कि ! अने गृहस्था वास मापण तीर्थंकर सिद्धनी प्रतिमा पूजेछे इत्यादि।

समालोचना ! प्रथम तो सिद्ध ही अरूपी हैं अब कहिये अरूपी की प्रतिमा कैसे बन सक्ति है।

फिर तीर्थंकर देव गृहस्थावास में ही ३ ज्ञान के धारक थे

किस प्रकार अजीव में जीव संज्ञा धारण करते होंगे क्योंकि यह मिथ्यात्व कर्म है ।

क्योंकि आत्माराम जी भी तत्व निर्णय प्रासाद नामक ग्रंथ के ३५२ पत्रोपरि लिखते हैं कि ।

प्रतिमा स्वल्प बुद्धीनां ! अर्थात् प्रतिमा का पूजन अल्प बुद्धिवालों के वास्ते ही है ! सो क्या आत्मारामजी ने तीन ज्ञान के धारकों को अल्प बुद्धिवाले नहीं सिद्ध किया है अवश्य मेव किया है ! सो यह क्या महात्मा जी की बुद्धि का परिचय नहीं है ! अवश्य है ।

तथा सदैव काल से जीवों की लाभ में अधिक रुचि होती है सो लोभ के वशीभूत हो कर बहुत से भव्यजन धर्म से भी पतित हो जाते हैं ॥

जैसे कि ! आत्माराम जी के जीवनचरित्र के १४ व पृष्टोपरि लिखा है कि ! अहमदाबाद में एक दिन श्री संघ ने सलाह करके श्री महाराज श्री साहिब आत्माराम जो से प्रार्थना करी कि आपने देश पंजाब में जो नये श्रावक बनाये हैं तिन को हम मदद देनी चाहते हैं तब आत्माराम जी ने कहा कि तुमारी मरजी तुमारा धर्म ही है कि अपने स्वधर्मियों को मदद देनी इत्यादि पाठकगण फिर बहुत से पदार्थ अहमदाबाद से पंजाब देश में आप सो कई मद्रजन मार्ग से पराङ्मुख हुए क्योंकि अर्हन् प्रभु का धर्म क्षयोपशमभाव का है न तु लोभ का।

किन्तु महात्मा आत्माराम जो का यह धर्म ही था कि जिस से गुण लिया जावे उसी ही की असत्यरूप निंदा करणी जैसे कि जीवन चरित्र पृष्ट ६३ पर लिखा है कि ! और कितनेक लोकों के दिल म ढूंढकों का अभिप्रा चरण देखने से जैन धर्म के ऊपर द्वेष हो रहा था दूर किया ! क्योंकि लोकों को मालूम हो गया कि :—

जो मुखबन्धे हैं ये मलीन हैं और यह पीतांबर धारन करने वाले तपगछ धर्म प्ररूपक हैं अब इस बात नो किसी क्षत्रीय ब्राह्मण के

साथ बात चीत होने लगती है तो उसी वख्त ये कहने लग जाते हैं कि पंजाब देश के ओसवाल (भावड़े) तथा खंडरवाल तो श्री आनंद विजय (आत्माराम जी) महाराज ने सुधार दिये क्योंकि प्रथम तो यह भावड़े लोक मुहबंधे गधे गुरुओं की सोबत से बड़े ही मलीन हो गये थे और इसी वास्ते पंजाब देश में प्रायः सब जगा यह लंका के पुड़े के नाम से प्रसिद्ध थे अब भी जो शेष ढूंढक रह गये हैं उनको लोक बुरे समझते हैं और बम से परहेज भी रखते हैं इत्यादि पाठकवृन्द देखिये जिस श्री श्वेताम्बर स्थानक वासी मुनियों से विद्या पढ़ी और जिस मत में २० या २२ वर्ष व्यतीत किये उन लोगों का लंका के पुड़े के नाम से लिखना ऐसा साहस आत्मारामजी बिना कौन कर सका है फिर जो लिखा है कि—बुद्धिये गंधे हैं ! इत्यादि—

मित्रवरो ! क्या ही सुन्दर न्याय है कि जो पंच प्रतिक्रमण के अनुसार कार्य करने वाले हैं वह तो मलीन म शुद्ध किन्तु जो श्वेताम्बर सूत्रानुसार क्रिया में रक्त हैं वे गंदे हैं धन्य है आत्मारामजी की बुद्धि ॥

फिर लिखा है कि ! भावड़े लोक आत्माराम जी ने सुधार दिये तो क्या आत्मारामजी ने ओसवाल लोकों का ब्राह्मण क्षत्रीयादिकों से परस्पर कन्या दानादि का लेन देन करा दिया है नहीं तो कहिये प्रियगण ! उनका सम्बन्ध किन के साथ है ॥

फिर लिखा है ! ढूंढ़ियों से लोक परहेज भी रखते हैं मित्रगण ! इस विषय में मैं अधिक नहीं लिखता केवल इतना ही आप लोगों को स्मृति कराता हूं कि गुजरांवाले की बात स्मृति करलियो क्यों जो महात्माजी की प्रतिष्ठा पर बर्त्ताव हुआ था जिन समय तपागच्छियों से ब्राह्मण क्षत्रियों ने उदक सम्बन्ध भी छोड़ दिया था तो क्या यही सुधार किया ॥

किन्तु जो पुरुष इनके मत को देखता है वे इन को त्यागजाता है जैसे कि १९४७ का चौमासा श्रीपूज्य महाराज का मालेरकोटले में था और तब ही आत्माराम जी का भी चौमासा मालेरकोटले में ही था।

फिर श्रीपूज्य महाराज ने बहुत से तपागच्छियों के साथ प्रश्नोत्तर किये । और इस लोकों को अत्यन्त ही निरुत्तर किया ॥

अपितु यह लोग हठाग्र ही होनेसे स्वपक्षको त्याग नहीं करते हैं किन्तु सुबोध जन इन में रहना स्वीकार भी नहीं करते जैसे कि मालेरकोटलेमें ही एक महाशयने सवेगी मत को असत्य ज्ञात करके श्री पूज्य महाराज को शरण ली थी जिस का नाम गणेशीलाल था और तब ही लुधियामे से एक सवेगी संवेग मत को त्याग के रायकोट में श्री गणावछेदिक श्री गणपतिराय जी महाराज के पास पहोंच गया जिस का नाम खुशालचंद था इत्यादि और भी कई भव्य जन इसी प्रकार इस मन कल्पित मत के साथ वर्त्ताव करते हैं क्योंकि सूत्रों मे पुनः २ यही कथन है कि ! आत्मा तप संयम से ही पार होता है न तु अन्य पदार्थों से ॥

सो इसी प्रकार योगशास्त्र में हेमचन्द्राचार्य अपने बनायेद्वितीय प्रकाश में लिखते हैं कि ॥

*कंचण मणि सोवाण थभसहस्सो सियंभुवणतल जोकारिज्ज जिणहर तओवि तवसंजमो अहिओ ॥११॥

अस्यार्थ—हेमचन्द्राचार्य कहते हैं कि ! किसी पुरुष ने सुवर्ण मण्यादि युक्त सहस्रों स्तंभों से विभूषित परम रमनीय ऐसा जिन मंदिर बनाया किन्तु तिस से भी तप संयम का फल महान है ॥

---

*काञ्चनमणिसोपानंस्तम्भसहस्रोच्छ्रितंसुवर्णतलम ।
यःकारयेज्जिनगृहंतस्माऽपितप' संयमोऽधिकः ॥ १ ॥
कछरदमणतगुणो ।

संबोधसत्तरिसूत्रोत्—

कंचणमणिसोवाणेथम्भ सहस्सूसिपसुवन्नतोले ।
आकारवेज्जजिणहरेतमोयितवसंजमो अणतगुणोत्ति ॥

पर्वपाठोदपयते ।

देखिये परमाचार्य्य जो युक्ति से मन्दिर का निषेध ही करते हैं किन्तु यह लोग हठ धर्म के वश हो कर युक्तियों का क्या समझते हैं।

फिर श्री पूज्य महाराज सम्वत् १९४८ में अमृतसर पधारे और आत्मारामजी था बहुत से संवेगी भी अमृतसर में ही आये हुए थे किन्तु श्रीपूज्य महाराज के सम्मुख किस की शक्ति थी कि ठहर सके। परंतु परस्पर कितनेक विज्ञापन भी प्रगट हुए जब श्रीपूज्य महाराज चर्चा के लिये तय्यार हुए तब ही आत्माराम जी अमृतसर से चलपड़े सत्य है सूर्य के सम्मुख अंधकार कब ठहरे।

फिर श्री पूज्य महाराज ने चौमासे के पश्चात् जेजों (पथरांवाली) में संवेगियों को पराजय किया।

इस प्रकार हुशीआरपुर में भी बहुत से प्रश्नोत्तर होते रहे किन्तु आत्माराम जी प्रतिमा पूजन सूत्रों से नाही सिद्ध करसके तब ही हुशिआरपुर में लाला धूटेराय जी, लाला चौकसमल्ल, कृपाराम चौधरी इन भाईयों ने आत्माराम जी के कथन को सूत्रों से विरुद्ध ज्ञात करके श्रीपूज्य महाराज से अच्छी प्रकार निर्णय करके श्री पूज्य महाराज से ही सम्यक्त्व धारण करी और तपागच्छ को सूत्रों से विरुद्ध जान के त्याग दिया॥

पाठकगणो ! हमारे प्रिय संवेगी भाईयों को भाव तीर्थंकरों से भी बिंब का अधिक राग है और इसी वास्ते भाव तीर्थंकरों के उपदेश का यह लोग अनादर करते हैं और लिखते भी इसी प्रकार हैं जैसे कि सम्यक्त्वशल्योद्धार के १३४वें पृष्ठ पंक्ति १५ पर आत्माराम जी लिखते हैं कि, भावतीर्थंकर थी पण
महापुरुषें तो होने उथापे छे
थाय छे इत्यादि।

(समीक्षा) देखिये अब।

सोखी। तब मानना ही पड़ेगा कि आत्मारामजी का आविद्यो स्वभाव था इसी वास्ते खखवाई जी सूत्र में लिखा है कि, ज्ञाति कुल शुद्ध होना चाहिये, पाठकगण हम आत्माराम जी के कथन की क्या समीक्षा करें हम को तो ऐसे वचन भी भाषण करने कल्पते नहीं हैं किन्तु आत्माराम जी शीघ्र ही अपने कहे वचन से पृथक् भी हो जाते थे ! जैसे किसी श्वेताम्बर ने आत्माराम जी से प्रश्न किया कि महात्मा जी जब आप भाव तीर्थंकर से प्रतिमा को अधिक मानते हो फिर उस प्रतिमा को स्त्रियें संघट्टा क्यों करती हैं तब इस बात का उत्तर महात्मा जी सम्यक्त्वशल्योद्धार के १२३ वें पृष्ठोपरि इस प्रकार लिखते हैं ॥

प्रतिमाछे ते स्थापनारूप छे माटेतेने स्त्री संघट्टा करेपण दोष नथी कारण के ते कांई भावअरहंत नथी पण अरहंतनी प्रतिमाछे इत्यादि।

(समीक्षा) पाठकगण देखिये, उक्तप्रश्न होने पर आत्माराम जी ने अपनी लेखनी को किस ओर करलिया है इस से सिद्ध होता है आत्माराम जी परस्पर विरुद्ध लिखने में भी किञ्चित् सकुचित भाव नहीं करते थे, क्योंकि प्रथम लेख में भाव तीर्थंकर से प्रतिमा अधिक सिद्ध करी है इस लेख में भावअर्हत्प्रतिमा से अधिक लिख दिए हैं ॥

फिर यह लोग तपकर्म भी सूत्रों से विलक्षण ही करते हैं जैसे कि, जिस नगर में जिन मंदिर नहीं होता वहां पर यह लोग यह अभिग्रह करके बैठ जाते हैं कि जब तक आप लोग मन्दिर नहीं बन पायेंगे तबतक हम तुम्हारे नगर में पारणा नहीं करेंगे ॥

तब बहुत से भोले भाई इस प्रपंच को ना जानते हुए इस गोरख जाल में फंस जाते हैं फिर षट्काया की हिंसा में कटिबद्ध होजाते हैं किन्तु विचार शील गृहस्थ इस बन्धन से युक्तिद्वारा मुक्त (छूट) हो जाते हैं ॥

जैसे कि, जीरे नगर के समीप एक सहवाद्द नामक ग्राम पसता है तिस ग्राम को सिद्ध करने के वास्ते कई सबेगी जन पधार गये फिर जाते ही तपसा करदी ।

फिर भाईयों ने विज्ञप्ति करि कि स्वामी जी पारणा करो अर्थात् घरोंसे दुग्धादि लेआवो ।

तब सवेगी जन कहन लगे कि यावत् काल आप लोग श्री मंदर जी की नींव नहीं रखेंगे तावत्काल हम यहां पर पारणा नहीं करेंगे तब सुश्रावकों ने कहा कि यह तो तप हमने किसी भी सूत्र में नहीं सुना तथा फिर भी हमारी इच्छा आप के तप कर्म मे अंतराय लेने की नहीं है क्योंकि एक तो आप के तप की हम अंतराय होवें द्वितीय षट्काया के वध करने वाले बनें तृतीय अर्हत् आज्ञा से विरुद्ध होवें इसलिये यह काम हमारे से नहीं बन पड़ता सो महाराज जी जितनी आप की इच्छा है यावत षट्मास पर्य्यन्त तपसा करें । जब इतना श्रावकों ने कहा तबही सवेगी साधु तपकर्मको म्युत्सृज्य करके विहार ही करगये । प्रियपाठ को यह सवेगी लोगोंके तप कर्म हैं ॥

अपितु श्री पूज्यमहाराज देश में जयविजय करते हुए तथा हांसी आदि नगरोंमें जो तेरा पंथीनामक एक जैनमतकी नूतन शाखा प्रचलित हो रही है जो कि अहिंसाधर्म से विरुद्ध कार्य्य कर रही है तिस को भी पराजय करके श्री पूज्यमहाराज १९११ में लुधियाने में पधार गये किन्तु लुधियाना में परम पूज्य शान्ति मुद्रा श्री संघ के हितैषी परम पण्डित महत् प्रख्यातियुक्त जिन की परमपवित्र वाग् शक्तियी आचार्य्यवर्य श्री मोतीराम जी महाराज विराजमान थे । तिस समय में ही श्री लालचन्द्र जी महाराज श्रीगोविन्दरामजी महाराज । श्रीशिवदयाल जी महाराज । श्री गणावछेदिक श्री गणपतिराय जी महाराज, श्री जयाराम जी महाराज इत्यादि ७२ साधुओं के अनुमान एकत्र हुए और श्री महासाध्वी पार्वती जी परमुख बहुत सी आर्याय भी एकत्र

ई, और अनुमान ७१ नगरों के बहुत से श्रावकजन भी दर्शनार्थ
ाये हुए थे और फिर महान् महोत्सव के साथ दो दीक्षा भी हुई।
व श्रीपरमाचार्य्य श्रीमोतीराम जी महाराज ने श्री सघ की
म्मत्यानुसार श्रीसोहनलाल जी महाराज का १९५२ चैत्र शुक्ला ११
ो युवराज पद पर स्थापन कर दिया ॥

और श्रीमती आर्य्या पार्वती जी को गणावच्छेदिका की पदवी
ी गई पुन: आनन्द के साथ महोत्सव पूर्ण हुआ ॥

किन्तु जिस समय में एक पुरुषोत्तम नाम का सवेगी आत्माराम
ी के आचार को कुत्सित देख कर श्रीपूज्य महाराज के पास
ीक्षित हुआ ॥

प्रश्न—हमने सुना है आप लोग जिस सूत्र में मूर्त्ति पूजा का
वधान आता है वह सूत्र लोगों को सुनाते ही नहीं जेकर सुनाते
वह पाठ जो मूर्त्ति पूजा को सिद्ध करता है उसे छोड़ जाते हैं और
हीं २ सूत्रों में जो भी पाठ मूर्त्ति पूजा से सम्बंध रखते हैं उन को
रताल से मिटा देते हैं सो क्या यह कथन सत्य है ॥

उत्तर—हे भव्य ! यह सर्वकथन मिथ्या है उक्त कार्य्य हम
हीं करते हैं और नाहीं सूत्रों में मूर्त्ति पूजा का विधान है ॥

सो इस प्रकार आत्माराम जी भी अपने बनाये *अज्ञान तिमिर
ास्कर नामक ग्रन्थ के द्वितीयखंड के २९४ पृष्ट पंक्ति १४वीं से
स प्रकार से लिखते हैं ॥

प्रश्न—तुमने कहा है जो सूत्रों में कथन करा है सो परूपण
रे जो पुन सूत्र में नहीं कहा है और, विवादास्पद लोकों में है कोई
से कहता, और कोई किसी तरह कहता है तिस विषयक जो कोई
ूछे तब गीतार्थ को क्या करणा उचित है ॥

उत्तर—जो वस्तु अनुष्ठान सूत्र में नहिं कथन करा है करणे

---

* यह द्वितीयावृत्ति के पत्र का प्रमाण है।

योग्य चैत्यवन्दन आवश्यकादिवत और प्राणातिपात की तरह सूत्र में निषेध भी नहीं करा है और लोकों में चिरकाल से रूढ़िरूप चला आता है सो भी ससार भीरु गीतार्थ स्वमति कल्पित दूषणे करी दूषित न करे गीतार्थों के चित्त में ये वात सदा प्रकाश मान रहती है सोई दिखाते हैं इत्यादि॥

फिर पृष्ट २९६ पंक्ति ७वी पर लिखा है कि चिरंतन जनोंने आचरण करी है तिस को अविधि कहकर के निषेध करते हैं, और कहते हैं यह क्रियाओं धर्मीजनों को करणे योग्य नहिं हैं तिन किन क्रियाओं विषय॥

चैत्य कृत्येपुस्नात्र बिंबप्रतिमा करणादि तिन विषे पूर्व पुरुषों की प रंपरा करके जो विधि चली आती है तिस को अविधी कहते हैं और इस काल की चलाई का विधि कहते हैं ऐसे कहने वाले अनेक दिखलाई देते हैं वे महासाहसीक हैं॥

प्रश्न—तिनोंने जो प्रवृत्ति करी है तिसको गीतार्थ प्रशसे के नहिं प्रशसे?

उत्तर—एक प्रवृत्ति को विनुयागम बहुमानसारभया है जिन को ऐसे गीतार्थ सूत्र संवाद के विना अर्थात् सूत्र में जो नहिं कथन करा है तिस विधि का बहुमान नहिं करते हैं किन्तु तिसका अवधीरण अर्थात् निरादर करके मध्यस्थ भाव से उपेक्षा करके सूत्रानुसार कथन करते हैं श्रोता अर्मोको उपदेश करते हैं इत्यादि॥

समीक्षा—पाठकगण उक्त कथन में आत्माराम जी स्पष्ट तया सिद्ध करते हैं कि जैन सूत्रों में चैत्यवंदन का विधान नहीं हैं किन्तु चिरकाल से रूढ़िरूप चलाआता है? सो सत्य है हम इस कथन को सहर्ष स्वीकार करते हैं! किन्तु जो सवेगीजन,यह कहते हैं कि सूत्रों,में स्थान २ पर मन्दिर पूजा का विधान है परंतु ढूंढिये

दिखलाते नहीं हैं सो क्या वे असत्य भाषण नहीं करते तथा क्या वे सूत्रों से अनभिज्ञ नहीं हैं अवश्य हैं ॥

क्योंकि यदि सूत्रों में आत्माराम जी को मूर्त्ति पूजा का पाठ मिलता तो फिर वे ऐसे क्यों लिखते कि सूत्रों में चैत्य वन्दन का विधान नहीं हैं सो उक्त कथन से सिद्ध हो होगया कि आत्माराम जी को कोई भी मूर्त्ति पूजा के विषय में सूत्रों से पाठ जब न मिला तब ही आत्माराम जी ने ऐसे लिखा ॥

किन्तु जब आत्माराम जो मूर्त्ति पूजा को रूढिरूप मानते हैं तो फिर भद्र जीवों को सूत्रों के नाम से क्यों भ्रम में डालते हैं सो यह इन का हठ है ॥

फिर लिखा है कि यह बात गीतार्थों के चित्तमें सदा प्रकाशमान रहती है सो सत्य है क्योंकि गीतार्थ हो इस बात को सूत्रों से विरुद्ध मानके अब पूजा का निषेध करते हैं !

सो हे सम्वेगी लोगो अब तो आत्मारामजी के ही कथन को स्वीकार करके जैन सूत्रों में मूर्ति पूजा चलो है इस असत्य रूप वाणी को छोडो ! यदि आप लोग आत्माराम जीसे अधिक विद्वान् हो तब तो आत्मारामजी के लेख को असत्य रूप सिद्ध करके प्रकाश करो यदि आत्मारामजी से स्वल्प विद्वान् हो तब इस असत्य कथन को त्यागो । फिर आत्माराम जी चैत्य वन्दन को रूढिरूप सिद्ध करते हैं ! सो भी यह कथन युक्ति बाधित ही है ।

क्योंकि यह रूढि भी षट्काया के वध रूपत्याज्य है जैसे हिंसक पर्व, फिर विचारणीय बात है यदि यह रूढि सत्य रूप होतो तो सूत्र कर्त्ता मूल सूत्र में ही रखते ।

अब सूत्र कर्त्ता ने मूल सूत्र में उक्त कथन को रखा ही नहीं इस से सिद्ध होगया कि यह कार्य सूत्र कर्त्ता से विरुद्ध है अर्थात सूत्र सम्मत नहीं है । और श्रीपूज्य महाराज का १९५३ का चौमासा

हुशियारपुर में था तिस काल में ही वीर विजय आदि संवेगियों का भी चौमासा हुशियारपुर में था किन्तु कोई भी संवेगी श्रीमहाराज के सन्मुख नहीं हुआ।

फिर श्री पूज्य महाराज ने १९५८ का चौमासा मालेरकोटले में किया। और तिस समय ही श्री परमाचार्य्य शान्ति मुद्रा ध्यान में समुद्रवत् श्री पूज्य मोतीराम जी महाराज वा श्रीगणावच्छेदिक श्री गणपतिरायजी महाराज इत्यादि साधुओं का चौमासा लुधियाने में था तब श्री पूज्य मोतीरामजी महाराज को ज्वर आने लगा अपितु सर्वाङ्गों की गति वृद्धि हो जाने से तथा आयुक्षय होने के कारण से श्रीपूज्य महाराज १९५८ आश्विन कृष्णा द्वादशी को स्वर्ग गमन हो गये।

तब चौमासे के पश्चात् श्री गणपतिराय जी महाराज वा श्री लाल चन्द्र जी महाराज इत्यादि २५ साधु पटियाले में एकत्र हुए फिर श्री संघने सम्मति करके अम्बाला निवासी लाला छज्जूमल्ल अल्ला मल्ल वा अमृतसर निवासी श्रावकों की सम्मति के साथ वा श्रीमान् लालाशिशुराम पटियालावालेकी भी सम्मति अनुकूलश्रीसंघमें महान् आनन्द के साथ,श्रीपूज्य मोतीरामजी महाराज की आज्ञानुकूल १९५८ मार्गशीर्ष शुक्ला ८ मी का बृहस्पति वार के दिन मध्यान्ह के समय पूर्वोक्त विधि के साथ श्री संघने श्री स्वामी सोहनलालजी महाराज को श्रीआचार्य पद पर स्थापन कर दिया तब से ही पत्रों में श्रीपूज्य सोहनलाल जी महाराज ऐसे लिखना आरंभ हो गया और श्री संघमें शान्ति के प्रभाव से अनेक धार्मिक कार्य होने लगे वा हो रहे हैं।

अपितु श्री पूज्य महाराज भगवन् वर्द्धमान स्वामी के ८९ पट्टो परि विराजमान हैं।

श्रीपूज्य महाराजने जैनधर्म का प्रचार ग्राम नगरोंमें करके १८६१ का चौमासा अमृतसर में किया॥

फिर चौमासा के पश्चात् जंघाबल क्षीण हो जाने के कारण वा शरीर में व्यथा के प्रयोग से श्री पूज्य महाराज अमृतसर में ही श्रीमान् लाला हरजसमदास सतलालकी कोठीमें विराजमान होगये ॥

किन्तु श्री आचार्य महाराज के पधारने से अमृतसर मे धार्मिक अनेक कार्य हुए वा हो रहे हैं।

प्रिय पाठको ! एक बात और भी तपागच्छियों में बडी प्रधानता से चल पडी है कि किसी अज्ञात मुनि को यह लोग किसी प्रकार के फंदे में वेष्टन करके सनातन जैनधर्मसे पतित कर देते हैं ! फिर आपही असत्य रूप निंदा लिख के उस के नाम से मुद्रित कराते हैं पुन कहते हैं, आर्यो यह प्रथम ढूंढिया था फिर इसने ढूंढियों का अनिष्टाचरण देख कर तथा जैन सूत्रों में स्थान २ मूर्ति पूजा के पाठों को पढकर (जो पाठ ढूंढिये किसी को सुनाते नहीं) विचार किया फिर सम्यक्त्व शल्योद्धार को देखा तब ही इस के चित्त में मूर्ति पूजा अर्हत् भाषितस्थित हो गई फिर इसने बडे २ ढूंढकों के साथ प्रश्नोत्तर किये किन्तु किसी भी ढूंढक ने इस को उत्तर नहीं दिया, तो फिर इस ने जान लिया कि यह ढूंढक मत तो स्व' कपोल कल्पित ही है पुन इसने शुद्ध सनातन जैनमत मूर्ति पूजा रूप स्वीकार करलिया, प्रियपाठको ! यह सब इनके स्वकपोल कल्पित कथन हैं हम आपको इस विषय का उदाहरण देते हैं ॥

जैसे कि अनुमान १९६४ वर्ष में वल्लभ विजय जीने अमृतसर से एक चूनीलाल श्वेताम्बर साधु को किसी प्रकार अपने फंदे में डाल कर बनारस जैन पाठशाला में भेज दिया ! और उसको एक लेख भी जैनमत की निंदा रूप लिखकर भेजा और साथ में यह भी लिख दिया कि आप अपने नामोपरि इस लेख को प्रकाशित करा दो तो चूनीलाल जी ने एक पत्र लिखकर वल्लभ विजय जी को भेजा जो पाठकों के जानने वास्ते सर्व पत्र की नकल जैसी है वैसी ही हम इस स्थान पर देते हैं देखिये !

श्री जिनेन्द्राय नमः।

विदित हो कि जो मजमुन यना कर आपने छपवाने के वास्ते मेरे कु भजा सो ऐसा मिथ्या रूप झूठा लेख में अपने नाम पर नहिं छपवा सकता आगे भि आप को लिखा गया था सख्त लेख में अपनि तरफ स नहिं छपवा सकता मगर हरज मरज के उम्मेंवार आप बनो तो मेरे को कोई हरकत नहिं ॥

और आपने जो यहां मेरे को पढने के लिये भेजा था सो मैंने पहले आप को कह दिया था कि पढकर जो मेरे को लाय मावेगा सो महण करूंगा जब में पन्दर तलाजे में था वहां से भि आपको लिखा गया था के मेरे ख्याल मजे आपके मजुब के नहीं है तो आपने एक पत्र में लिखा था कि तुम आचार गुचार मत देखो पढने कि तरफ ख्याल रक्खो, पढकरके जो तुम को अच्छा लगेगा सो करना तो फिर आप यों लिखते हो के उनके बरखिलाफ छपाओ और लोगों को लिखते हो के इसकी शंका ठीक करो इस वास्ते आप को कुछ प्रश्न लिखता हूं क्योंकि ! यों तो कोई ठीक करने वाला नहीं है सो आप ही कृपा करके शंका का समाधान करें जो मैं प्रश्न लिखता हूं उनका जुवाय मेरे को मूल पंतालीस आगमों के जरिये आत्मानन्द पत्रका लाहौर म छपवा कर प्रगट कर दो क्योंकि मेरी शंका भि ठीक हो जायेगी तदनंतर दुसरे प्राणीयों को लाभ होगा इन प्रश्नों का जवाब पन्द्रा रोज के भितर आत्मानन्द पत्रका लाहौर में प्रकाश करदें आगमो नुसार अब प्रश्न लिखते हैं।

प्रश्न १—जो पञ्च प्रतीक्रमण तुम तथा तुमारे सेवक (श्रावक) करते हैं वो पंतालिस आगमों से किस आगममें है।

२—इच्छाकारिसुहराइ, यें जो गुरु को शाता पुछने का सूत्र है सो किस आगम में चला है।

३—सामायक पारने का सामाइयवयजुत्तो जो सूत्र है सो कहां है।

४—जगचिंतामणि चैत्यवन्दन मन्त्र पढकर *मूरती को नमस्कार करनी किस शास्त्र में लिखी हैं।

५—नमोऽर्हत् सिद्धाचार्यो पाध्याय सर्व साधुभ्य ये मंत्र किस आगम मे हैं।

६—जावति चेइयाइ किस आगम में हैं।

७—उयसग्गहर लघुशान्तीस्तव जो प्रतिक्रमण में बोलते हो किस शास्त्र में लिखा है के प्रतीक्रमण में स्तोत्र पढने।

८—प्रतीक्रमण में स्तवन और सज्झाय बोलते हो सो कोण से आगम में चले हैं।

९—तीर्थ वन्दना जो तुमेरे पंच प्रतीक्रमण में है सो किस शास्त्र के जरीये।

१०—पोसहनुपच्चखाणवा पोसहपारवानी गाथा किस आगम मे हैं जो तुमारे मजब मे प्रचलित है।

११— सिद्धाचल पर्वत को चैत्यवंदन करनी ये काहां लिखी हैं।

१२—पालीताने के पास जो सेतरुंजी नदी है उस में स्नान करना महातम किस आगम से बतलाते हो।

१३—हर्डे और कोपरा जंगहर्डे इत्यादि वस्तु अणाहारक कहते हो सो किस आगम में ऐसी वस्तु को अनाहारक लिखा है साथ इस क ये भी निरणे किया जावे के पूर्वोक्त वस्तुओं को जो तुम रात्रो में खाते हो तो तुमारा रात्री भोजन व्रत भङ्ग होता है या नहीं।

---

*पत्र जैसे लिखा हुआ था तैसे ही यहां पर लिखा गया है किन्तु हमने पत्र को शुद्ध करना ठीक नहीं जानकरा क्योंकि लेखक की जो भाषा है वह मध्यजन शीघ्र ही जान लेंगे इस प्रकार अन्य पत्र भी शुद्ध नहीं किये गये, तथा यदि शुद्ध करके द्वितीया वार लिखते तो पुस्तक के अतीव वृद्धि होने का भय था।

१४–पञ्चमा धातु की छडीवाला दीलडर याने धातु की कलमें और वस्त्र रखने के लिये टोलकीयां पेटीया जिमत की दवोया असवार क लिये और खाने की वस्तु सुद इलायचीयों का तेल हर्र देवाए वैगेरा ये सर्व अगरे में दाखल हैं या नही और ये फैसला किया जावे के जे हैं तो तुमारा पचमा महा व्रत अगरे और छठा रात्रो भोजन वन भङ्ग हुआ या ना जेकर कहो के ये चिजे अगरे में सामल नहि तो पतलाओ किस में शामल है आगम से जवाब देना ग्रंथ का हवाला नही मञुर।

१५–हर्रे जो हैं सचित्त हैं के अचित्त।

१६–मूर्त्ति पूजा का उपदेश चौवी तीर्थंकरो में किस तीर्थंकर महाराज ने किया।

१७–मत्य जो न चोवीन तीर्थंकरों कोयां खोवो मर्त्तीयां पन वाइया पतलाते हो सो किस आगम में लिखा है।

१८–मूर्त्ती पर सचित्त जल वा पुष्प फलादि पदार्थ से प्राणाती पातादिक दोष लगता है यां नहीं।

१९–जैसे उत्तराध्ययन भगवती जी में व्रत पोषध समाइक पुछना पडेना मादिक का फल लिखा है वेसे किसि आगम में मुर्त्ती पूजा का फल लिखा हैं अ चला हैं ता लिखो, किस आगम में चला हैं।

२०–तुम लोक पेशाप वमानो के वकत इसतेमाल करते हो और करते हो देवार में कोइ हरकत नहि तो कहां लिखा है।

२१–जिस दिवाल में पेशाप करने को उसका फिरना पुछते हो और ना धोते हो ता क्या उस में छनाउम जीव पडने हैं के नही।

२२–देवने धर्मी हैं के अधर्मी हैं जवाब में शास्त्र का पाठ लिखना।

२३–तीर्थंकर बदने का हेत क्या हैं।

२४–मुह पत्ती हाथ में रखनी किस आगम में चली है।

२५—दशवै कालिक आचारांग जी में जो घोवन मत का पावला विक का वडा है वो कयो नहि लेते कया कारण।

दसखतघुमीलाल।

पाठकगण! इन प्रश्नों का उत्तर आत्मानंद जैन पत्रि का में प्रकाशित नहीं हुआ है विचारणे की बात है हमारे प्रिय सवेगी भाई सत्यादि प्रतों को त्यक्त करके कया २ काम कर रहे हैं क्योंकि सवेगमत में *शास्त्राभ्यास नो स्वल्प ही है किन्तु मन कल्पित रूप ग्रंथों का अभ्यास महान है इस वास्ते इन लोगों की बुद्धि विह्वल हो रही है, और फिर यह हमारे प्रिय भाई इसि वास्त प्रश्न का उत्तर न आने से शीघ्र ही क्रोध करने लगजाते हैं मुख से अपशब्द बोलते हैं।

उदाहरण! जैसे कि सम्वत् १९४७ में आत्माराम जी कसूर (कुशपुर) में ठहरे हुए थे तब श्री श्वेताम्बर स्थानक वासी श्रावक समुदाय जैसे कि लाला ओत्तमशाह †वधावेशाह जीवदेशाह, दिवानचंद, कृपाराम, लाला भासाराम, गुर्वदित्तेशाह, कुमिचंद, मानेशाह, विल्लेशाह, लाला गौरीदत्त रत्नशाह बाबू परमानंद पकीहर मातोराम, इत्यादि श्रावक आत्माराम जी के पास गये और यह प्रश्न किया!

कि आप हमको एक जैन शास्त्र के मूल पाठ से मूर्त्तिपूजा सिद्ध करके दिखलावें!

आत्माराम जी—जैनशास्त्र में मूर्त्तिपूजा का विधान है॥

---

*आत्मारामजी के जीवन चरित्र के पढने स भी निश्चय होता है कि। आत्माराम जी ने जो कुछ पठन किया है वे सर्व श्री श्वेताम्बर जैन मुनियों से ही किया है किन्तु सवेगमत के धारण करने के पश्चात् किसी भी सवेगी से कोई भा पुस्तक नहीं पढा है।

†उक्त नामों से कई श्रावक जन आत्माराम जी के पास नहीं गए थे और कई अन्य मिल गये थे!

श्रावकमंडल—कौनसे सूत्रमें है ॥

आत्माराम जी—दशवैकालिक सूत्र में है ॥

श्रावकमंडल—हम आपको श्रीमान लाला हरजसराय जी। भंडार से दशवैकालिक ला देते हैं आप हम को पाठ दिखला दें।

आत्माराम जी—अच्छा लादो।

श्रावकमंडल ने जब श्रीमान् लाला हरजसरायजी के भंडार में से श्री दशवैकालिक सूत्र लाकर आत्माराम जी को दिखलाया और कहा कि आप इस में मूर्त्ति पूजा दिखलावें तब आत्माराम जी ने श्री दशवैकालिक सूत्र के पीछे जो चूलिका लिखी होती है उस में से एक गाथा दिखलाई तब श्री श्रावकमंडल ने कहा कि यह सूत्र की गाथा नहीं है और आप की प्रतिज्ञा यह थी कि हम श्री दशवैकालिक सूत्र से दिखलावेंगे तो चूलिका न सूत्र है नाही प्रमाणीक है और इसका कर्त्ता कौन है ?

जब इतना श्रावक मंडल ने कहा तब आत्माराम जी क्रोधातुर होगये फिर अनुचित शब्द बोलने लग गये क्या जाने श्रावक मंडल अच्छे मुहूर्त में न गया होगा जिस वास्ते आत्माराम जी तपगये।

तथा श्री सूत्रकृतांग में ठीक कहा कि (भा वसे सरणं जंति) अर्थात् हारे हुए पुरुष को क्रोध ही का शरण है, सो इसी प्रकार आत्माराम जी ने श्री श्रावक मंडल के साथ वर्त्ताव किया ॥

मित्रगण, यह संवेगी लोग चैत्य शब्द से ही मूर्त्तिपूजा सिद्ध करणी चाहते हैं सो यह वही चैत्य शब्द है जिस के विषय अमरकोष में ऐसे उल्लेख है यथा :—

(चैत्यमायतनं तुल्ये.........मवदेव) अर्थात् चैत्य और आयतन यह दोनों नाम यज्ञशाला की भूमिका के हैं ॥

जिस को संवेगी लोग मूर्त्ति पूजा में व्यवहृत करते हैं शोक॥

प्रश्न—मूर्त्ति ध्यान का कारण है इस लिये ही पूजन योग्य है ॥

उत्तर—मित्रवर ! यह भी कथन आप का हास्ययुक्त है क्योंकि कारण के सदृश ही कार्य होता है सो चेतन का कारण जड़रूप नहीं हुआ करता यदि मूर्त्ति कारण मानोगे तो यथा कार्य पर्यंत बनावेंगे इसलिये चेतन के ध्यान का कारण जीव अजीवकी अनुप्रेक्षा ही है ॥

प्रश्न—जैसे सामायिक करने में आसनादिक की आवश्यकता है इसी प्रकार ध्यान के समय में मूर्त्ति की आवश्यकता है ॥

उत्तर—हे भव्य यह भी आप का कथन अमाननीय है क्योंकि आसनादिक की आवश्यक में केवलजीवरक्षा के वास्ते ही आवश्यकता है ना कि आसन पूज्यनीय है फिर जो महात्मा जिनकल्पी होते हैं वे आसनादि के भी त्यागी होते हैं इस लिये यह आपका हेतु कार्य साधिकनहीं है फिर*आसन अपूज्य है इसी प्रकार मूर्त्ति भी अपूज्य है। तथा तत्त्वनिर्णय प्रासादनामक ग्रंथ में जितने दिगम्बरों की ओर से आत्माराम जी ने मूर्त्तिविषय आक्षेप तो लिखे हैं किन्तु उनका युक्तिपूर्वक एक भी उत्तर नहीं दिया है अपितु उन उत्तरों से मूर्त्ति अमाननीयही सिद्ध होते हैं। यथा उदाहरण तत्त्वनिर्णय प्रासाद स्तम ३१ वां ॥

प्रश्न—जब जिन प्रतिमा जिनवर के समान मानते हो तो फिर जिन प्रतिमा के लिङ्ग का चिन्ह क्यों नहीं करते ।

उत्तर—जिनेन्द्रके तो अतिशय के प्रभाव से लिंगादि नहींदीखते हैं और प्रतिमाके तो अतिशय नहीं है इस वास्ते तिस के लिंगादि दिख पड़ते हैं इत्यादि ।

प्रियवरो ! देखिये जब जिन प्रतिमा को कोई भी अतिशय नहीं है तो फिर उस को आप तीर्थंकर से भी अधिक मानना सो क्या यह हठ धर्म नहीं है अवश्य है । तथा जो पदार्थ आप ही शून्य रूप है वे ध्यान

---

*केवल आसन पूज्यनीय नहीं होता है किन्तु आसनारूढ जीव शुद्ध रूप पूज्यनीय है अर्थात वंदनीय है ॥

दाता कैसे बन सका है। इसीलिये यह मूर्तिपूजा युक्ति या सूत्र द्वारा बाधित हो है। तथा जिस प्रकार यह लोग मूर्तिपूजा में हठ करते हैं इसी प्रकार मुखपत्ति विषय में भी बर्ताव करते हैं जिस के लिये अनेक सूत्रों या ग्रन्थों के पाठ होते हुए भी यह लोग मुहपत्ति हाथमें ही रखते हैं सो जिज्ञासुजनो ! इस के प्रमाणार्थ जैनहितेच्छु, पत्र ईस्वी सन् १९०१ माह जुलाइ, अंक ६ पृष्ट ६ से देखिये —

श्रीमान् संपादक वाडीलालजी लिखते हैं कि मुहपत्ति का सवाल के जिसको हमने बिल्कुल छोड दिया था उसको छेड के गंभीर रूप देने वाले भाइयो खुद जिन किताबों का मानते हैं उन किताबों का अभिप्राय यहां बतलाते हैं ? मुहपत्ति पाटा, दाडी, और जो तरकी भिन्नता ॥

हित शिक्षारास ? श्री विजयसन सूरि के प्रमाणिक श्रावक ने संवत् ११८२ में बनाया है उस में लिखा है कि :—

> मुखबाधेते मुहपति, हेठीपाटोधार ।
> अतिहेठेदाढाथइ, जोतरगलेनिवार ।१।
> एक कान भज सम कही,खभे पछेवडी ठाम ।
> केडेखोशीकोथली, नावे पुण्य ने काम ॥२॥

सब इस हास्य रस युक्त काव्य में मुहपत्ति का हेतु बराबर समआया है ? टेर्टे में पैसे की कसनो बांध रखने से क्या पुण्य होगा ? पैसे की कसनी तो हाथ में रखने से हो उपयोगी भी लब्धि विजय जी, साधु किस को कहते हैं सम्वत् १८१० में श्री लब्धि विजय जी महाराज ने, हरिबल मच्छी का रास बनाया है उस में प्रमाद संबंधी हाथ के बारे म उपदेश दिया है कि :—

> सुलभबोधी जीवडा मांहे निज षटकर्म,
> साधुजन मुखमुपति बांधी कहे जिन धर्म ॥ १ ॥

सुविहितमुनिजानीये मांडे निजषट कर्म ॥
साधुजन मुखमुपत्ति बाधी कहे जिन धर्म ॥२॥

श्री ओघनिर्युक्ति गाथा १०१६-१४ की चूर्णी।

चउरंगुलविहत्थी एयंमुहणतगस्सउपमाण बीय मुहप्पाण गणणपमाणेणइक्किक्कं ॥ १ ॥

सपाइमरय ेणु पमज्जणठावयंतिमुहपत्ति नासं-मुहच बधइ तीएवसहिंपमज्जंतो ॥ २ ॥

सपातिमसत्वरक्षणार्थंजल्पद्भिर्मुखेदियतेरजः सचितरेणुस्तत्प्रमार्जनार्थंमुखवस्त्रिकाभवति नासिकांमुखचवध्नातियया मुखवस्त्रिकयावसतिप्रमार्जयन्येनयेनमुखादोनरज प्रविशति । श्रीप्रवचनसारोद्धार गाथा ॥ ५२१ ॥ सपातिमजीवमाक्षिकाया रक्षणार्थं भाषमाणेर्मुखेमुखवस्त्रकादीयतेतथारज सचितपृथ्वीस्तत् प्रमाउर्जनार्थंच मुखपातिकांदीयत्ते ।

रेणुप्रमाज्र्जनार्थं प्रतिपादयति तीर्थंकरादयस्तथा वसतिं प्रमार्ज्जयन् साधुर्नासा मुख च बध्नाति आ-च्छादयति । पुरिमड्ढका प्रायश्चित ।

श्री महानिशीथ में मुखवस्त्रिका वगैरह इरिया वहिया पडिकमें वगणा—प्रति क्रमण सज्झायकरेंवांचमादे—छे तो पुरिमड्ढ का पायश्चित कहा है—योगशास्त्र की वृत्ति में वायमा पृच्छना के वखत मुहपत्ति बांधना कहा है ॥

ऐसा कह कर यवता ने गौतमस्वामी के एक हाथ की अंगुलि पकड़ के रस्ते में बातें करते करते दोनों चले। अब जब एक हाथ में झोली है और दूसरा हाथ यवता ने रोका है तब (जो मुहके आगे मुह,पत्ती नहीं बांधी हो तो)क्या गौतमस्वामी खुल्ले मुह से बातचीत करते गये होंगे॥

इस तरहें से चारों बाजु से विचार करनें से मुहपत्ती साबित होती है ऐसा होकर भी एक फकत मत की बात है कि कितने उसको अध्धर उड़ा देते हैं। व्याख्यान के वख्त भी मुहपत्ती नहीं बांधने वाले वर्ग के साधुओं को बादमरने के उनके कान छेद के मुहपत्ति बांधनी पड़ती हैं इससे सुस्पिष्ठ तरह से दुराग्रह साबित होता है। जिस मुहपत्ती को शास्त्र स्थापन करता है जिस मुहपत्ती का उपयोग पारसी आदि अन्य धर्म के गुरु भी धर्म कथा वख्त करत हैं॥

जिस मुहपत्ति को हाल के सुधरे हुए जमानें के युरोपियन डाक्टर चिरफाड के वक्त मुह के आगे बांधते हैं॥

जो मुहपत्ति खुद नहीं बांधने वाले आत्माराम जी महाराज उन्हों ने मान्य रखी और खुद क्यों नहीं बांधते इस के सबब बतलाने में पकड़े गये और अपने वर्ग में झूठे पड़े॥

ऐसी मुहपत्ति जैन मुनि का चिन्ह है। जैन योद्धे का हथियार है जैन शासन का शृंगार है और सब को माननीय है।।

नाभा में दो वक्त उसका जय हुआ यह कुछ आश्चर्य वार्ता नहीं उसका सर्वत्र हमेशा विजय,ही है लेकिन जिस का नाम मुहपत्ति मुह का पत्ति मुह को कब्जे में रखने वाली उसकू धर्म का बाह्य चिन्ह मानने वाले लोग उनके निंदकों के मुवाफिक चर्चा के बहानें से कभी यथा तथा मिथ्या भाषण तुच्छ शब्द बोलेंगे ही नहीं मुह ऊपर का पट बन्धु के जो सज्जनाई का लक्षण है उस को वर्जियाकार लोग निर्बलता ठहराने उससे क्या मुहपत्ति के भक्त निर्बल बन जायँगे गौतम की शरिष से कौन अजाण है॥

प्रिय पाठकगण ! यह सर्व उक्त लेख हमने यथावत उक्त पत्र से उद्धृत किये हैं सो उक्त कथनों से सिद्ध है कि जैन धर्म के मुनियों का चिन्ह मुहपत्ति मुहपर बांधना ही सिद्ध है सो इतने प्रमाण होते हुए जो संवेगी लोग मुहपत्ति मुख के साथ नहीं बांधते हैं वे उनका असत्य हठ है ॥

तथा जो यह लोग सुपुरुषों को पुनः पुनः कटु शब्द प्रदान करते हैं जिस का मूल कारण यही है कि जो शुद्ध पुरुष शास्त्रानुकूल शुद्धो पदेश करता है उस पुरुष से ही यह लोग प्रतिकूल हो जाते हैं और फिर उस को अनुचित शब्द बोलने वा लिखने लग जाते हैं । उदाह रण । जैसे कि श्रीमान् श्रावक लोंका जी ने सम्वत १५०८-९ के वर्ष में श्री अहमदाबाद में जैन धर्म का शुद्ध उपदेश किया तब ही यह लोग उसके प्रतिकूल हो गये और लोंका जी को अनुचित शब्द लिखने लग गये क्योंकि लोंका जी सूत्रानुसार उपदेश करते थे ॥

सो जो उपदेश लोंका जी ने किया था जिस समय में ही उन्हों ने एक पत्र में ६८ अंक युक्त लिख लिया था अपितु उसी पत्र का प्रतिरूप जीर्ण पत्र एक हमारे पास है सो उस (जो गुर्जर भाषा में है किन्तु यहां पर हिन्दी करके लिखते हैं) में से कुछ अंक वा अन्य शिक्षारूप अंक पाठकों के ज्ञातार्थ इस स्थान पर लिखता हूं ॥

१ केवली भगवान् त्रिकालज्ञ हैं सो उन्होंने तीन काल का स्वरूप स्व ज्ञान में ऐसे ही देखा है कि सम्यक् ज्ञान, सम्यक दर्शन सम्यक् चारित्र वा नवतत्त्वादि के जाने बिना कोई भी जीव मोक्ष में नहीं गया नहीं जावेगा अपितु प्रतिमा के पूजने से कोइ भी जीव मोक्ष नहीं गया है और नाही जायेगा नाही जाता है ॥

प्रिय पाठकगण ! यह सर्व उक्त लेख हमने यथावत् उक्त पत्र से उद्धृत किये हैं सो उक्त कथनों से सिद्ध है कि जैन धर्म के मुनियों का चिन्ह मुहपत्ति मुहपर बांधना ही सिद्ध है सो इतने प्रमाण होते हुए जो संवेगी लोग मुहपत्ति मुख के साथ नहीं बांधते हैं वे उनका असत्य हठ है ॥

तथा जो यह लोग सुपुरुषों को पुनः पुनः कटु शब्द प्रदान करते हैं तिस का मूल कारण यही है कि जो शुद्ध पुरुष शास्त्रानुकूल शुद्धोपदेश करता है उस पुरुष से ही यह लोग प्रतिकूल हो जाते हैं और फिर उस को अनुचित शब्द बोलने वा लिखने लग जाते हैं। उदाहरण। जैसे कि श्रीमान् श्रावक लौंका जी ने सम्वत १५०८-९ के वर्ष में श्री अहमदाबाद में जैन धर्म का शुद्ध उपदेश किया तब ही यह लोग उसके प्रतिकूल हो गये और लौंका जी को अनुचित शब्द लिखने लग गये क्योंकि लौंका जी सूत्रानुसार उपदेश करते थे ॥

सो जो उपदेश लौंका जी ने किया था तिस समय में ही उन्हों ने एकत्रिंश १८ अंक युक्त लिख लिया था अपितु उसी पत्रका प्रतिरूप जीर्ण पत्र एक हमारे पास है सो उस (जो गुर्जर भाषा में है किन्तु यहां पर हिन्दी करके लिखते हैं) में से कुछ अंक वा अन्य शिक्षारूप अंक पाठकों के ज्ञातार्थ इस स्थान पर लिखता हूं ॥

१ केवली भगवान् त्रिकालज्ञ हैं सो उन्होंने तीन काल का स्वरूप स्व. ज्ञान में ऐसे ही देखा है कि सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन, सम्यक् चारित्र वा नवतत्त्वादि के जाने बिना कोई भी जीव मोक्ष में नहीं गया नहीं जायेगा अपितु प्रतिमा के पूजने स कोइ भी जीव मोक्ष नहीं गया है और नाही जायेगा नाही जाता है ॥

और नाही सूत्रों में किसी मूर्ति पूजक का अधिकार है कि अमुक जीव मूर्ति पूजते पूजते मोक्ष हो गया ऐसे सर्वज्ञ आमनेना। सो ज्ञान दर्शन चारित्र से ही मोक्ष है देखो सूत्रकृताङ्ग प्रथम श्रुतस्कन्ध अ० ११ गाथा ११॥

२ जीवराशि अजीवराशि सूत्रों में यह दोनों ही राशि कही हैं सो यदि कोई तीसरी राशि प्रति पादन करे तो वह निन्हव है देखो सूत्र उववाई जी । प्रश्न १९ ॥

३ जो जीव को नहीं जानता अजीव को भी नहीं जानता तो भला संयम मार्ग कैसे जान सका है देखो सूत्र दशवैकालिक अ०४ ।

४ सम्यक्त्व के बिना सम्यक् ज्ञान नहीं सम्यक ज्ञान के बिना सम्यक् चारित्र नहीं सो सम्यक् ज्ञान सम्यक् दर्शन, सम्यक चारित्र के बिना मोक्ष नहीं उत्राध्ययन सू० अ० २८ ॥

५ साधु स्वरूप और असाधु वर्तुल्य है दशवैकालिक सू०अ०७ ॥

६ साधुओं के पञ्च महाव्रत सर्वथा प्रकारे हैं देश मात्र नहीं इसीवास्ते साधुओं को मंदिर का उपदेश करना सूत्र विरुद्ध है देखो सू० दशवैकालिक अ० ४ ॥

७ ज्ञान बिना दया नहीं दया ही संयम है सू० दश० अ० ४ ॥

८ भगवान् ने अपने मन्न से (अहिंसा संजमातवा) यही धर्म बतलाया है नतु मूर्ति पूजा ॥

९ भगवान श्री वर्द्धमान स्वामीजी ने शांत आहार ग्रहण किया तथा अन्य मुनियों को ग्रहण करने का उपदेश दिया देखो सूत्र आचारांग प्रथम श्रुतस्कंध अ०९ उत्राध्ययन अ०८ ॥

१० श्रावक केवली भगवान का ही प्रति पादन किया हुआ धर्म ग्रहण करे देखो सूत्र उववाईजी प्रश्न २० अपितु हिंसा धर्म न ग्रहण करे।

११ जो भगवान है सो भव है किन्तु शेष भव अनर्थ रूप है देखो सू० उववाई प्रश्न २० ॥

१२ साधु गृहस्थादिसे कोईभी कार्य न करावे सू०नशीथ उद्देश१॥

१३ *मिश्र भाषा भाषण करने वाला जीव महा मोहनी कर्म को

* आत्माराम जी के जीवन चरित्र में जो गुजरांवाले के विषय में लेख लिखे हैं वे सर्व अनुचित हैं ॥

प्रकृति पाघता है सू० समवायांग जी स्थान ३० वां अथवा दश दशा श्रुतस्कध ॥

१४ मिश्र भाषा सर्वथा ही त्याज्य है देखो सू० दशवै० अ०७ ॥

१५ सप्तनय चतुर्निक्षेप का स्वरूप अनुयोग द्वार जी सूत्र में है किन्तु भावनिक्षेप ही वंदनीय है अतु अन्य ॥

१६ साधुके अष्टादश पाप सेवनका त्याग सर्वथा प्रकारे है अतु देश । सो जब सर्वथा त्याग है तब अभिग्रहादि धारण करके मंदिरादि का बनवाना जिन पूजा का उपदेश करना कैसे हो सकता है, सावद्य कर्म सूत्र विरुद्ध है देखो सूत्र० उववाई जी साधुवृत्ति ॥

१७ जिस वस्तु पर मूर्च्छा भाव है वही परिग्रह है देखो सू० दशवैकालिक अ० ६ ॥

१८ भगवान् ने दोनों प्रकार का धर्म प्रतिपादन किया है सूत्र स्थानांग स्थानद्वितीय ॥

१९ गृहस्थ धर्म में द्वादश व्रत एकादश प्रतिमा ही हैं नाकि मूर्त्ति पूजा, देखिये उपासक दशांग सूत्र वा दशाश्रुतस्कंध सूत्र ।

२० अर्हन् प्रभु ही सूर्य्यवत् हैं देखो सूत्र उत्तराध्ययन अ०२३ ।

२१ साधु के नवकोटी प्रत्याख्यान है सो बतलाइये प्रतिमा का पूजन किस भांगे में है नवकोटी का स्वरूप देखो सू० स्थानांग स्थान ९ ॥

२२ राग द्वेष ही पाप कर्म के बीज हैं उत्रा०सू०अ०३२ ॥

२३ तपादि सुकर्म केवल निर्जरार्थे ही करे अतु अन्यार्थे ॥

२४ पाप पुन्य यह दोनों ही जब क्षय होवेंगे तब ही मोक्ष होवेगी देखो सू० उत्रा० अ० २१ ॥

२५ संयम से पतित हुए की प्रशंसा करे सो प्रायश्चित आता है देखो सूत्र नशीथ ॥

२६ दोनों प्रकार का मार्ग भगवान् ने बतलाया है बाक मुख्

पश्चित मृत्यु सो किस किस जीवों का कौन कौनसा मृत्यु होता है देखो सू० उत्रा० म० ५ ॥

२७ केवली वा १४ पूर्वधारी से लेकर १० पूर्वधारी पर्य्यन्त सर्व समभुत है नंदी जी सूत्र में देख लीजिये ॥

२८ जो केवली भगवान् ने अनाचीर्ण कहे हैं वे सर्व मुनियों को त्यागनीय हैं देखो सू० दशा० म० ३ ॥

२९ भगवान का प्रतिपादन किया हुवा धर्म एकान्त हितकारी है देखो सू० प्रश्न व्याकरण ॥

३० दयाका ही नाम पूजा है वा यज्ञ है प्रश्न व्याकरण सू०म०१

३१ सर्वेव ही शान्ति का उपदेश करना देखो सू०उत्रा०म० १०॥

३२ ज्ञानदर्शन चारित्र ही यात्रा है ज्ञाता जी सूत्र वा भगवती जी सूत्र में इस का वर्णन है ॥

३३ भगवान् ने संसार से पार होने के मार्ग पञ्च संवरही कहे हैं प्र० व्या० ॥

३४ श्री अनुयोगद्वार जी सूत्र में उभय (दोनों) काल साधु साध्वी श्रावक श्राविका को षडावश्यक करने की आज्ञा है नतु मंदिर पूजने की ॥

३५ सूत्रों में पुनः २ यह उपदेश है कि विद्या चारित्र से ही मोक्ष है नतु अन्य से सू० स्थानांग स्थान द्वितीय ॥

३६ जिन वचनों में किञ्चित् मात्र भी सावद्य उपदेश नहीं है देखो सूत्र आवश्यकादि ॥

पाठकगण जब श्रीमान लौंकाशाहजी ने इत्यादि प्रश्न पूछे वा सूत्रोक्त लोगों को सत्योपदेश सुनाया तब ही मूर्ति पूजक जन वा शिथिलाचारी लोक लौंकाजीको निंदा करने लग गये और उनके लिये अनुचित शब्द लिखने लगे सो यह वर्त्ताव इन लोगों का हठ धर्मसिद्ध करता है क्योंकि शुद्ध पूजा मुक्ति मार्ग के देने वाली है नतु द्रव्य पूजा शुद्ध पूजा कहो वा भाव पूजा कहो दोनों का एक ही अर्थ है इसलिये

भाव पूजा। विधान समाधि तन्त्र ग्रन्थमें कुन्दकुन्दाचार्यके शिष्य पर्वत नामक मुनिने समाधि तन्त्रके चालावाधमें इस प्रकारसे लिखा है॥

मैं अनन्त काल से भ्रमण करता था गुरु के उपदेश से सच सम रूप देव अपने ही पास देखा है और श्री गुरु के ही उपदेश से उपशम रूपी सरोवर के बीच में मैंने स्नान किया है जिस के करने से मेरा अज्ञान रूपी दाह नष्ट हो गया है और फिर मैंने अपने ही पास सिद्ध क्षेत्र देखा है पन अमूर्त्ति (जीव) को मूर्त्तिमान शरीर में भली प्रकार से निर्णय करलिया है फिर मैंने अमूर्त्तिमान जीव को शान्ति रूपी जल से शुद्ध किया है और शुद्ध भाव रूपी पुष्पोंसे मैंने पूजा भी करली है फिर सम्यक्त रूपी दीपक जलाकर मैंने आरती भी उतारी है और फिर मैंने आनन्द रूपी धोती (कटिबंधन) पहन के भाव पूजा करी है सो इस पूजा से अनादिकाल की दाह नष्ट करके आपी मोक्ष में जा विराजमान होता है॥

प्रियसुज्ञपुरुषो! यही आत्म पूजा है इस के करने से आत्मा शान्ति के मन्दिर में विराजमान हो जाता है। और जन्म मरण के दुःखों से भी मुक्त होजाता है सो है भव्य इसी पूजा का श्री आचार्य महाराज ने उपदेश दिया है इसलिये ही भव्य जीवों के बोधार्थ श्री महाराज का जीवन चरित्र लिखा है किन्तु हमारा मन्तव्य किसी के चित्त को मेदित करने का नहीं है। ना आशा है भव्य जन श्री मद्गणाचार्य पर्व श्री अमरसिंह जी महाराज के जीवन चरित्र को निरपक्षता से पढ़ के अवश्य ही अपने अमूल्य मनुष्य जन्म को सफल करेंगे॥

---

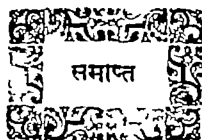
* उपसंहार *

मान्यवर महाशयो! सब विचार शील पुरुषों को मनुष्य जन्म प्राप्त करके योग्य है कि वे परोपकार हितैषिता आदि सुगुणों द्वारा अपने पौरुषिक बल से उन्नतार्थ सदैव काल परिश्रममें बद्ध रहें जैसे

कि श्री आचार्य जी महाराज ने परोपकार किये हैं अर्थात् जिन्हों ने परोपकार की आशा से असारः संसारोऽयं, गिरि नदी वेगोपम यौवन, तृणाग्निसमजीवनं, शरदभ्रच्छाया सदृशाभोगा' स्वप्न सदृशो मित्र पुत्र कलत्र भृत्यवर्गसम्बन्ध', इत्यादि सद्विचारों द्वारा परम वैराग्य तथा सुशीलता को उपार्जन कर इस क्षण भंगुर संसार को त्याग दिया और मुनि वृत्ति ग्रहण की क्योंकि कहा है :—भावौचित्येसत कार्यसत्ता सम्पद्यतेजरा, असतांतु पुनः कार्यमैथचित्ते कदाचन इति । पुनः आपने महत् योग्यतासे स्वल्प कालमें ही श्रुत विपाक इस्य तथा गूढाशय को ग्रहण किया पुन' तप क्षमा,दया,शान्ति इनकी महान स्वरसे उद्घोषणा की, और मृदु सुकोमल सत्योपदेश रूपी तीक्ष्ण शस्त्र से भव्य जीवों के हृदयों से मिथ्यात्व रूपी कठिन तरुओं को उत्पाटन किया, पुनः सुयोग्य मनोहर व्याख्यानोंसे अर्हंन्मत का उत्तेजन किया,प्रेमभाव तथा सम्पकी वृद्धि की, देश देशान्तरों में पर्यटन करके अनेका ही प्राणियों का अर्हन भाषित सत्य धर्म में उपस्थित करके दृढ किया, और स्व आत्म शुद्ध्यर्थे महान् तप किया पुन अध्यात्म योग द्वारा आत्मा को निर्मल और पवित्र बनाया और अत में अर्हम अर्हन् करते तथा मा हणो,मा हणो, ऐसा उपदेश करते हुए स्वर्ग गमन हो गये ॥

इसलिये प्रियवरो, ऐसे महामाचार्य के गुणानुवाद करने से तथा इनके गुणों का अनुकरण करने से वा इनका जीवनचरित्र पढ़नेसे जीव पापरूपी मल को व्युत्सृज करते हैं इसलिये प्रार्थना है कि ऐसे,महात्मा के नाम को चिरस्थायी करके मोक्षाधिकारी बनो ॥ सुज्ञेषुकिंबहुना ।

ॐ शान्ति' ! शान्तिः !! शान्तिः !!!



॥ श्रीजिनाय नमः ॥

प्रस्तावना।

सर्व विद्वज्जनों को विदित हो ! कि श्रीजैन सिद्धान्त प्रायः अर्द्ध मागधी भाषा में ही प्रतिपादन किये हुए हैं। क्योंकि जैन सूत्र (शास्त्र) श्री प्रश्न व्याकरण के द्वितीय श्रुत स्कन्ध के द्वितीयाध्याय में लिखा है कि—

(तहयकम्मुणाहुंसिद्दुवालसविहाय होइ भासा)

अर्थात्—द्वादश प्रकारकी भाषायें होती हैं यथा—*प्राकृत १ संस्कृत २ मागधी ३ पिशाचकी ४ सूरसेनी ५ अपभ्रंश ६ यही षट् गद्य रूप और षट् ही पद्य रूप एवं द्वादश प्रकार की भाषायें हैं। तथा जैन शास्त्रों (सूत्रों) से यह भी प्रगट होता है कि—प्राकृतादि षट् भाषायें अनादि से आर्य्य लोगों की भाषा हैं। इसी वास्ते जैन शास्त्रों ने प्राकृत वा मागधी आदि भाषाओं के धातु उपसर्ग क्रियादि प्रकरण प्रायः संस्कृत में ही रखे हैं। तथा वेदाङ्ग शिक्षा में भी दोनों (प्राकृत संस्कृत) भाषाओं को तुल्य वर्णन किया है जैसे कि—

---

*इकषट् भाषाओंके गद्यात्मपद् दो प्रकार के प्रयोग सिद्ध होते हैं यथा, सूरिमो यह शब्द प्राकृत भाषा में सूर्य्यका वाचक है १ महत्व यह संस्कृत भाषा में कल्याण का नाम है २ शिमाला मागधी भाषा में शृगाल को कहते हैं ३ उसमं पिशाच की भाषा में यह शब्द ग्रीष्म का वाचक है ४ कन्यो सूरसैनी भाषा में इसका अर्थ पुत्र है ५ हक्रते अपभ्रंश भाषा में मरुत का वाचक है ६ इत्यादि। किन्तु षडवही भाषाओं के प्रयोग प्राकृत से मिलते जुलते हैं अर्थात् इनका किञ्चित् ही भेद है।

त्रिषष्टिः चतुः षष्टिर्वा वर्णाः शम्भु मते मताः ।
प्राकृते संस्कृतेचापि, स्वयंप्रोक्ताः स्वय भुवा ॥१॥

सो सम्प्रति काल में जितने संस्कृत भाषा के व्याकरण उपलब्ध होते हैं तिनसे अति प्राचीन स्वल्प परिश्रम तथा बहु फल प्रद श्री शाकटायन व्याकरण है अतः पाणिनीय व्याकरण की अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय के चतुर्थ पाद के १११ वें सूत्र में शाकटायन मुनिका मत तथा सूत्र में नाम ग्रहण किया है यथाः—

(लङ' शाटायनस्यैव) अपितु स्वामी दयानन्द सरस्वती जी भी अष्टाध्यायी के कारक प्रकरण के हिन्दी भाष्य के ४८ वें पृष्ट में ऐसे लिखते हैं कि—(उपशाकटायनं वैयाकरणा) अर्थात् न्यून हैं अन्य व्याकरण शाकटायन व्याकरण से। सो सुज्ञ पुरुषो ! श्रीशाकटायना चार्य जैन मतानुयायिही सिद्ध हो चुके हैं। क्योंकि इस व्याकरणोपरि अनेक टीकायें जैनाचार्य्यों ने ही करी हैं। अपितु शाकटायनाचार्य भी अपने आपको श्रुत केवली देशीयाचार्य ऐसे नामसे लिखते हैं। जोकि जैनधर्मके उपसांकेतिक शब्द हैं। तथा जैन मतानुसारही प्रक्रिया है और चिन्ता मणि नामक टीकामेंयक्षवर्मा चार्य ऐसे प्रति पादन करते हैं कि—अल्पोपयोगी यही व्याकरण है जैसे कि —

* श्लोकः *

स्वल्पग्रन्थं सुखोपाय, सपूर्णंयदुपक्रमम् ।
शब्दानुशासनसार्वं महंच्छासनवत्परम् ॥ १ ॥
इन्द्रचन्द्रादिभि शाब्दैर्यदुक्तशब्दलक्षणम्
तदिहास्तिसमस्तच यन्नेहास्तिनतत्क्वचित् ॥२॥

इत्यादि बहुत से कथनों से स्पष्ट सिद्ध होगया कि—श्री शाक टायनाचार्य पूर्ण जैनानुयायी थे, सो अधुना में श्री शाकटायनाचार्य कृत शाकटायन व्याकरण वा हेमचन्द्राचार्य कृत सिद्ध हेमानुशासन (अपर नाम हेमचन्द्राचार्य कृत प्राकृत व्याकरण के) अष्टमाध्याय के सूत्रों से भव्य जीवों के प्रमोदार्थ नौमुकार युक्त महामन्त्र के धात्वादि का स्वरूप लिखता हूं। क्योंकि जैन मत में उक्त मन्त्र को प्रधान मन्त्र माना है। सो इस महा मन्त्र की व्याख्या पूर्ण रीति से करने के लिये तो महान् समय की आवश्यकता है किन्तु इस समय मैंने दिग् दर्शन मात्र व्याख्यापरिहीत्यर्थ लेखनी को आरूढ किया है आकांक्षा है, कि सज्जन जन इस महा मन्त्र को अध्ययन करके अवश्यमेव ही आत्मतत्त्व को प्राप्त करेंगे॥

मैं सब सविज्ञ पुरुषों से नम्रता पूर्वक प्रार्थना करता हूं कि यदि इस व्याख्या में किसी प्रकार की त्रुटि को देखें तो इस महा*मन्त्र के धात्वादि को शुद्ध करलें या सूचना द्वारा सूचित करें॥

---

* महाशय! महा मन्त्र को (नमोकार) मन्त्र भी कहते हैं अर्थात् द्वितीय नाम महा मन्त्र का नमोकार मन्त्र भी है परन्तु कई २ पुरुष नमोकार के स्थानोपरि नवकार मन्त्र ऐसे भी उच्चारण करते हैं सो यह भी सत्य है क्योंकि प्राकृत व्याकरण में इसका विवेचन ऐसे किया है यथा —

रुदनमोर्वः ॥ प्रा० व्या० अ० ८ पा० ४ सू० २२६॥
अनयोरन्त्यस्यवो भवति ॥

अर्थात् इस सूत्र से रुद् और नम धातु के अन्त वर्ण को वकार हो गया जैसे कि—(रुवइ) (नवइ) इत्यादि, इस सूत्र से (नवकार) ऐसे सिद्ध हुआ पुनः नमस्कार शब्द से नमोकार इस प्रकार से सिद्ध होता है जैसेकि —

अतः इस महा मन्त्रके धात्वादि की अधिक तर आवश्यकता है किन्तु कोई भी पुस्तक उक्त विस्तार युक्त दृष्टिगोचर नहीं हुआ इसी प्रयोजन से प्रेरित हो कर मैंने उक्त दो व्याकरणों के सूत्रों से इस की व्याख्या को लिखा है। सो महामाशा तथा दृढ़ विश्वास है कि पण्डित जन इस महामन्त्र की व्याख्या को पठन कर मेरे परिश्रम को सफल करेंगे॥

उपाध्याय जैनमुनि आत्मारामजी पंजाबी।

नमस्कारपरस्परद्वितीयस्य ॥ प्रा० अ०८ पा०१ सू०६२॥ अनयोर्द्वितीयस्य अत ओत्वं भवति ॥

इस सूत्र से नमस् शब्द के द्वितीय शब्द के मकार को अर्थात् नमस् शब्द के मकार के अकार को ओकार हो गया जैसे कि (नमोस्कार) पुनः—

क–ग–ट–ड–त–द–प–श ष स ≍ क ≍ पामूर्ध्वंलुक् ॥ प्रा० अ०८ पा०२ सू० ७७॥ एषांसयुक्तवर्ण सम्बन्धि मूर्ध्वस्थितानांलुक् भवति ॥

इस सूत्र से सकार का लोप हो गया, तब (नमोकार) ऐसे रहा पुनः—

अनादौ शेषादशयोर्द्वित्वम् ॥ प्रा०अ०८पा०२सू०८९ ॥ पदस्यानादौ वर्तमानस्यशेषस्यचादेशस्यद्वित्वं भवति।

इस सूत्र से ककार द्वित्व हो गया तब परिपक्व प्रयोग (नमोक्कार) ऐसे सिद्ध हुआ, अत एवं ह से न से म गो मान्ति तीनों प्रयोग शुद्ध सिद्ध हुए ॥

• श्री वर्द्धमानाय नमः •

॥ अथ महा मन्त्रः ॥

*नमो अरिहंताण । नमो सिद्धाण ।
नमो आयरियाण । नमो उवज्झायाण ।
नमोलोए सव्व साहूण । इति ।
भगवति सूत्र शतक १ उद्देश १ ॥

अर्थान्वय--(नमो)(नम) नमस्कार (अरिहंताणं) (अर्हद्भ्य) अर्ह्पूजायां धातु से जो शतृ प्रत्ययान्त हो कर अर्हत् शब्द बनता है तिसका नाम प्राकृत भाषा में अरिहंत है सो तिन अरिहंत भगवन्तों के तांई नमस्कार हो अर्थात उन को नमस्कार हो (नमो) (नम') नमस्कार हो (सिद्धाण) (सिद्धभ्य') षिधू गत्यां धातु से जो क्त प्रत्ययान्त हो कर सिद्ध शब्द बनता है अर्थात जो सिद्ध बुद्ध,अजर,अमर,अशरीरी, सर्वज्ञ सर्व दर्शी हैं तिनके तांई नमस्कार हो (नमो) (नम) नमस्कार हो (आयरियाण) (आचार्येभ्य) जो आङ् उपसर्ग पूर्वक चर्गति भक्षणयो धातुसे ऋदन्तात्यण् प्रत्ययान्त होकर सिद्ध होता है अर्थात्

---

* कोई २ पुरुष पक्षपात की मादरा को स्वहृदय में व्याप्त कर के तथा हठ करके ऐसे भी कथन करते हैं कि (णमोकार) शब्द शुद्ध है अर्थात् जिस के पूर्व णकार होय वही शुद्ध है अन्य सर्व अशुद्ध हैं परन्तु ये प्राकृत व्याकरण से असिद्ध हैं क्योंकि प्राकृत व्याकरण में ऐसे लिखा है यथा –

वादौ ।[प्रा० अ० ८ पा० १ सू० २२९ । असंयुक्तस्या दौ वर्तमानस्य णो वा भवति ॥ णरो नरो णई नई इति ॥

आचार्योंके ताईं नमस्कार हो,(नमो) (नम,)नमस्कार हो (उवज्झायाण) (उपाध्यायेभ्य') जो कि उप अधि उपसर्ग पूर्वक इङ् अध्ययने धातुसे छन्दन्त का घञ् प्रत्ययान्त हो कर बनता है अर्थात् उपाध्यायों के ताईं नमस्कार हो (नमो) (नम) नमस्कार हो (लोए सव्व साहूणं) (लोक सर्वसाधुभ्य,) जो लोकृदर्शने धातु से लोक शब्द और सृ गतौ धातु से सर्व तथा साध् संसिद्धौ धातुसे उण् प्रत्ययान्त हो कर साधु शब्द इन सबकी एकस्थता से (लोए सव्व साहूण) ऐसे पद सिद्ध होता है अर्थात् यावत् लोक में साधु हैं तिन को नमस्कार हो।

भावार्थ —इस महा मन्त्र में यह वर्णन है कि अनन्त गुण युक्त चतुर्घाति कर्मों के नष्ट कर्त्ता और जिनके द्वादश गुण प्रगट हुए हैं परम पूज्य ऐसे गुणगुणालङ्कृत श्री अरिहंत जी महा राजों को नमस्कार हो पुनः जिनके अशरीरीसिद्ध बुद्धाजराम रेत्यादि अनेक नाम सुप्रख्याति युक्त प्रसिद्ध हैं जिन के सर्व कर्म क्षय हो गये हैं अर्थात जो कर्म रूपिरजसे विमुक्त हो गये हैं और जिन के अष्ट गुण प्रादुर्भूत हुए हैं इत्यादि अनेक सुगुणों सहित श्री सिद्ध महाराजों को नमस्कार हो अपितु जो षट् त्रिंशति गुणों युक्तमर्यादा से क्रिया करने वाले जिन की ज्ञानमें गति अधिक है तथा जो सम्यक प्रकार से गच्छ (साधु समुदाय) की सारणा (रक्षा करना) वारणा (स्थिलाचार होते हुए को) सावधान करना) साधु मण्डल को हित शिक्षा देना तथा वस्त्र पात्रादि द्वारा भी मनियों को सहायता देनी वा परम्परा शुद्ध शास्त्रार्थ पठन कराना और जो दुर्बल अर्थात जंघाबलक्षीण रोगादि युक्त साधु हों उन की यथा योग्य सहायता करना इत्यादि अनेक गुणों से युक्त हैं और उक्त वार्ताओं के पूर्ण करने में सदैव कटिबद्ध हैं ऐसे श्रीआचार्यों को नमस्कार हो, तथा जो पंचविंशति गुणों से अलङ्कृत होरहे हैं अर्थात् जो एकादशाङ्ग तथा द्वादशोपाङ्ग को स्वयं पढते है औरोंको पढाते हैं तिन शास्त्रों के नाम यह हैं यथाः—

अथाङ्गसूत्राणि*।

(१) श्री आचाराङ्ग जी।
(२) श्री सूयगडाङ्ग जी।
(३) श्री ठाणाङ्ग जी।
(४) श्री समवायाङ्ग जी।
(५) श्री विवाह प्रज्ञप्ति जी।
(६) श्री ज्ञाताधर्मकथांग जी।
(७) श्री उपासकदशाङ्ग जी।
(८) श्री अंतगड जी।
(९) श्री अनुत्तरोववाई जी।
(१०) श्री प्रश्नव्याकरण जी।
(११) श्री विपाक जी।

अथोपाङ्गसूत्राणि।

(१) श्री उववाई जी।
(२) श्री रायपसेणी जी।
(३) श्री जीवाभिगमजी।
(४) श्री पन्नवना जी।
(५) श्री जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति जी।
(६) श्री चन्द्रप्रज्ञप्ति जी।
(७) श्री सूर्यप्रज्ञप्ति जी।
(८) श्री निरावलिका जी।
(९) श्री पुप्फिया जी।
(१०) श्री कप्पिया जी।
(११) श्री पुप्फचूलिका जी।
(१२) श्री वण्हिदशा जी।

अर्थात् जो पूर्वोक्त शास्त्रों का अभ्यास स्वयं करते हैं और औरों को यथा अवकाश या यथाऽवसर पठनाभ्यास करवाते हैं और जिस के द्वारा धर्म तथा विद्या की वृद्धि हो वही कार्य करके परिफुल्लित होते हैं ऐसे परम पण्डित महान् विद्वान् दीर्घदर्शी परोपकारी श्री उपाध्याय जी महाराज को नमस्कार हो, जो कि श्रुत विद्या की नावा से अनेक ही भव्य जीवों को संसार रूपी समुद्र से उत्तीर्ण करते हैं अन्यच्च नमस्कार हो सर्व साधुओं को जो लोक में सुगुणों से परिपूर्ण तथा विभूषित हैं सदा ही परोपकार करते हैं और ज्ञान के द्वारा स्वआत्मा वा अन्यात्माओं के कार्य सदैव काल सिद्ध करते हैं अपितु सप्तविंशति गुण युक्त हैं तिन मुनियों को पुनः पुनः नमस्कार हो ॥

---

*अङ्गसूत्र तो द्वादशाङ्ग हैं किन्तु वर्तमान काल की अपेक्षा एकादशाङ्ग लिखे हैं ॥

प्रियवरो ! इस महा मन्त्र का पाठ अथवा यह महा मन्त्र श्री भगवती अवश्यकादि सूत्रों (शास्त्रों) में विद्यमान है यदि कोई इसे देखने की अभिलाषा करे तो उस को योग्य है कि जैन शास्त्रों का अभ्यास करे क्योंकि सूत्रों के पठन से उसे स्वयमेव ही उपलब्ध हो जायगा ॥

॥ अथोक्त मन्त्र के धात्वादि ॥

प्रियसुज्जनों ! अब उक्त महा मन्त्र के धात्वादि को लगा कर आपके सम्मुख करता हू। जैसे कि —(नमस्) शब्द अव्यय है सो नमस् शब्द के सकार को'—

सजूरहस्सोऽनिष्पक स्त्रनसुध्वनसोरि' ॥

शा० व्या० अ० १ पा० १ सू० ७२॥

सजूष् अहन्नित्ये तयोरन्त्यस्य पदान्ते सकारस्य च रिरादेशो भवति क्वस्स्त्रन्सुध्वन्सु इत्येतान् वर्जयित्वानतिपि॥ इति सस्यरि इदित्॥

इस सूत्र से रिकार हो गया, पुन' इकार की इत्संज्ञा होने से तिस का लोप हुआ अतः पश्चात रेफ रहा। तब ऐसे रूप बना, जैसे (नम+र) पुन'—

र: पदान्ते विसर्जनीय' ॥ शा० अ०१ पा० १। सू०६७॥ पदान्ते रेफस्य स्थाने *विसर्जनीयादेशो भवति॥

---

*श्लोक —श्रृङ्गवद्वालवत्सस्य, कुमारीस्तनयुग्मवत्॥
नेत्रवत्कृष्णसर्पस्य, विसर्गोऽयमुइतिस्मृत ॥१॥

इस सूत्र से पदान्त के रेफ को विसर्जनीय का आदेश हुआ, तब (नमः) ऐसे रूप सिद्ध हुआ पुनः—

अतोरोविसर्गस्य॥प्रा०ऽया०अ०८पा०१सू०३०॥ सम्कृत लक्षणोत्पन्नस्य अत परस्य विसर्गस्य स्थानेडो इत्यादेशो भवति ॥

इस सूत्र से संस्कृत लक्षणोत्पन्न के अत् से परे विसर्जनीय के स्थान में अर्थात् विसर्ग को डो का आदेश हो गया, तब ऐसे रूप बना यथा—(नम+डो) पुनः —डकार की इत्संज्ञा हो जाने के कारण से तिस का लोप हो जाता है और साथ में अन्त्यस्वर का लोप भी होता है तब ऐसे प्रयोग हुआ, यथा (नम्+ओ) फिर—

(अमच्क शब्द रूप पर वर्णमाश्रयेत इति सन्निकर्ष) इस वचन से व्यञ्जन रूप मकार आकारके आश्रय हुआ तो ऐसे रूप बना(नमो) अर्थात् यह रूप ऐसे सिद्ध हुआ ॥

इसके अनन्तर (अरिहंताणं) इस की व्याख्या लिखते हैं यथा— अर्ह ऐसा धातु है तिस को—

सल्लडवत्स्यं लृटोवाऽनितौ ॥ श्रा०अ०१ पा० ४ सू०७८॥अनिलटा भविष्यति लटश्च अनड्वत् शतृवा भवति तद यदानशनेतौ ॥ अशा विनौ ॥

इस सूत्र से वर्तमान लट् में अर्ह धातु को शतृप्रत्यय हो गया तब (अर्ह+शतृ) ऐसे रूप बन गया पुनः शकार ऋकारकी इत्संज्ञा होने से तिस का लोप हुआ, तब (अर्हत) ऐसे रूप बना, फिर—

उच्चार्हति। प्रा० ऽपा० अ०८पा०२सू० १११ ॥ अर्हन् शब्दे संयुक्तस्यान्त्य व्यञ्जनात् पूर्व उत् अदि तौ च भवतः।

इस सूत्र में यह कथन है कि अर्हत् शब्द में संयुक्त के अन्त्य व्यञ्जन से पूर्व अर्थात् विश्लेष करके फिर हकार से पूर्व इकार उकार अकार यह तीन हो जाते हैं तब ऐसे रूप बने यथा —

(अरहन्त) (अरुहन्त) (अरअहत्) पुन (अरिहत्) (अरुहत) (अरहत्) अपितु ऐसेही *ढुंढिका वृति में भी उल्लेख है पुनः—

शत्रानश ॥ प्रा० अ० ८ पा० ३ सू० १८१ ।
शतृ आनश् इत्येतयो प्रत्येकन्तमाण इत्येता वा देशौ भवत ॥

इस सूत्र में यह विधान है कि शतृप्रत्यय को न्त और माण द्वि आदेश होते हैं । किन्तु षष्ठी का किया हुआ कार्य्य अत के अलोपरि होता है अर्थात् अर्हत् शब्द के तकार को (न्त) ऐसे आदेश हो गया तब (अरिहन्त + अरुहन्त + अरहन्त) ऐसे बन गये † तो —

ङ ञ ण नो व्यञ्जने । प्रा० अ० ८ पा० १ सू० २५ ॥ ङ ञ ण न इत्येतेषास्थाने व्यञ्जने परे अनुस्वारा भवति ॥

---

*ढुंढिका—उत ११ अ अर्हतउ१ अर्हत अर्हतीति अर्हाेय् अधृ प्रत्ययः लोकात् अर्ह इतिजाते र्ह इति विश्लेषे अनेन प्रथमेह पूर्वे उ द्वितीये ह पूर्वे अ तृतीये ह पूर्वे इ सर्वत्र लोकात् ११ अत सेर्डो अरुहो । अरहो अरिहो । अर्हतीमि अर्हत श्रुगविपाई शतृशामुस्तुस्ये शब्द सु प्रत्यय अतल्लोकात अर्हतन्नमाणो अत स्थानेच व्यञ्जनादहंतेऽत लोकात् अनेन र्ह इति विश्लेषे प्रथम ह पूर्व उः द्वितीय अ तृतीये इ लोका ११ अरुहन्तो अरहन्ता अरिहन्तो। ॥ १११ ॥

†द्वितीय विधि इस प्रकार से भी है यथा (अरिहत् + अरुहत् + अरहत्) ऐसे प्रयोग स्थित हैं फिरः—

इस सूत्र से नकारको अनुस्वारादेश हो गया तब (अरिहंत+अरुहंत+अरहंत) ऐसे प्रयोग बने, पुनः नमस्कारार्थ में—

शक्तार्थवषण्नमः स्वस्तिस्वाहा स्वधाहिते ॥ शा० अ० १ पा० ३ सू० १४२ । शक्तार्थैर्वषडादिभिश्च युक्तेऽप्रधानार्थेवर्तमानाच्चतुर्थी नित्यभवति ॥ चैत्रायशक्तोमैत्रः । मल्लायप्रभवतिमल्ल. । पुरुषायाल युवति । अग्नयेवषट् । अर्हतेनमः धर्मायस्वस्ति । इन्द्रायस्वाहा । गुरुभ्यस्स्वधा । सर्वस्मैहित ॥

उगिदचोऽनधादे ॥ शा० अ० १ पा० २ सू० ११४ । उगितोऽञ्च तेश्चनम् भवति शावनप्सुटि परे नै धादे ॥

इस सूत्रमें यह विधान है कि जिसका उक (उ+क) इत्संज्ञा वाला हो तिसको और अञ्चधातु को भी नम् हो जाता है शि और नपुंसुट् परे होते हुए अपितु धपादियों को नहीं होता तिस कारण से अत्र भी आदित होने से नम् हुआ (मित्या दमथाद्यम पमा भवति) इस कथन से ऐसे रूप सिद्ध हुए यथा (अरिहमनत् + अरुहमनत् + अरहमनत्) फिर (अमाचित) इस कथन से मकार मकार को इत्संज्ञा हुई पुनः दाय रूप (अरिहनत्) इत्यादि ऐसे रहे फिर—

व्यञ्जनाददन्ते ॥ शा० अ० ८ पा० ४ सू० २३९ ॥ व्यञ्जनान्ताद्धातोरन्ते अकारो भवति ।

इस सूत्र में यह विधान है कि व्यञ्जनान्त (हलन्त) धातु के अन्त में अकार का आगम होता है तब इस अकार स्वरान्त हुआ तो इस प्रकार रूप बने यथा—(अरिहन्त, अरुहन्त, अरहन्त) इति ॥

शाकटायन व्याकरण के इस सूत्रसे चतुर्थी विभक्ति के बहुवचन भ्यस् प्रत्ययकीअप्राप्ति थी, किन्तु —

चतुर्थ्या षष्टी ॥ प्रा० व्या० अ०८ पा० ३ सू० १३१ ॥ चतुर्थ्या स्थाने षष्टी भवति ।

प्राकृत व्याकरण के इस सूत्र से चतुर्थी विभक्ति के स्थानोपरिषष्टी विभक्ति हुई, तब (अरिहन्त) शब्द को षष्टी का बहुवचन आम् प्रत्यय होने से (अरिहत+आम्) ऐसे रूप होगया पुनः —

जस् शस्ङसित्तोदोद्वामिदीर्घ ॥ प्रा० अ०८ पा० ३ सू०११ ॥एषु अतो दीर्घो भवति ॥

इस सूत्र से अरिहत शब्द के तकार का अत् दीर्घ होजाने से (अरिहंता+आम्) ऐसे बन गया तदनन्तर —

टा आमोर्णं ॥ प्रा० अ० ८ पा० ३ सू० ६ ॥ अत परस्य टाइत्येतस्य षष्टी बहुवचनस्य च आमोणो भवति ॥

इस सूत्र से आम् प्रत्यय को णकारादेश होगया तो (अरिहंता +ण) ऐसे रूप बन गया, तत्पश्चात् —

क्त्वा स्यादेर णस्वोर्वा ॥ प्रा० अ० ८ पा० १ सू० २७ ॥क्त्वाया स्यादीनांच योणसूतयोरनुस्वारो ऽन्तोवाभवति ॥

इस सूत्र से णकार को विकल्प से अनुस्वार भी हो जाता है तब एक पक्ष में (नमोअरिहंताणं+नमोअरुहंताणं+नमोअरहंताणं) और द्वितीय पक्ष में (नमोअरिहंताण+नमोअरुहंताण+नमोअरहंताण) इत्यादि तीन प्रयोग इस प्रकार सिद्ध हुए ॥

टा आमोर्ण ॥ प्रा० व्या० अ०८ पा०३ सू०६।

इस सूत्र से पूर्ववत् आम् प्रत्यय को णकारादेश हुआ यथा(सिद्ध +ण) फिर —

जस् शस् ङसित्तो दोद्दामि दीर्घ. ॥ प्रा० व्या० अ० ८ पा० ३ सू०१२ ॥

इस से सूत्र प्राग्वत् सिद्ध शब्द का अकार दीर्घ हो गया जैसे (सिद्धा+ण)पश्चात्।

क्त्वास्यादेरणस्वोर्वा ॥ प्रा०अ०८ पा०१ सू०२७ ॥

इस सूत्र से णकार को विकल्प से अनुस्वार हो गया तब परि पक्करूप (नमो सिद्धाणं) वा (णमो सिद्धाण) ऐसे सिद्ध हुए।

अपितु "सिद्ध"शब्द विधौ शास्त्रे माङ्गल्ये च

इस धातुसे भी बन जाता है किन्तु अत्र विधिविधान पूर्ववत् ही है।

॥ इति सिद्धाणं पदकी साधनिका ॥



॥ अथ आचार्य शब्द की साधनिका ॥



नमस् शब्द पूर्ववत् ही सिद्ध होता है अतः आचार्य शब्द आङ् उपसर्ग मर्यादा युक्त अर्थ में जो व्यवहृत है सो पूर्व होने से चुर गति भक्षण्योः धातु को कृदन्त का ण्यण् प्रत्यय करने से आचार्य शब्द बनता है जैसे कि (आ+चर्) ऐसे रूप है पुनः—

ण्यण् ॥ शा० व्या० अ० ४ पा० ३ सू० ६ ॥

धातोर्ण्यण् प्रत्ययो भवति ॥

इस सूत्र से आङ् पूर्वक चर् धातु को ण्यण् प्रत्यय हो गया, फिर यथाविधि अर्थात् णकार णकार की इत्संज्ञा होने से लिंग का लोप

है अपितु ङ्कार की जो इत्संज्ञा होती है तब (आङ्+चर्+ण्यम्) ऐसे रूप से (आ+चर्+य) ऐसे रूप शेष रहा फिर :—

ञ्णितस्यस्याः ॥ शा० अ० ४ पा० १ सू० २३० ॥
धातो रुपान्त्यस्यात् आद्भवति । ञितिणिति च प्रत्ययेपरे ॥

इस सूत्र में यह विधान है कि जिस प्रत्यय का ञ्ण् लोप हो गया होतो धातु के उपान्त (अन्त्यस्यसमीपमुपान्त्यम्) अत् को आत हो जावे, इस रीत्यनुसार उपान्त चकार के अत् को आत् हुआ जैसे.—

(आ+चार्+य) पुन (अनच्कशब्दरूपपर वर्ण माश्रयेत्) ॥

इस वाक्य से ऐसे शब्द बन गया, यथा (आचार्य) फिर —

नमस् शब्द पूर्व करने से तथा नमस्कारार्थ में चतुर्थी विभक्ति का बहु वचनान्त होने से ऐसे सिद्ध हुआ, (नम आचार्येभ्यः) इति ॥

अब प्राकृत में इस के रूप बनाकर दिखाते हैं उपसर्ग, धातु, प्रत्यय यह तो सर्व प्राग्वत ही है अपितु आचार्य शब्द के चकार के वास्ते प्राकृत के व्याकरण में यह सूत्र प्रति पादन किया गया है जैसे कि —

आचार्येचोच्च ॥ प्रा० अ० ८ पा० १ सू० ७३ ॥
आचार्य शब्दे चस्यात् इत्वम् अत्वचभवति ॥

अर्थात आचार्य शब्द के चकार को अत् इत् यह दो आदेश होते हैं पुनः—

ऐसे रूप हुए, यथा, (आचर्य) आचिर्य) पश्चात्—

क–ग–च–ज–त–द–प–य–वा प्रायोलुक् ॥
प्रा० अ० ८ पा० १ सू० १७७ ॥

स्वरात्परेषामनादि भूतानामसंयुक्तानांकग च जतदपयवानां प्रायोलुग् भवति ॥

इस सूत्र से (भाचर्य) ऐसे रूप के भी चकार का लोप होगया, जैसे (भामर्य) (भादर्य) फिर ,—

अवर्णोयश्रुति ॥ प्रा० व्या० अ० ८ पा० १ सू० १८० ॥ कगचजेत्यादिनालुकिसति, शेष. अवर्ण अवर्णात्परोलघुप्रयत्नतरयकार श्रुति र्भवति ॥

इस सूत्र में यह पणन है कि जिसके क ग च त द प य इत्यादि लोप हो गए हों। शेष जो भकार रहजाये, मो उस के स्थान पर यकार भी हो जाता है सो इसी नियम से इस स्थान में शाप भकार के स्थानोपरि यकारादेश होगया, तब ऐसे रूप हुए (भामर्य) (भायर्य) (भादर्य) पुनः—

स्याद्भव्यचैत्यचौर्यसमेषुयात् ॥ प्रा० अ०८ पा० २ सू० १०७॥ स्यादादिपुचौर्य शब्देन समेषु-संयुक्तस्य यात् पूर्वइद् भवति ॥

इस सूत्र में यह कथन है कि स्याद भव्य चैत्य चौर्य इत्यादि शब्दों में द्विव शब्द से पूर्व इत् हो जाता है इसी स्याय म रेफ यकार के योग अर्थात् द्वित्व होने से रेफ का इत होने से ऐसे रूप हुआ, (भायरिय) पुनः षष्ठी का बहु वचन भाम् प्रत्यय हुआ, तो (भाय रिय+भाम्) ऐसे रूप हुआ पुनःभाम् को (टा आमोर्णः) इस सूत्र से भाम् को णकार होजाने से (भायरिय+ण) हुआ, पश्चात् ,—

(जस् शस् ङसित्तोदोद्दामि दीर्घः)

इस सूत्र से पूर्व स्वर दीर्घ होगया, यथा (भायरिया+ण) पुनः—

(कृस्माद्यादेर्णस्योर्वा) इस सूत्र से णकार का विकल्प से अनु-स्वार हो गया, फिर परिपक्वरूप ऐसे हुए (नमो आयरियाणं) वा (नमो आ यरियाणं) वा (नमो आइरियाण)तथा (अर्णोवयश्रुति) इस सूत्र से यकार को वकार भी हो जाता है तब (आयरिव) ऐसा रूप बना, किन्तु —

अतोरिआररिज्जरीअ ॥ प्रा० अ० ८ पा० २ सू० ६७॥ आश्चर्येअकारात्परस्यर्यस्यरिअ अर रिज्ज रीअइत्येते आदेशा भवन्ति ॥

इस सूत्र को अत्र प्राप्ति नहीं है और शेष कार्य प्राग्वत् ही है ॥

॥ इति आयरियाण शब्द की साधनिका ॥

॥ अथ उपाध्याय शब्दकी साधनिका ॥

उप और अधि उपसर्ग पूर्वक इङ् अध्ययने धातु को घञ् प्रत्य प्राप्त हो कर उपाध्याय शब्द बनता है जैसे कि (उप+अधि+इङ्) ऐसे स्थित है पुनः—

इङः । शा० अ० ४ पा०४ सू० ४॥इङोऽकर्तरि घञ् भवति । अध्याय । उपाध्याय ।

इस सूत्र से इङ् अध्ययने धातु को घञ् प्रत्यय की प्राप्ति हुई तब (उप+अधि+इङ्+घञ्) ऐसे बना पश्चात् ङ् घ् ञ् इन की इत्संज्ञा होने से लोप हुआ और शेषः—(उप+अधि+इ+अ) ऐसे हो रहा, अपितु अकार की इत्संज्ञा होने से—

आरैचोऽक्ष्वादे । शा०अ०२पा०३सू०८४॥ प्रकृतेरचा मादेश्च आ आर् ऐच् इत्येते आदेशा भवन्ति ञिति णिति च तद्धिते प्रत्यये परे ॥

इङ् धातु को इकार को इस सूत्र से ऐकार हो गया पुनः—
(उप+अधि+ऐ+अ) ऐसे प्रयोग हुआ फिरः—

एचोऽच्य यवायाव् ॥ शा० अ०१ पा०१ सू०६९।
एचः स्थानेयथा सङ्ख्य अय् अव् आय् आव् इत्येते आदेशा भवन्ति अचि परे ॥

इस सूत्र से ऐकार के स्थान में आय् होने से (उप+अधि+आय्+अ) ऐसा प्रयोग बना तो (अव्यक्त शब्द रूप पर पण आश्रयेत) इस वचनानुसार (उप+अधि+आय) ऐसे रूप बन गया फिरः—

दीर्घ ॥ शा०अ०१ पा०१ सू०७७॥
अक स्थानेपरेणाचा सहितस्य तदासन्नो दीर्घो नित्य भवत्यचि परे । यथा दण्ड अग्र दण्डाग्र ॥

इस सूत्र से उप उपसर्ग के पकारका अकार और अधि उपसर्ग के आदि का अकार उभय मिलकर दीर्घ होने से (उपाधि+आय) ऐसे रूप बना पुनः—

अस्वे । शा० अ० १ पा०१ सू० ३ ॥
इकः स्थाने यणादेशा भवति अस्वेऽचि परे स स अथवा इकः परोयञ् भवति अस्वेऽचि परे । दध्यत्र ॥

इस सूत्र से इकार को यकार हो गया तब (उपाध् य् आय) ऐसे रूप बना पुनः—

मनर्थ्कशब्देति वचन से(उपाध्याय) रूपहुआ, पुन' नमस्कारार्थ में

(शक्तार्थ वषण्नम स्वस्ति स्वाहा स्वधा हितै)

शाकटायन व्याकरण के इस सूत्र से चतुर्थी विभक्ति का बहुवचन भ्यस् प्रत्यय होने से तथा नमस् अव्यय पूर्व होनेसे (नमः उपाध्या ये भ्यः) ऐसा परिपक्व रूप संस्कृत भाषा में तो सिद्ध होगया किन्तु अब प्राकृत में किस प्रकार रूप बनता है सो देखिये। यथा (उपाध्याय) ऐसे स्थित है तब:—

ह्रस्व संयोगे ॥ प्रा० अ० ८ पा० १ सू० ८४ ॥
दीर्घस्य यथादर्शनं संयोगे परे ह्रस्वो भवति ॥

इस सूत्र से (उपा) का पकार ह्रस्व होगया तो (उपध्याय) ऐसे रूप बना पुनः—

साध्वस ध्य ह्यांझ ॥ प्रा० अ० ८ पा० २ सू० २६॥
साध्वसेसयुक्तस्यध्यह्ययोश्चझोभवति ॥

इस सूत्र से (ध्य) मात्र को झ हुआ फिर (उपझाय) ऐसा,प्रयोग बना तो :—

पोव' ॥ प्रा० अ० ८ पा० १ सू० २३१ ॥ स्वरात्प-
रस्यासयुक्तस्यानादेः पस्यप्रायोवो भवति ॥

इस सूत्र से पकार को वकार होजाने से (उवझाय) ऐसे रूप बना, पुनः—

अनादौशेषादशयोर्द्वित्वम् ॥ प्रा०अ०८पा०२सू०८९
पदस्यानादोवर्तमानस्यशेषस्यादेशस्यचद्वित्वभवति

इस सूत्र में यह वर्णन है कि आदि भिन्न आदेश रूप झकार के दो रूप होजाते हैं जैसे कि :—(उवज्झाय) पश्चात्।

द्वितीयतुर्य्ययोरुपरिपूर्वे ॥ प्रा०अ०८ पा०२ सू०९० ।
द्वितीयतुर्ययोर्द्वित्वप्रसङ्गेउपरिपूर्वोभवत द्वितीयस्यो परिप्रथमश्चतुर्थस्योपरितृतीय इत्यर्थ ॥

इस सूत्र में यह कथन है कि चतुर्थ वर्ण जो द्वित्व किया है सो पूर्ववत्तुर्य के स्थान में तृतीय वर्ण होजाता है। जैसे (उवज्झाय) पुनः आम् प्रत्यय करने से (उवज्झाय+आम) फिर (टाआमोर्ण) इस सूत्र से आम् को णकार होगया सो (उवज्झाय+ण) ऐसे बना तदनन्तर (क्त्वास्यादेर्णस्वोर्वा) इस सूत्र से अनुस्वार होगया। यथा (उवज्झाय+णं) पुनः—(जस्शस्ङसित्तोदोद्वामिदीर्घः) इस सूत्र से यकार दीर्घ होगया। तब (नमोउवज्झायाणं) (नमोउवज्झायाण) ऐसे दो रूप सिद्ध हुए अर्थात् जो श्रुत विद्या के पढ़ाने वाले हैं तिन को नमस्कार हो॥

॥ इति उवज्झायाणं पद की साधनिका ॥



अथ नमोलोए सव्वसाहूणं शब्दकी साधनिका



नमस् अव्यय पूर्ववत् हो है अपितु "लोक" शब्द के धातु को :—

णवुत्रजिल्हादिभ्यश्च । श्रा० अ०४ पा० ३ सू० ८५।
धानालिहादिभ्यश्च णवुल् अच प्रत्ययाः भवन्ति णचायिनो॥

इस सूत्र से अच् प्रत्यय करके लोक शब्द बना, फिर सप्तमतय (लोके) ऐसा पाठ हुआ। फिर :—

कगचतदयवांप्रायो लुक् ॥ प्रा० अ० ८ पा० १ सू० १७७॥स्वरात्परेषामनादिभूतानाम संयुक्तानां कगचतदपयवाना प्रायोलुग् भवति॥

इस सूत्र से ककार का लोप होने से शेष पकार अर्थात् (छोप) ऐसे प्रयोग हुआ, फिर *सव शब्द को:—

सर्वत्रलवरामवन्द्रे ॥ प्रा० अ० ८ पा० २ सू० ७९ ॥ वन्द्र शब्दादन्यत्र लवरासर्वत्र संयुक्तस्योर्ध्वमधश्चस्थितानांलुग् भवति ॥

इस सूत्र से संयुक्त रेफ का लोप होगया जैसे (सव) भवितु (अनादौ शेषादेशयोर्द्वित्वम्) इस सूत्र स शेष वकार द्वित्व हो गया यथा:—(सव्व) अर्थात् (नमोलोएसव्व) रूप बना फिर (साध-साधससिद्धौ) इस साध् धातु को:—

कृवापाजिमिस्वदिसाध्यशूभ्यउण्॥ शा० उणादि० पा० १ सू० १ ॥डुकृञ् करणे।वा गतिगन्धनयो ।पा पाने। जि अभिभवे। डुमिञ् प्रक्षेपणे । ष्वद् आस्वादने । साधससिद्धौ । अशूव्याप्तौ । एभ्योऽष्टधातुभ्यउण् प्रत्यय स्यात् ॥ साध्नोतिपरकार्यमितिसाधुः सज्जन॥

---

*सर्वनिघृष्वरिष्वलष्व शिवपद्मप्रह्वेष्वाअतन्त्रे ॥ उणादिसूत्र । पा० १ सू० १५३ ॥ सर्वादयोवन प्रत्ययान्तानिपात्यतेऽतन्त्रेऽकर्तरि स्रुगतौ। सर्वं, निरवशषम्॥

इस सूत्र से उण् प्रत्ययान्त होने से साधु शब्द सिद्ध हुआ, फिर।—

खघथधभाम् ॥ प्रा० अ० ८ पा०१सू०१८७॥
स्वरात्परेषामसंयुक्ता नामनादि भूताना खघथ
धभ इत्येतेषावर्णाना प्रायोहोभवति ॥

इस सूत्र से धकार को हकार होगया, तब (नमोलोपसव्वसाहु)
ऐसे रूप बना, पुनः—

षष्ठी का बहु वचन आम् प्रत्यय हुआ, तिस को (टा आमोर्णः)
इस सूत्र से णकार का आदेश हुआ, यथा, (नमोलोपसव्वसाहु
+ण) फिर —

(जस् शस् ङसित्तोदोद्वामिदीर्घ) इस सूत्र से पूर्व स्वर
दीर्घ होगया, यथा ,—

(नमोलोपसव्वसाहू+ण) पून —

(क्त्वास्यादेर्णस्वार्वा) इस सूत्र से णकार को विकल्प से अनु
स्वार हो गया, तब एक तथा शुद्ध प्रयोग (नमोलोपसव्वसाहूणं) वा
(नमोलोपसव्वसाहूण) ऐसे सिद्ध हुआ, अपितु अर्थ प्राग्वत् ही है॥

॥ इति नमोलोपसव्वसाहूणं पद की सापनिका ॥

* यथोक्तरूपसमुच्चयः *

१-(नमो अरिहताण)	(णमो अरिहताणं)
(नमो अरिहताण)	(णमो अरिहंताण
(नमो अरुहताण)	(णमो अरुहताण
(नमो अरुहताण)	(णमो अरुहताण)
(नमो अरहंताण)	(णमो अरहंताण)
(नमो अरहंताण)	(णमो अरहंताण)
२-(नमो सिद्धाण)	(णमो सिद्धाण)
(नमो सिद्धाण)	(णमो सिद्धाण)
३-(नमो आयरियाण)	(णमो आयरियाण)
(नमो आयरियाण)	(णमो आयरियाण)
(नमो आयरिआण)	(णमो आयरिआणं)
(नमो आयरिआण)	(णमो आयरिआण)
(नमो आइरियाण)	(णमो आइरियाण)
(नमो आइरियाण)	(णमो आइरियाण)
४-(नमो उवज्झायाण)	(णमो उवज्झायाणं)
(नमो उवज्झायाण)	(णमो उवज्झायाण)
५-(नमो लोएसव्वसाहूण)	(णमोलोएसव्वसाहूण)
(नमो लोएसव्वसाहूण)	(णमो लोएसव्वसाहूण)

अथ चूलिका पञ्च पदों का माहात्म्य रूप गाथा।

एसोपंच नमोक्कारो, सव्वपावपणासणो।
मंगलाणंच सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं॥

अर्थान्वय —(एसो) (एषः) यह (पंच) (पञ्च) पञ्च (नमोक्कारो) (नमस्कारः) नमस्कार रूप पद (सव्व) (सर्व) सारे (पाव) (पाप) पापों के (पणासणो) (प्रणाशनः) प्रणाशन हार हैं अर्थात् पापों के नष्ट करने वाले हैं (मंगलाण) (मंगलानां) मंगलीक हैं (च) (च) और अपितु आव्यय है (सव्वेसिं) (सर्वेषां) सर्वस्थाना परि पढे हुए (पढमं) (प्रथमं) प्रथम अर्थात् दध्यादि पदार्थों स पूर्व (हवइ)(भवति) होता है (मंगलं) (मङ्गलम्) मङ्गलीक॥

भावार्थ —इस महा मन्त्र के पाञ्च ही नमस्कार रूप पद सर्व पापों के नाश करने वाले हैं तथा मंगलीक और सर्व स्थानोपरि पठन किये हुए दध्यादि पदार्थों से भी पहिले मंगलीक हैं क्योंकि अनंत गुण युक्त महा मन्त्र है॥

॥ अथ ओम् शब्द निर्णयः ॥

प्रियसुज्ञ पुरुषो—पाञ्च पदों का ही बीज रूप ओम शब्द बनता है जैसे कि—

॥ गाथा ॥

अरिहंता असरीरा, आयरियउवज्झाया।
मुणिणोपञ्चक्खर निप्पण्णो ओंकारो पचपरमेट्ठी॥

अर्थान्वय,— (अरिहंता) (अर्हन्तः) अर्हन् शब्द का आद्यवर्ण अकार है (असरीरा) (अशरीराः) अशरीरी शब्द जोकि सिद्ध पद का ही वाचक है तिसका भी आद्य वर्ण अकार है पुन (आयरिया) (आचार्या) आचार्य पद का आद्यवर्ण आकार है तथा (उवज्झाया) (उपाध्यायाः) उपाध्याय पद का आद्यवर्ण उकार है और (मुणिणो) (मुनिनः) मुनि पद का आद्यवर्ण स्वर रहित अर्थात व्यञ्जन रूप मकार है इन पाञ्चों को एकत्र करना (पञ्चक्खर) (पञ्चाक्षर) पांचा क्षर जैसे कि (अ + अ + आ + उ + म्) (निप्पन्नो) (निष्पन्नः) निष्पन्न (ओंकारा) (ओंकारः) ओम् शब्द है सो (पच परमेट्ठी) (पच परमेष्ठि) पचपरमेष्ठि का ही वाचक है ॥

भावार्थ—पांच पदों में से पूर्व के दो पदों के आद्य वर्ण अकार हैं तृतीय पद का आद्यवर्ण आकार है तथा चतुर्थ पद का आद्य वर्ण उकार है और पञ्चवें पद का आद्यवर्ण मकार है अब पांचों की एकत्रता से ,—

(अ + अ + आ + उ + म्) ऐसा प्रयोग स्थित है पुनः—

दीर्घः ॥ शा० अ० १ पा० १ सू० ७७ ॥
अक स्थाने परेणाचा संहितस्य तदासन्नो दीर्घो नित्य भवत्यचि परे ॥

इस सूत्र से अकार दीर्घ होगया, तब (आ + आ + उ + म्) ऐसे रूप हुआ, तो —

ओमाङिपर ॥ शा० अ० १ पा० १ सू० ८६ ॥
अवर्णस्य स्थाने साचः परोऽजादेशो भवतिओं शब्दे आङादेशेचपरे ।

इस सूत्र से आचार्य पद का आकार पर रूप होगया तब *शेष (आ+उ+म्) ऐसे रहा ॥

इकोचेङ् ॥ शा० अ०१ पा०१ सू०८२ ॥
अवर्णस्यस्थानेपरेणाचासहितस्यक्रमेण एङ् अर्
इत्यादेशाभवन्ति इकिपरे ॥

इस सूत्र से अवर्ण उवर्ण एकत्र होने पर ओकार होगया। तब ऐसे रूप हुआ।

जैसे कि —(ओ+म्) पुनः —

मम्मोहलिनो ॥ शा० अ० १ पा०१ सू० १११ ॥
ममागमस्यपदान्तस्यच मकारस्य परस्त्रोऽनुनासिकोऽनुस्वारश्चपर्य्यायेण भवति हलिपरे।

इस सूत्र से मकार जो स्वर रहित व्यञ्जन रूप है तिस का अनुस्वार होगया। तब (ओं) ऐसे रूप बन गया। पुनः—

ओम प्रारम्भे ॥ शा० अ०२ पा०३ सू०२१ ॥
प्रारम्भेवर्तमानस्याम प्लुतोवाभवति ॥
ओ३म् ऋषभपवित्रम्। ओ३म् श्री शान्ति
रस्तु सुखमस्तु। प्रारम्भेति किम् ओम् इत्यादि ॥

इस सूत्र में यह विधान है कि प्रारम्भ(आदि)में वर्तमान ओम्

---

* किसी २ व्याकरण का ऐसा भी लेख है यथा—

श्लोक—अदीर्घोदीर्घतांयाति, नास्तिदीर्घस्यदीर्घता।
पूर्वदीर्घस्वरंदृष्ट्वा,परलोपोविधीयते ॥१॥

विकल्प से प्लुत हो जाता है ॥

उक्त सूत्रों से ओम् शब्द पञ्च पद का ही वाचक सिद्ध हुआ ॥

इस लिये विद्वानों ने ओम् शब्द को पांच पदों का बीज माना है।

॥ इति शुभम ॥

॥ इति महामन्त्र तत्त्व प्रकाशः समाप्तः ॥

श्लोक –जानुंप्रदक्षिणीकृत्य, नद्रतनविलम्बितम् ।
अङ्गलिस्फोटनकुर्यात् सामात्रेतिप्रकीर्तिता ॥१॥
चटकोरौत्येकमात्र द्विमात्रंरौतिवायस ।
त्रिमात्रतुशिखीरौति ह्रस्वदीर्घप्लतक्रमात्॥ २॥
॥ इति ॥

श्री वीतरागाय नमः।

ॐ प्रार्थना ॐ

प्रियभ्रातृ गणो यह अमूल्य अहिंसामय, सत्यपदार्थों का उपदेष्टा श्री जैनमत आपके हाथ में किस प्रकार से आया है। जिस के धारण करने से आप जगत में सदाचारी कहलाते हैं। जिस के धारण करने से आप परोपकारियों के गणनीय बनते हैं। जिस के धारण करने से आप मोक्षमार्ग के साधक होते हैं। जिस के प्रभाव से आप सम्यक् ज्ञान सम्यक् दर्शन, सम्यक् चारित्र के अधिकारी होना चाहते हैं॥

मित्रो यह धर्म केवल अर्हन् देवों आदिक पूर्वाचार्यों की ही कृपा से आप के हाथ में आया है। देखिये आपके पूर्वाचार्यों ने अनेक प्रकार के कष्ट सहन करके इस पवित्र जैनधर्म की रक्षा करी और सहस्रों नूतन ग्रंथ रचे अनेक विकट वादों से विजय करी और मत की ध्वजा फहराई। अनेक उपाधियें परमत वादों से प्राप्त करके भी, सदैव स्पष्ट जिनमार्ग के तत्वों को सर्वोत्तम बतलाया। इस पवित्र जैनमत के वास्ते अपनी आयु अर्पण करी॥

उदाहरण भगवान् श्री वर्धमान स्वामी के ९८० वर्ष के पश्चात श्री देवर्द्धिगणी क्षमा श्रमण जी महाराज ने [illegible] श्री चतुर् संघ की सम्मति की जिस में ज्ञान के व्यवच्छेद होने के अनेक कारण बतलाये। फिर भी संघ की आज्ञानुकूल सूत्र पुस्तकारूढ़ किये जिनकी कृपा से आज दिन हम लोग जैन सिद्धान्त को जानते हैं। फिर जिन आचार्यों ने अपनी विद्या द्वारा अपनी बुद्धि द्वारा अनेक वादियों को जय कर के, अनेक ग्रन्थ रचे। [illegible] परम पवित्र श्वेताम्बर पंथ (मार्ग) स्थापन किया॥

जिन के महान् परिश्रमका फल आप लोगों की दृष्टि गोचर होरहा है। अपि तु शोक से कहना पड़ता है जिन आचार्यों ने आप लोगों पर इतना परोपकार किया किन्तु आप लोगों ने उन के अमूल्य परिश्रम का फल कुछ भी न दिया शोक !!

भला क्या आप लोगों ने उनके नाम की कोई संस्था स्थापन करी ? क्या आप लोगोंने उन आचार्यों के रचित पुस्तकों को पढ़ा ? या उनका पुनरुद्धार किया ? कुछ भी नहीं तो क्या यह शोक का स्थान नहीं है ? अवश्य है ॥

भला आप दूर की बात आगे दीजिये। किन्तु समीप काल को लीजिये। उन्हीं आचार्यों में से एक महान् आचार्य परम जैनोद्योत करने वाले जिन्हों ने अनेक ही कष्ट सहन करके इस पवित्र जैन धर्म का स्थान २ प्रचार किया फिर पाखंड मत को पराजय किया पंजाब देश में जिन्हों ने विशेष करके जैनधर्म का प्रचार किया। सत्य मार्ग भव्य जनों को युक्ति पूर्वक बतलाया। ऐसे महान् गुणों के धारक श्रीमद् आचार्य अमर सिंह जी महाराज हुए हैं। तो भला आप लोगों ने उनका नाम चिरस्थायि बनाने का क्या प्रयत्न किया शोक।' ऐसे परोपकारी महात्मा के नाम से कोई भी संस्था न हो ॥

देखिये विशाल हृदय के धारक महान् आचार्य की दया इस हुण्डावसर्प्पिणी काल के प्रभाव से मिथ्यात्वकी सदैवकाल ही वृद्धि है इसी कारण से कितनेक अज्ञात जन यह कहने लग गये थे कि गृहस्थों लोगों को सूत्र पठन करने नहीं कल्पते हैं क्योंकि उन लोगों के मन में यह विचार था कि यदि गृहस्थ लोग भी सूत्र पठने लग जावेंगे तो उस का फल हमारे लिये शुभ न होगा इसलिये यह लोग सूत्र के पठन का गृहस्थ लोगों को निषेध करते थे ॥

अपितु उक्त विशाल हृदय महर्षिने सूत्रों द्वारा यह सिद्ध किया कि अर्हन् ज्ञान के चार ही संघ अधिकारी हैं चार ही संघ योग्यता धारण करते हुए सूत्रों को पढ़ सकते हैं। सो देखिये उक्त महर्षि ने कैसो

दया आप लोगों पर की है। कि आप लोग शास्त्र भली प्रकार से पढ़ सके हैं। फिर और भी देखिये उक्त महात्मा के परिश्रम का फल इस पञ्जाब देशमें जिनके सत्योपदेश के द्वारा अनुमान १०० साधु ६० या ७० आर्यों के अनुमान स्थान २ में जैन धर्म का प्रचार कर रहे हैं और भव्य जीवों का अर्हन् के उपदेश के द्वारा सम्यक्त्व लाभ दिया रहे हैं सो यह सर्व श्रीमन् आचार्य अमरसिंह जी महाराज के परिश्रम का ही फल है जिस प्रकार उन महात्माओं ने हमारे ऊपर दया भाव किया है ॥

इसी प्रकार हम भी उक्त महात्मा के नामो परि कोई पवित्र धर्म कार्य करें जिस के करने से हम अऋणीन होवें सो वह कृत्य यह है स्थान २ उन के नाम से धर्म मर्यादें स्थापन करें जैसे कि अमर जैन पाठशाला अमर स्कूल, अमर हाईस्कूल अमर कोलिज, अमर पुस्तकालय, अमर औषधालय, अमर जीव दया फंड, अमर विधवा श्रम, अमर अनाथाश्रम, अमर गुरुकुल अमर प्रचारक आश्रम, अमर धर्मशाला, अमर न्यायशाला अमर विद्याशाला, अमर सर्व हितैषी सस्था इत्यादि आश्रम उक्त महर्षि के नामों परि स्थापन किये जावें तो हम ऋण से उत्तीर्ण हो सक्ते हैं ॥

इसीलिये हमारी सर्व भ्रातृगणों से प्रार्थना है कि वे शीघ्र ही यथा आवश्यकता उक्तसंस्था स्थापन करें और हमारी इच्छा इस समय अमर जैन हाईस्कूल स्थापन करने की है सो हमें पूर्ण प्रकार से हमारे भ्रातृगण सहायता दें जिस करके हम शीघ्र ही उक्त संस्था से लाभ लेवें क्योंकि यह संस्था आप लोगों को अपने परमार्थ के नाम को अमर करने वाली और श्री भगवत् प्रणीत धर्म के प्रचार करने वाली है।

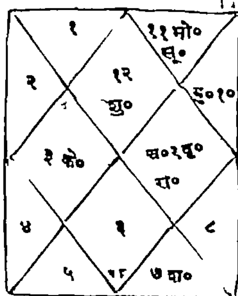
भवदीयानुचरो

श्रीमान् बाबू परमानंद जैन, बी०ए०एल०एल०बी०
वकील कसूर, वा लाला फत्तुराम(प्रियदर्शी) जैन लुधियाना

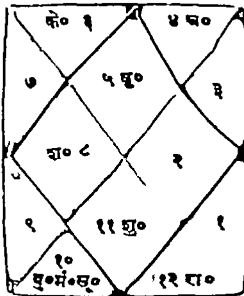
अथ शुद्धि पत्रम् ।

प्रियसुज्ञ जनों ! पृष्ट ८ ३४ ८६ की जन्मकुण्डलियों में किञ्चित् मात्र अशुद्धियें रह गई हैं इस कारण से निम्न लिखित कुण्डलियों को अनुक्रमता से शुद्ध ज्ञात करना चाहिये । यथा :—

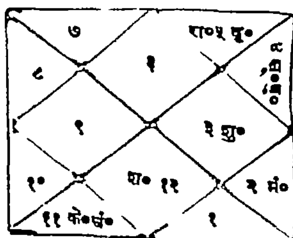
पृष्ट ८ की



पृष्ट ३४ की



पृष्ट ८६ की



पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
१	१३	परमा	करें
२	९	पृथर्वे	गृहपर्वे
३	१४	माकश	प्रकाश
३	११	दयेताम्बर	दवेताम्बर
३	१७	जनमतोपर	जैनमतऊपर
५	१७	भीभी	भी
६	४	है	हैं
६	६	हैं	है
६	७	शुशोभित	सुशोभित
६	१२	कुस्म	कुसुम
७	२१	गनिक	गणक
७,	२१	मपण	मपम
१०	१५	पितकी	घितकी
१०	१३	मृत	मुत
११	१८	जिनक	जिनके
११	२०	क्षत्री	क्षत्रिय
१२	१	अप	आप
१२	१२	पञ्चम्	पञ्चम
१३	१८	सपक	स्पक
१४	१	परमारक	प्रमारक
१४	१२	रूप	रूपी
१५	१४	मिथ्यात	मिथ्यात्व
१५	१४	दे वीये	देजिये
१५	१९	परचा	चर्चा
१५	२१	परचा	चर्चा

पृष्ट	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
११	२	वक्रिय	वक्रियं
११	४	सूत्रालसार	सूत्रानुसार
१७	२	ह	है
१७	४	लगे	सवोदर
१८	११	फिरोजपुर	फीरोजपुर
१८	१३	चौमास	चौमास है
२०	१७	पज्य	पूज्य
२०	२३	अमिष्ट चरण को	अमिष्टाचरण को
२१	१४	विर्कमाब्द	विक्रमाब्द
२१	२५	क	के
२२	१२	।क	कि
२४	१२	करकि	करि कि
२४	१९	सत्र	सूत्र
२६	२२	ज्ञाति के	०
२७	११	पञ्चम	पञ्चम
२८	२४	पश्चात् ॥	पश्चात्
२९	४	कष्वोरी	कचौरी
३०	१३	कशर	केशर
३०	२५	जैन समाचार	जैन समाचार
३६	२१	प्रकृत्य	प्रकृति
”	२२	जसे	जैसे
३६	२६	छद	छेद
३७	११	मिथ्यात	मिथ्यात्व
३७	२१	जीका	जीर्णो
३८	५	चातराहार	चतुराहार

पृष्ट	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
४०	१	कल्पित विनागुब के	कल्पित
४०	४	है	है
"	१२	मामापि	मथापि
"	११	मुग्रमर्दन	मुग्ममर्दन
४१	१०	मच्छेद	मच्छ हैं
४१	११	पपाप	पपाप
"	२१	जैन	जैनमत के
४४	२५	मनुकल	मनुकूल
४५	१	यद्मे	बढ़ने
"	५	मासिज्ञि	मासिज्ञ
"	१०	२	२२
"	२३	मदार	मकमर
४६	१०	सर्पियर्ण	सापियर्ण
४७	९	है	है
"	१३	उद्योतन	उद्योतन
"	१४	निदुप	,निदुप
"	१५	आस्पार्थ	अस्पार्थ।
"	१६	त्रिविपाम्नाय है	त्रिवीपाम्नाय है।
"	१७	सुनिमा	सुनीमा
४८	४	सापवो	साधुओं
४९	९	मापुत्र	सापुओं
५०	२१	ननमों	मों
"	२३	भानानामारिगन	भगवानामारि
५१	११	साधुओं	साधुओं
५२	२१	दिय	दिया

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
५१	२५	वृटेरय	वृटेराय
५७	७	तपगच्छ	तपागच्छ
”	१८	भोसवाल	भोसवाल
५८	१५	वटेराय	वृटेराय
”	१८	स	से
”	१९	सस	जैसे
५९	२	पूर्वोक	पूर्वोक्त।
”	२	कितमहा	कितमे ही
”	२३	साघू	साघु
”	२५	कहसक	कहसकते
६०	१३	पजन	पूजन
६०	२४	भगवम	भगवान्
६१	१	महिसा	महिंसा।
६१	२०	सर्भो	सर्भो
६१	२०	पर्ण	पूर्ण
६२	१०	पज्य	पूज्य
६३	१०	कपूर	कपर
६३	२१	हुं	हैं
६५	२	लस	लघ
६५	९	वद्यत	वमृत
६६	१	पों	को
६६	२१	को	को।
६७	२	भार	और
६७	१७	लिख्वते	लिखते
६७	२१	गमस्कार	नमस्कार

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
६८	९	पिरमपम्द्	गिरमवन्द्
६८	११	म	मे
६९	१५	पम्व	दृत्व
७०	३	रस्य	दृत्र
७०	५	पिदार	गिहार
७०	२४	छाड	छोड
७१	७	माह्या	माह्यों
७१	१२	उतार	बवर
७२	२१	लिप्तिय	लिप्तिये
७४	११	मतस्यानुक्त	मतस्यनुष्ठ
७५	९	लिपित	लिम्पित्
७६	२२	अट्टमल्ल	अट्टमल्ल
७७	३	पर्मापोत	पर्मोपोत
७८	३	उमा	जर्मो
७८	११	मन	औम
७८	१	सुपो	सुपो
७९	१४	रचपा	रचमा;
८०	३	ओता	बौथे
८०	८	ला	बो
८२	१७	मुप	मुझे
८२	१०	परोपरि	पर
८२	२५	पर्ल	पन्न
८३	२२	दर्थ	दूर्व
८४	१४	कोरो	कोरो
८५	१	पत्न	पाश

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
८६	८	११क	११के
८७	७	^	है
८८	१	लन;	लैन
८९	५	छिखिने	छिखने
८९	२३	आत्मराम	आत्मारास
९०	२१	आयहें	आयचे
९१	१२	के	'के'
९१	१९	होगया	होगये
९२	३	होवगा	होवेगा
९२	७	छिष्ट	छिष्टें
९२	७	जम	जैम
९४	१७	पश्चान	पश्चात
९५	१७	पर्मत्	पर्वत
९९	३	जिनक	जिनके
९९	९	लोगो	लोगों
९९	१६	षष्टम् अष्टम्	षष्टम अष्टम
१००	३	ह	है
१००	१३	श्रीवान्	श्रीमान्
१०१	२१	होवेगे	होवेंगे
१०२	५	ह	है
१०३	८	करमेंसे	करमेसे
१०४	४	को	की
१०४	५	मर्हन	मर्हन्
१०४	२६	सम	सन
१०५	२१	लग	लगे

पृष्ट	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
१०७	१२	थ	थे
,,	१५	ह	हैं
,,	२२	म	में
१०९	२४	कुचन्नवोले	कुचक्षवाले
१११	२१	नही	नहीं
११२	१	घटचाक्र	षट्चक्र
,,	२७	मार्याप	मार्यावि
११३	४	सम्मस्वानुमार	सम्मन्यनुसार
११३	४	१९५२	१९५१
,,	६	गमायमच्छेदिका	प्रर्याचिक्र
,,	२३	एसे	ऐसे
११४	११	प ँ पदा	पाँवदा
,,	२५	मतिपमा	मूर्तिपूजा
११५	२१	नहीं हे	नहीं हैं
११६	३	मोतीरम	मोतीराम
११६	२१	१९११	१९१२
११७	१४	मृति	मूर्ति
११८	४	मैं	में
,,	५	ए	ये
,,	१३	दोनों	दोनों
,,	१८	म	ह
११९	१९	क	के
१२०	१९	मूर्खो	मूर्तियों
१२१	२०	पजा	पूजा

पृष्ट	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
१२२	२	सत्र	सूत्र
,,	३	ओी	लोके
,,	१०	र्मी	मी
,,	१७	अर्थात	अर्थात्
,,	२०	चत्य	चैत्य
,,	२१	शाब्द	शाब्द
,,	२१	करणो	करनी
,,	२३	चत्य	चैत्य
,,	२३	चत्य	चैत्य
,,	२५	मूनि	मूर्ति
१२३	८	क	के
१२४	४	अनक	अनेक
१२५	३	१०३३	१०६३॥
,,	६	ॆणु	रेणु
१२६	२४	तृतीय	तृतीय
१२७	२४	कमियाआर	कमियाओर
१३०	१	सत्र	सूत्र
१३१	२७	पजा	पूजा
१३२	१२	हातावे	होता है
१३३	१९	आप	औप
१३५	८	शाटायन	शाकटायन
१३३	२३	पपह	पपह
१३७	२१	एसे	ऐसे
१३९	४	लोफ	लोके
१४०	११	मौर	मौर

पृष्ट	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
१४२	३	सम	सूम
१४३	१३	स०	सू०
१४३	१५	म्	म्
१४७	८	यत्	यत्
१४८	३	इससेसम	इससबमे
१५०	२१	दसे	'देसे
"	२२	पुण मामक्रो	पुण'
१५१	१	का	को
"	१	(मपर्णयप्रभृति)	(मयर्णयप्रभृति)
१५३	१८	दाजाम	दोजामें
१५५	५	धाम्र	धाम्र
"	६	सव	मव
१५५	१०	ऽपाइया	ओपाइयायो
१५६	१२	पुना	पुना
१५९	१३	मोर	और
१६०	१८	सम	सूम

